डाक-पंजीयन म.प्र./भोपाल/4-472/2024-26
पोस्टिंग दिनांक : प्रतिमाह दिनांक 2 से 3, पृष्ठ सं. 132
प्रकाशन दिनांक : 1 से 1 प्रतिमाह

आर.एन.आई क्र. : 38470/83
आई.एस.एस.एन. क्र. : 2456-7167

मूल्य 50/-

42 वाँ वर्ष

अप्रैल 2024

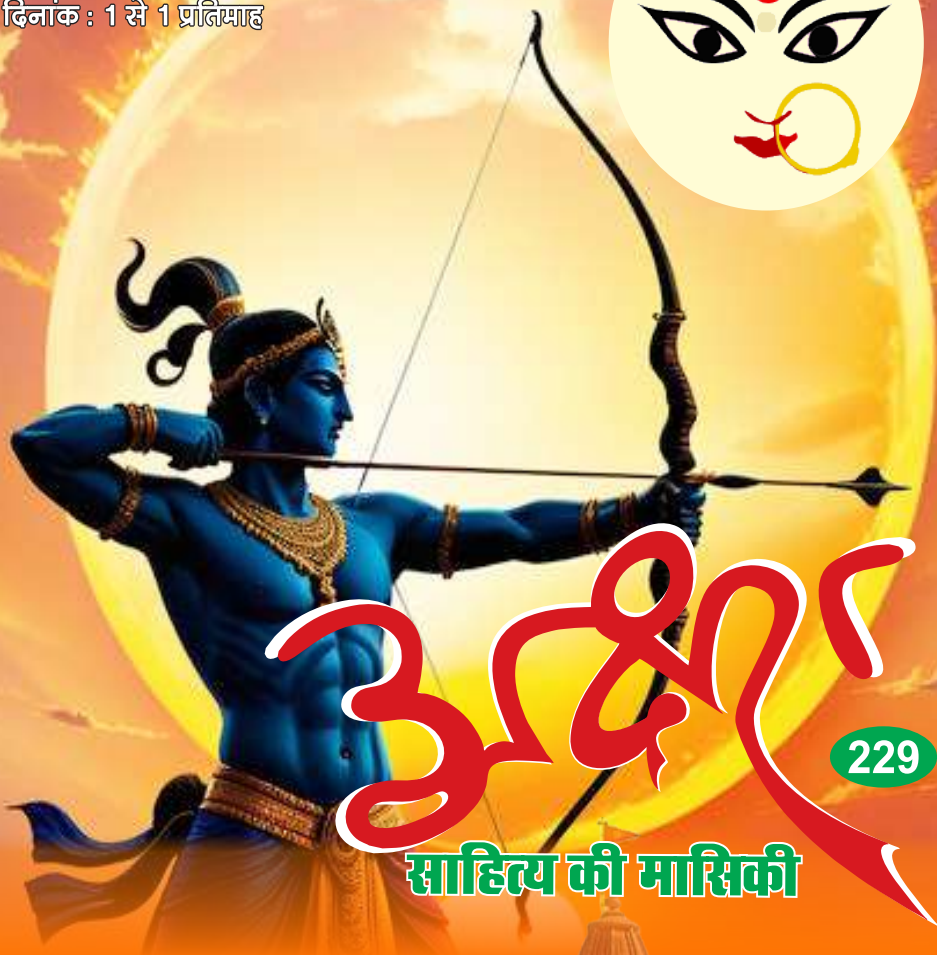

अक्षरा

229

साहित्य की मासिकी

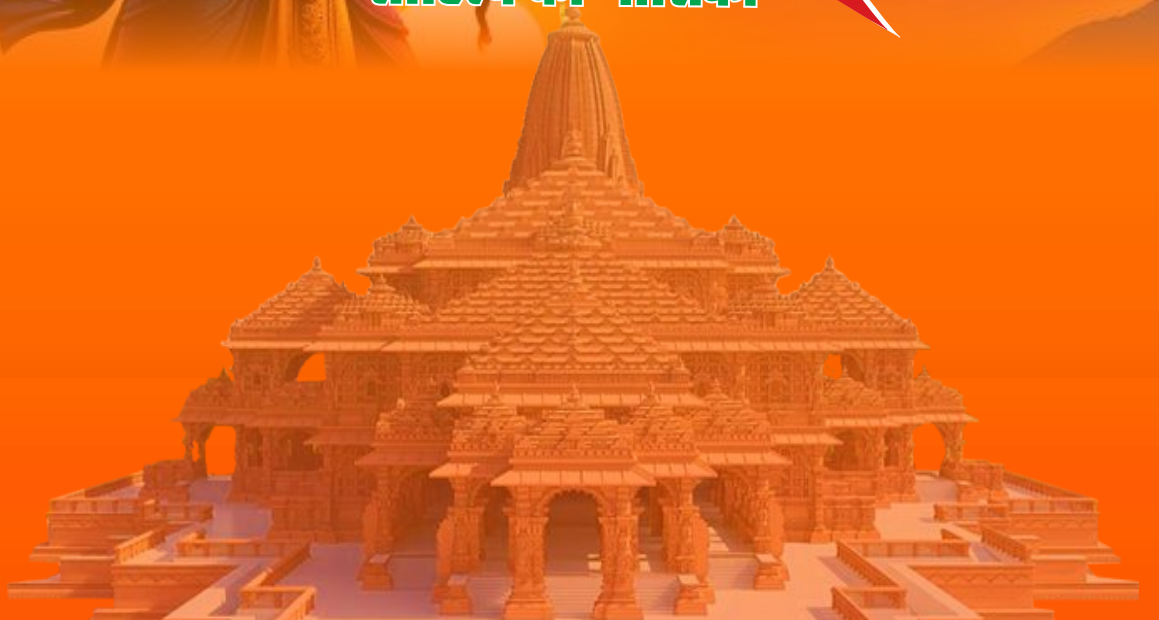

साधो सबद साधना कीजै
अजित वडनेरकर

अनुवाद
विभा खरे, संगीता जगताप

ललित निबंध
सुमन चौरे
नर्मदा प्रसाद सिसोदिया

कहानी
शुभदा मिश्र,
रजनी गुप्त

स्तंभ
प्रकाश मनु,
रामेश्वर मिश्र पंकज,
कुसुमलता केडिया

आलेख
रघुनंदन शर्मा, करुणाशंकर उपाध्याय, गंगा प्रसाद बरसैंया, सत्येन्द्र शर्मा, अंजनी कुमार झा, शकुन्तला कालरा, राजेश श्रीवास्तव, विवेक रंजन श्रीवास्तव, सुनील देवधर, संध्या सिलावट, प्रभु शंकर शुक्ल, राजरानी शर्मा

आत्मकथ्य
उषा सक्सेना

कविता
रंजना अरगड़े, मन मीत,
प्रेमचंद्र गुप्ता

अक्षरा
अंक-229
मूल्य 50/- रुपये

वरिष्ठ छायाकार
जगदीश कौशल

जयशंकर प्रसाद

जन्म : 30 जनवरी 1889
प्रयाण : 15 नवंबर 1937

श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी 1889 के दिन काशी के गोवर्धन सराय में हुआ था। उनके पितामह बाबू शिवरतन साहू और पिता बाबू देवी प्रसाद साहू दोनों दान देने और कलाकारों का सम्मान करने के लिए प्रसिद्ध थे। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। उन्होंने वेदपुराण, साहित्य शास्त्र के अलावा हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, पारसी भाषाओं का अत्यंत गंभीर अध्ययन किया था। आधुनिक हिंदी साहित्य में छायावाद के ब्रह्मा कहे जाने वाले श्री जयशंकर प्रसाद ने अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के माध्यम से संपूर्ण राष्ट्र को नई चेतना दी है। उनका साहित्य सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश से जुड़ा हुआ है। उन्होंने हिंदी काव्य में छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ी बोली के काव्य में कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई और वह काव्य की सिद्ध भाषा बन गई। हिंदी साहित्य में छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में श्री जयशंकर प्रसाद के अलावा महाप्राण श्री सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा और पंडित सुमित्रा नंदन पंत के नाम शामिल हैं।

प्रसाद जी का रचना संसार बहुत विस्तृत है। उन्होंने काव्य, उपन्यास, कहानी, नाटक, आलोचना, निबंध आदि विभिन्न विधाओं में लेखन किया। प्रसाद जी को 'कामायनी' के लिए मंगला प्रसाद पारितोषिक पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उन्होंने कुछ समय तक 'इंदू' मासिक पत्रिका का संपादन भी किया था। उन्होंने ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथानकों पर अनेक कलात्मक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी गिनती हिंदी के सर्वश्रेष्ठ नाटककारों में की जाती है। प्रसाद जी की प्रमुख रचनाओं का विवरण इस प्रकार है : झरना, आँसू, लहर, कामायनी, प्रेम पथिक (काव्य), स्कंदगुप्त, चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, जनमेजय का नाग यज्ञ राज्यश्री, अजात शत्रु, विशाख, एक घूँट, कामना, करुणालय, कल्याण परिणय, अग्निमित्र, प्रायश्चित (नाटक) छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी, इन्द्रजाल (कहानी संग्रह) तथा कंकाल, तितली, इरावती उपन्यास।

श्री जगदीश कौशल ने वर्ष 1963 में प्रसाद जी के परमप्रिय मित्र हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध कहानीकार संस्मरण लेखक श्री विनोद शंकर व्यास जी के फोटो एलबम से प्राप्त किया।

अक्षरा

229

यू.जी.सी. द्वारा मान्यता प्राप्त
42 वाँ वर्ष

मनोज श्रीवास्तव
प्रधान सम्पादक

संजय सक्सेना
प्रबंध सम्पादक

जया केतकी
सम्पादन सहयोग

सुधा बाथम
अक्षर-संयोजन

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 500 रुपए
दस वर्षीय सदस्यता शुल्क : 5000 रुपए
एक प्रति 50 रुपये
विदेशों के लिए : एक अंक : 10 डॉलर, वार्षिक : 120 डॉलर
चेक या ड्राफ्ट 'म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति- 'अक्षरा' के नाम देय
ऑनलाइन पेमेंट के लिये- इंडियन बैंक, हिन्दी भवन शाखा, भोपाल
Ac/ No. 50413818696, IFSC- IDIB000T610

सम्पर्क : म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल - 462002 (म.प्र.)
दूरभाष : 0755- 2660909, (लेखाविभाग-2661087)
ई-मेल - myakshara18@gmail.com
hindibhawan.2009@rediffmail.com
वेबसाइट - www.एमपीराष्ट्रभाषा.com

हमारा यह अंक राम पर केंद्रित किया गया है। राममंदिर के उद्घाटन के बाद से बहुत से लोगों का भ्रम–भंग हुआ। लोगों ने अपनी पूर्वधारणाओं, पूर्वाग्रहों और पूर्वनिष्ठाओं का पुनर्विश्लेषण किया। यह भी जैसे एक पुराने युग का प्रतीक–धनुष था जिसका टूटना आवश्यक था। सो मुझे धनुर्भंग का प्रसंग याद आ रहा है। केदारनाथ अग्रवाल की एक कविता है–

'जो धनुष/राम ने तोड़ा/वह पिनाक था परंपरा का/उसे राम ने तोड़ा/भूकन्या/सीता को ब्याहा/ब्याह सके थे/जिसे न कोई /उसे तोड़कर/राज-वंश के योद्धा /तब/उस युग में/परंपरा शिव की थी/इसलिए वह धनुष बन गई शिव की/जनक/प्रकृति से विद्रोही थे/परंपरा के /इसलिए प्रण ठाना/तोड़ो धनुष/ब्याह लो सीता/जो जमीन की सादर बेटी/यह सच बात/आज भी सच है :/तोड़ो/तोड़ो/परंपरा को/बनो राम/ब्याहो/ धरती की बेटी सीता।'

शिव का कठिन धनुष–भंग अपने आप में न केवल असाधारण घटना थी बल्कि राम के विश्वमंच पर आ पहुँचने का जयघोष भी थी। वह मंच ऐसा था जहाँ सृष्टि भर के सत्ताधारी इकट्ठा हुए थे और उनकी न केवल उपस्थिति में बल्कि उन की प्रतिद्वंद्विता में धनुष भंग के जरिए राम ने स्वयं को स्थापित भी किया था। कैसे आम नागरिक प्रसन्न हो गया था। तुलसी ने इसे यों लिखा भी–भूप के भाग की अधिकाई/टूटयौ धनुष, मनोरथ पूज्यौ, बिधि सब '**बात बनाई/ऐहि आनंद मगन पुरबासिन्ह देहदसा बिसराई।**' ध्यान दें कि तुलसी ने भी राम के मंच पर उदय की घोषणा इसी धनुर्भंग के प्रसंग में की है –

'उदित उदयगिरि मंच पर रघुबर बालपतंग/बिकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग।'

और धनुर्भंग के जरिए विश्व मंच पर राम के अवतरण की घोषणा कितने भव्य तरीके से होती है–

'भरे भुवन घोर कठोर रव रबि बाजि तजि मारगु चले/चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरुम कलमले/सुर असुर मुनि कर कान दीन्हें सकल बिकल बिचारहीं कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं।'

कि '**घोर कठोर शब्द से (सब) लोक भर गये, सूर्य के घोड़े मार्ग छोड़कर चलने लगे। दिग्गज चिंघाड़ने लगे, धरती डोलने लगी, शेष वाराह और कच्छप कलमला उठे। देवता राक्षस** और **मुनि कानों पर हाथ रखकर सब व्याकुल होकर विचारने लगे। सब धनुर्भंग पर राम की जय बोलने लगे।**'

और फिर यही ध्वनि जैसे पूरे विश्व में सांगीतिकता का संचार कर देती है। तुलसी ने इस विश्व संगीत का बड़ा सुंदर दृश्य रचा है–

'बाजे विश्व-संगीत / देवबधू नाचहिं करि गाना/झांझि नभ मृदंग गहरा है हनाई/भेरि ढोल दुंदुभी सुहाई/बाजहिं बहु बाजने संहार राजाह तहँ जुबतिन्ह मंगल गाए।'

वह शौर्य जो मांगलिक संगीत के वैश्विक संचार में फलित हो। इसलिए राम का उदय जिस मंच पर हुआ है वह बाकी सारे मंचों से कहीं अधिक विशाल और सुंदर है। तुलसी ने इसका संकेत भी किया–

'सब मंचन्ह तें मंचु एक सुंदर बिसद-बिसाल
मुनि समेत दोउ बंधु तहँ बैठारे महिपाल।।'

लेकिन शिव धनुष के पीछे जो बात थी, वह नारी के प्रतिबल को ढूँढ़ने की बात थी। '**हर कोदंड कठिन जेहि भंजा**' का संपूर्ण प्रसंग स्त्री को जीतने का प्रसंग नहीं है। वह प्रसंग स्त्री के योग्य वर को ढूँढ़ने का प्रसंग है। वह स्त्री को शक्ति के रूप में देखने वाली दुर्गा सप्तशती के उसी सिद्धान्त का उद्घोष है–

'यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्त्ता भविष्यति।'

जो मेरा प्रतिबल होगा, वही मेरा पति होगा। राजा जनक ने बचपन में सीता को अपनी बहनों के साथ खेलते–खेलते देखा था। खेल–खेल में ही सीता ने सहज रूप से शिव धनुष एक जगह से उठाकर दूसरी जगह रख दिया था। जनक ने तभी समझ लिया था कि सीता कोई साधारण व्यक्तित्व नहीं हैं। तभी उन्होंने सोच लिया था कि सीता का जोड़ कैसे ढूँढ़ेंगे। बालकांड के 67 वें सर्ग में जब जनक ने मंत्रियों को चंदन और मालाओं से सुशोभित वह दिव्य धनुष लाने को कहा तो वह धनुष, जो आठ पहियों वाले लोहे के बहुत बड़े संदूक में रखा गया था,

मोटे ताजे 5000 महामनस्वी वीरों द्वारा किसी तरह ठेलकर वहाँ लाया जा सका था। इसे ही सीता द्वारा खेल-खेल में उठाकर यहाँ से वहाँ रख देना उनकी असाधारणता का परिचय था। इसलिए सीता वीर्यशुल्का हुई और उनकी अन्य बहनें नहीं। बालकाण्ड के 66वें सर्ग में पता चलता है कि 'निमि के ज्येष्ठ पुत्र राजा देवरात के नाम से विख्यात थे। उन्हीं महात्मा के हाथ में यह धनुष धरोहर के रूप में दिया गया था। कहते हैं –
पूर्वकाल में दक्षयज्ञ विध्वंस के समय परम पराक्रमी उठाकर यज्ञ-विध्वंस के पश्चात् देवताओं से जब कही कि इससे मैं तुम सब लोगों के परम पूजनीय श्रेष्ठ अंग मस्तक को काट डालूँगा, तब यह सुनकर उदास हुए संपूर्ण देवता स्तुति के द्वारा देवाधिदेव महादेव को प्रसन्न करने लगे। अंत में उन पर प्रसन्न हुए भगवान शिव ने उन सब महामनस्वी देवताओं को यह धनुष अर्पण कर दिया। वही यह धनुष रत्न था जो जनक के पूर्वज महाराज देवरात के पास धरोहर के रूप में रखा गया था।' इसी तरह 75 वें सर्ग से पता चलता है कि यह वही धनुष था जिससे त्रिपुर का नाश हुआ था। आनंद रामायण, बिरहोर राम-कथा, भावार्थ रामायण यह बताती हैं कि सीता ने धनुष उठाकर उस जगह को लीपा था तब जनक ने यह प्रण किया कि जो इसे तोड़ेगा उसी से सीता का विवाह होगा। उसी घटना से जनक ने सीता को लक्ष्मी जाना।

सत्योपाख्यान (उत्तरार्द्ध अ. 2) तथा बृहत्कोशलखंड (अ. 6) के अनुसार शिव ने स्वप्न में जनक को दर्शन देकर कहा था कि धनुर्भंग करने वाला ही सीता के साथ विवाह करे। पद्मपुराण (पातालखंड अ. 112) के मुताबिक जनक इस सोच में पड़े हुए थे कि सीता का विवाह राम से कैसे तय हो। वे शिव-पार्वती से प्रार्थना करते हैं। तब भगवान शिव उन्हें अजगव धनुष देकर कहते हैं कि यह सिर्फ राम के द्वारा ही तोड़ा जा सकेगा। काश्मीरी रामायण से पता चलता है कि शिव ने इस शर्त पर एक धनुष जनक को दिया था कि इसे चढ़ा सकने वाला ही सीता से विवाह कर सकेगा। कृत्तिवास रामायण का वर्णन कुछ यों है कि शिव से ब्रह्मा ऐसी युक्ति सोचने का कहते हैं कि सीता राम विवाह करें। तब शिव परशुराम को अपना धनुष इस आज्ञा के साथ देते हैं कि वे उसे जनक के घर रख दें और जनक को बता दें कि सीता का विवाह उसी के साथ हो जो इस धनुष को चढ़ा सके। इस धनुष ने सिद्ध किया कि सीता का पति कौन हो सकता है।

सीता का प्रतिबल कौन हो सकता है? क्योंकि स्वयं भगवान शिव की इच्छा सीता और राम के विवाह की थी। शिव की पूजा का ही एक प्रकल्प राम-सीता के साहचर्य में बाधा न बनने का है। लेकिन रावण इस प्रकल्प के उलटे चलता है। तब शिव उसके साथ क्यों होंगे और रावण जब उसे हासिल करना चाहता है, जिसके वह योग्य नहीं है और जिसे वह डिजर्व नहीं करता तो शिवता का ही घात होगा। राजशेखर की बाल रामायण में सीता स्वयंवर के वक्त रावण भी मौजूद किंतु धनुष परीक्षा में सम्मिलित नहीं होता। प्रसन्न राघव के अनुसार रावण तथा बाणासुर दोनों धनुष चढ़ाने में विफल हो जाते हैं।
राम-लिंगामृत के अनुसार तो धनुष
उठाने का प्रयास करने में रावण से धनुष उलट जाता है
और वह उसके नीचे दबकर छटपटाने लगता है। तब
विश्वामित्र राम को रावण के प्राण बचाने की आज्ञा देते हैं।

तोरवे रामायण और आनंद रामायण में भी ऐसा ही किस्सा आता है। वाल्मीकि रामायण में नहीं है किन्तु वहाँ यह अवश्य कहा गया है-

'तब सभी राजा मिलकर मिथिला में आए और पूछने लगे कि राजकुमारी सीता को प्राप्त करने के लिए कौन-सा पराक्रम निश्चित किया गया है। मैंने पराक्रम की जिज्ञासा करने वाले उन राजाओं के सामने यह शिवजी का धनुष रख दिया, परंतु वे लोग इसे उठाने या हिलाने में भी समर्थ न हो सके।'

(66वाँ सर्ग, बालकांड) इसे समस्त देवता, असुर, राक्षस, गन्धर्व,बड़े-बड़े यक्ष, किन्नर और महानाग भी नहीं चढ़ा सके हैं। **(67 वाँ सर्ग, बालकांड)**। तुलसी स्वयंवर के वक्त बंदी-वचन कहलाते हैं-**रावनु बानु महाभट भारे/देखि सरासन गवँहि सिधारे'**, कि बड़े भारी योद्धा रावण और बाणासुर भी इस धनुष को देखकर (चुपके-से) चलते बने। उसे उठाना तो दूर रहा, छूने तक की हिम्मत न हुई)। इसलिए तुलसी के हनुमान रावण को यदि यह समझाइश देते हैं कि-**'तेहि समेत नृप दल मद गंजा'**-कि शिव धनुष को तोड़ने के साथ ही राजाओं के समूह का गर्व चूर्ण कर दिया, तो ठीक ही कहते हैं।

रावण के सामने 'बल' का यह एक तुलनात्मक आख्यान हनुमान जब रखते हैं तो हमें ध्यान आता है कि बालकांड में शिव–धनुष की चर्चा के प्रसंग में सबसे पहले इसी बल की बात कही गई है –**'नृप भुजबलु बिधु सिवधनु राहू/ गरुअ कठोर बिदित सब काहू।'**

कि राजाओं की भुजाओं का बल चन्द्रमा है और शिवजी का धनुष राहु है, वह भारी है, कठोर है, यह सभी को विदित है। उस प्रसंग में 'कोदंडु' शब्द भी आया है–**'सोइ पुरारि कोदंडु कठोरा।'**

शिव की पुरारि के रूप में स्मृति कर तुलसी ने इस धनुष से त्रिपुर के नाश होने की ओर जो संकेत किया है, उसी का उपयोग करने के लिए 'हर कोदंड कठिन' कहकर हनुमान रावण के राज्य के अंत की ओर भी इशारा कर लेते हैं। 'बल' का यह आख्यान तुलसी ने सीता स्वयंवर में खूब गाया है–

'सुनि पन सकल भूप अभिलाषे/ भटमानी अतिसय मन माखे
तमकि ताकि तकि सिवधनु धरहीं/उठइ न कोटि भांति बलु करहीं।'

लेकिन बल नहीं चलता।
बल्कि तुलसी यह कहते हैं–

'तमकि धरहिं धनु
मूढ़ नृप उठइ न चलहिं लजाइ/मनहुँ पाइ भट बाहुबलु
अधिकु अधिकु गरुआइ।'

कि वे मूर्ख राजा तमककर धनुष को पकड़ते हैं, परन्तु जब नहीं उठता तो लजाकर वे चले जाते हैं, मानो वीरों की भुजाओं का बल पाकर वह धनुष अधिकाधिक भारी होता जाता है। तुलसी यहाँ तक बताते हैं कि–

'भूप सहस दस एकहि बारा/लगे
उठावन टरइ न टारा।' जनकपुर के दूत भी यही कहते
हैं– **संभु सरासन काहुँ न टारा/हारे सकल बीर बरिआरा/**
तीनि लोक मुँह जे भटमानी/सभ कै सकति संभु धनु भानी। (1/292)
लेकिन बात सिर्फ बल की नहीं, प्रतिबल की है। इसलिए लक्ष्मण का यह कहना कि
'तौरों छत्रक दंड जिमि तब प्रताप बल नाथ' राम के ही
बल को आदरांजलि है। किन्तु प्रतिबल इससे भी अधिक है। तुलसी इस प्रसंग में उसे स्पष्ट भी करते हैं –

'जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू/सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।'

और तब फिर बल का वही रूपक फलित होता है –

'राम बाहुबल सिंधु अपारू/
चहत पारू नहिं कोठ कड़हारू।'

राम के बाहुबल के इस अपार समुद्र को तुलसी अपने इस प्रसंग के परिणामी सोरठे में फिर प्रतिबल के साथ ही धनुर्भंग का यह प्रसंग एक और मेटाफर रचता है। वह है छोटे दिखने वाले को हल्के में न लेने का। जब सीता की माता पर राम के बाल–व्यक्तित्व पर संदेह करती हैं कि 'बाल मराल कि मंदिर लेही।' कि हंस के बच्चे भी कहीं मंदराचल पहाड़ उठा सकते हैं तो सुंदरकांड में बार–बार लघु और अति लघु रूप धरते हनुमान का औचित्य सिद्ध होता है–

'बोली चतुर सखी मृदु बानी/तेजवंत लघु गनिअ न रानी/ कहैं कुंभज कहँ सिंधु अपारा/सोषेउ सुजसु सकल संसारा/रबि मंडल देखत लघु लागा/ उदयँ तासु तिभुवन तम भागा/मंत्र परम लघु जासु बस बिधि हरि हर सुर सर्ब/ महामत्त गजराज कहुँ बस कर अंकुस गर्ब।'

संस्कृत के 'तेजसां हि न वय: समीक्ष्यते' को यहाँ बदला गया है। तुलसी जानबूझकर 'वय' की जगह 'लघुता' के रूपक में इसका परिवर्तन–परिवर्द्धन 'तेजवंत लघु गनिअ न रानी' कहकर करते हैं और यह संसार के सभी छोटे आदमियों की ओर से जवाब हो जाता है। रावण भी हनुमान को छोटा समझने की भूल करता है, राम के प्रतिरोध की भी अवगणना करता है; इसलिए हनुमान उसे धनुष का वही प्रसंग याद दिला देते हैं जिससे बल का असल मतलब समझ में आए। असल बल क्या होता है, यह पता चले। शिव–धनुष बाल–सुलभ सहृदयता और निर्दोषिता पर निछावर है, इसलिए वह बाल–सीता के द्वारा इधर से उधर हो जाएगा और 'बाल पतंग' या 'बाल मराल' के द्वारा भी भंजित हो जाएगा। लेकिन वह इन दुनियादारों के हाथों खंडित नहीं होगा। इसका अर्थ यह भी है कि यह धनुष 6.5 फीट लंबा वैसा भौतिक धनुष मात्र नहीं है जैसा धनुर्वेद बताता है–या यदि है भी तो भी वह संचालित किसी दूसरी तरह की मनोगतिकी से होता है। वह उनसे नहीं प्रभावित होता जिनके बारे में जनक रोष में आकर बताते हैं–**'दीप दीप के भूपति नाना/आए सुनि हम जो पनु ठाना/देव दनुज धरि मनुज सरीरा/बिपुल बीर आए रनधीरा।'** वह तो उन्हीं के हाथ बिकाता है जिनके पास सीता जैसा निश्छल हृदय हो।

रावण जिसे तुम बल से नही जीत पाया उसे छल से हर लाता है। 'हर–कोदंड' की बात नहीं है। वह शिवता को छोड़कर 'हर ने' का अपावन कर्म करता है। राम को तो देखकर ही राजागण हृदय हार जाते हैं–'**प्रभुहि देखि सब नृप हिर्दे हारे/जनु राकेस उदय भएँ तारे।**' और उधर यह रावण है–हरने वाला। चोर। वह अपनी कुशलता का गर्व करे तो करे। बल का गर्व करने चला। बल होता तो स्वयंवर में सिद्ध किया होता। लेकिन वहाँ न कर यहाँ एक अकेली स्त्री का कपट से अपहरण रावण के बल के संबंध में आश्वस्त नहीं करता। रावण का वह भौतिक बाहुबल जिसके आधार पर उसने कौतुक में ही शिव के आवास कैलास पर्वत को उठा लिया था–

कौतुकहीं कैलास पुनि लीन्हेसि जाइ उठाइ/मनहुँ तौलि निज बाहुबल चला बहुत सुख पाइ–उसी शिव के धनुष के आगे नहीं टिक सका क्योंकि शिव के उस धनुष को बल की नहीं, प्रतिबल की आवश्यकता थी। वह भुजबल जिससे उसने दुनिया को वश में कर लिया–

भुजबल बिस्व वस्य करि राखेसि कोउ न सुतंत्र–

वह भुजबल यहाँ काम न आया। यहाँ तो बाल–बल ही काम करता है।

धनुष को उठाने के इस प्रसंग ने ही संभवत: किंग आर्थर के उस प्रसंग को प्रेरित किया होगा जब उसने शिला में से तलवार निकाल ली जबकि अन्य सामंत, राजा और योद्धा उसे हिला भी न पाए थे। उस समय के जादूगर मेलिन ने एक शिला में, जादू से अभिमंत्रित करके, एक तलवार को कीलित कर दिया था। उस सिंहासन के लिए लालायित बड़े–बड़े बलशाली योद्धाओं से वह तलवार नहीं उठती। पर आर्थर ने इसे उतनी ही आसानी से निकाल लिया जितनी आसानी से सीता ने शिव धनुष उठा लिया था। शिव के धनुष का नाम अजगव था तो आर्थर के धनुष का नाम एक्सकेबिटर था। शिव धनुष उठाने में असमर्थ होकर राजा लोग जिस तरह निराश होकर लौटते थे, उसी तरह इसे उठाने में भी वे नाकाम रहते थे। जिस तरह से शिव धनुष के पास रावण और बाणासुर फटक नहीं सके थे, स्पेनिश पौराणिकी में टाइजोना नामक एक तलवार है जो अयोग्य विरोधियों (unworthy opponents) को डरा देती है।

इसलिए यदि '**त्रिभुवन जय समेत बैदेही/बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही**' जनक–भट कहते हैं, तो यह समझना उचित नहीं होगा कि सीता बिना विचार किए वरण कर रही थीं।

विचार की तो उनकी यह हालत है कि–'**मनहीं मन मनाव अकुलानी/होहु प्रसन्न महेस भवानी**' से लेकर '**तौ भगवानु सकल उर बासी/करिहि मोहि रघुबर की दासी के दासी**' तक सब सोच लेती हैं। उनकी मनोगतिकी सीधे शिव धनुष से संबोधित होती है– '**अब मोहि संभुचाप गति तोरी**' और वे उसे यह आदेश भी दे देती हैं–'**निज जड़ता लोगन्ह पर डारी/ होहि हरुअ रघुपतिहि निहारी।**' इसलिए 'बिनहिं बिचार' से संभ्रमित होकर स्वयंवर को विचारहीनता का अनुष्ठान न समझ लीजिएगा। यह विचार की सांद्रता और सघनता का अनुष्ठान है। इस पूरे प्रसंग में राम और सीता के बीच मन ही मन हो रही बातचीत को देखिए और सीता के मन की अति सक्रियता को देखिए। वह सीता के व्यक्तिगत मन की ही बात नहीं है, पुरवासियों की भी माँग है–'तौ सिवधनु मृनाल की नाई/तोरहुँ राम गनेस गोसाईं।'

इसलिए राम नृप–दल–मद खंडित करते हैं, वे मात्र धनुष खंडित नहीं करते। रावण का मद सबसे पहले चूर हुआ। हालाँकि तुलसी और वाल्मीकि दोनों ने सीता स्वयंवर के वक्त बालकांड में रावण को नाम लेकर मौजूद नहीं दिखाया है। परंतु लंका कांड में मंदोदरी यह बोलती है और 'बल' के संदर्भ में ही बोलती है–

'**जनक सभा अगनित भूपाला/ रहे तुम्हउ बल अतुल बिसाला**
भंजि धनुष जानकी बिआही/तब संग्राम जितेहु किन ताही।'

तो वह रावण की उपस्थिति की ओर ही इंगित करती है। कुछ लोगों का कहना है कि रावण के गुरु शिव का धनुष होने से रावण ने उसको खंडित करना उचित नहीं समझा। श्री हनुमन्नाटक में रावण का पुरोहित जनक को रावण का संदेश सुनाता है कि जानकी हमें दे दो। जनक धनुष को चढ़ाने का कहते हैं। रावण कहता है– '**गुरोः शम्भोधूनुर्नो चेच्चूर्णतां नयति क्षणात**' कि उसके गुरु का न होता तो इसे पल भर में चूर कर डालता। तब जनक सही ही व्यंग्य करते हैं–'**शंभोरावासमचलमुत्क्षेसु भुजकौतुकी/माहेश्वरं धनुः क्रष्टुमर्हते दशकन्धर**'–कि शंभु के पर्वत (कैलास) को भुजाओं के खेल में उठाने को समर्थ हो। तब धनुष उठाने में क्या? यह स्पष्ट

है कि रावण शिव-धनुष को उठाने योग्य स्वयं को नहीं पाता। 'नृप-दल' का जो शब्द सुंदरकांड में है, धनुर्भंग के प्रसंग में उसे ही 'राजसमाजु' कहा गया है-

'सीय स्वयंवर भूप अनेका/समिटे सुभट एक तें एका/संभु सरासन काहु न टारा/हारे सकल बीर बरिआरा/ तीन लोक मुँह जे भटमानी/सभ कै सकति संभु धनु भानी/सके उठाइ सरासुर मेरू/सोउ हियँ हारि गयउ करि फेरू/जेहि कौतुक सिवसैल उठावा/सोउ तेहि सभा पराभठ पावा/तहाँ राम रघुबंस मनि सुनिउ महा महिपाल/भंजेउ चापु प्रयास बिनु जिमि गज पंकज नाल।'

अन्यत्र भी यह कहा गया-

'घोर कठोर पुरारि सरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु/जो दसकंठ दियो बावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु/ भूमिपाल भ्राजत न चलत सो ज्यों बिरंचि को आंकु / धनु तोरें सोइ बरै जानकी राव होइ कि रांकू' (गीतावली, 89)

तो अन्य राजाओं के साथ-साथ शिवशैल उठाने वाले रावण का भी पराभव होता है। यदि स्वयंवर में नहीं होता तो उसके पहले हो चुका होता।

हनुमन्नाटक (अंक 1) में जनक ने घोषणा की थी कि हे जनक के समान राजा लोगों! तुम सब मेरी प्रतिज्ञा सुनो कि 'जिस धनुष को उठाने में रावण की भुजाओं की शक्ति कुंठित हो गई उस शिवधनुष को जो कोई चढ़ाएगा उसी की त्रिलोकी के विजय की लक्ष्मी स्वरूपा पत्नी जानकी बनेगी।' इसका अर्थ यह है कि रावण इस धनुष से जोर-आजमाइश कर चुका है। अन्य राजाओं की हालत यह रही-

'झपटहिं करि बल बिपुल उपाई/पद न टरइ बैठहिं सर नाई/पुनि उठि झपटहिं सुर आराती/टरइ न कीस चरन एहि भाँती।'

जानकीमंगल में भी राजाओं का यह मद-चूर्णन तुलसी ने दिखाया-'**नहिं सगुन पाएउ रहे मिसु करि, एक धनु देखन गए/टकटोरि कपि ज्यों नारियस सिर नाइ सब बैठत भए/इक करहिं दाप न चाप सज्जन बचन जिमि टारे टरै/नृप नहुष ज्यों सबके बिलोकत बुद्धिबल बरबस हरै।**'

कवितावली में तुलसी ने यह कहा-'**जनक सदसि जेते भले भले भूमिपाल किए बलहीन बल आपनो बढ़ायो है।**' गीतावली में कहा गया-'**जेहि पिनाक बिनु नाक किये नृप।**' शिव धनुष-भंग का यह प्रसंग यों राजाओं के अहंकार को तोड़ने वाला हुआ तो है।

शिव-धनुष भंग का एक महत्व और है। यह प्रसंग अपने आप में इस अर्थ में अद्वितीय है कि सिर्फ इस प्रसंग में दो अवतार आमने-सामने आते हैं। अन्यथा न कभी मत्स्यावतार व कूर्मावतार का आमना-सामना हुआ और न कभी नृसिंह और वामन का। प्राय: ये अवतार एक-दूसरे के अनुक्रम में आते हैं और एक के वक्त दूसरा नहीं होता। लेकिन यहाँ एक का उदय हो रहा दूसरे का क्षय। और यह धनुर्भंग का समय एक तरह की सन्ध्या है। इसका अर्थ कहीं यह भी है कि अवतार व्यक्ति नहीं है, शक्ति है जो विभिन्न युगधर्मों के अनुरूप विभिन्नों में व्यापती है। ऊपर 'बिबिध देह सुरत्राता' का उल्लेख किया ही गया है। '**अपभय कुटिल महीप डेराने/ जहँ तहँ कायर गवँहि पराने**' की स्थिति परशुराम-राम प्रसंग में आती है और 'नृप-दल-मद गंजा' से वहाँ भी मुलाकात होती है। यह प्रसंग भारतीय जीवन-दृष्टि की समृद्धि को बताने वाला प्रसंग है। यहाँ एक अवतार का तीर दूसरे अवतार के पुण्य लोकों का क्षय करता है। पहला अवतार दूसरे के लिए गरिमापूर्ण तरह से स्थान खाली करता है। यह बताते हुए कि जिन्दगी ऐसे ही चलती है। यह नहीं कहते हुए कि बस एक ही है, उसके साथ तो क्या उसके बाद भी कोई नहीं हुआ। उसके बाद ईश्वर जैसे बाँझ हो गया हो, उसके बाद पृथ्वी जैसे बंजर हो गई हो। धनुर्भंग जीवन के प्रवाह का सूचक है और सत्य की मोनोपली का विरोधी। वहाँ लंका की तरह अकेले रावण की मनमानी नहीं है। वहाँ ऐसा नहीं है कि धर्म-परिवर्तन पर मौत की सजा दे दी जाए। वहाँ ऐसा नहीं है कि ईश निंदा पर मौत की सजा दे दी जाए। वहाँ कोई धार्मिक-पुलिस नहीं है कि जो वेदों में आग लगा दे या कस्टम जाँच पर ही यदि आप गणेश का चित्र लाए हों, रखा ले और आपके कम्प्यूटर को खोलकर देखे कि आपकी शादी का वीडियो कहीं कुछ धार्मिक रस्में तो नहीं दिखा रहा, कि जहाँ गैर-धर्मों की सार्वजनिक प्रैक्टिस वर्जित हो-यहाँ तक कि किसी कुचिपुड़ी नृत्य दल द्वारा वे मुखोटे भी इस्तेमाल नहीं किये जा सकें कि जो उस भिन्न (देश में प्रचलित धर्म से भिन्न) धर्म की गंध देते हों, या कि एक खास महीने में दूसरे धर्मों के लोग भी सार्वजनिक स्थानों पर न पानी पी सकते हों, न खा सकते हों क्योंकि वह महीना राजधर्मावलंबियों के व्रत का महीना है, कि जहाँ उस देश में दूसरे धर्म का कोई पुरोहित या प्रीस्ट नहीं घुस सकता हो, जहाँ उसी धर्म की एक दूसरी शाखा को भी अपने धार्मिक जुलूस को निकालने की इजाजत न हो और न अपने धर्मस्थल बनाने की, जहाँ दूसरे धर्म के व्यक्ति की गवाही भी उपेक्षित की जाए या राजधर्म के व्यक्ति

की तुलना में काफी हल्के से ली जाए, जहाँ अदालत बोले कि यदि अपराधी राजधर्म में कन्वर्ट कर लेता है तो उसकी सजा कम कर दी जाएगी, जहाँ एक खास जाति के लोगों का देश में प्रवेश ही निषिद्ध हो, जहाँ सड़कें तक राजधर्मियों और विधर्मियों के लिए अलग-अलग विभाजित हों, जहाँ विद्यालयों की पुस्तकें दूसरे धर्मों की ही निंदा नहीं करती हों बल्कि अपने मज़हब की ही दूसरी शाखा की भी निंदा करती हों। रावणों का उस दुनिया की आयामिता से परिचय नहीं जहाँ 'विविधता' का सम्मान है और जहाँ अवतारों की शृंखला है।

मनुष्यों की ओर से रावण के आतंक से प्रत्यक्ष झगड़ा लेने की जो सीधी योग्यता राम ने खर-दूषण और त्रिशिरा को मारकर दिखाई थी, वह असाधारण थी। मनुष्य पर जब संकट आता है तो देवता दूर करते हैं। जब देवताओं पर संकट आया तब उसे दूर करने मनुष्य आ खड़ा हुआ। राम के रूप में। तब तो पूछना ही था कि यह कौन है जो खर-दूषण, त्रिशिरा जैसे गोब्लिनों को ही खत्म नहीं कर रहा बल्कि बालि जैसों को भी समाप्त कर रहा है जिन्होंने रावण से मैत्री-सी कर ली है। अरण्यकांड के छठवें सर्ग में ऋषि समुदाय राम से कहता है-'जैसे इन्द्र देवताओं के रक्षक हैं, उसी प्रकार आप मनुष्य-लोक की रक्षा करने वाले हैं।' मनुष्य होने के कारण ही खर ने भी रावण की तरह राम को कम ही आँका था-'मैं पराक्रम की दृष्टि से राम को कुछ भी नहीं गिनता क्योंकि उस मनुष्य का जीवन अब क्षीण हो चला है।' (22वाँ सर्ग, अरण्यकांड) वह यह भी कहता है-'आज तक जितने युद्ध हुए हैं, उनमें से किसी में भी पहले मेरी कभी पराजय नहीं हुई है। यह तुम लागों ने प्रत्यक्ष देखा है। (23वाँ सर्ग, अरण्यकांड)।' उसके बल पर तीसवें सर्ग में राम यह टिप्पणी करते है-'राक्षसाधम! यही तेरा सारा बल है, जिस तूने इस गदा के साथ दिखाया है। अब सिद्ध हो गया कि तू मुझसे अत्यन्त शक्तिहीन है, व्यर्थ ही अपने बल की डींग हाँक रहा था।' (अरण्यकांड)। अकंपन रावण को बतलाता है। 'जैसे अग्नि के साथ वायु हो, उसी प्रकार अपने भाई के साथ संयुक्त हुए राम बड़े प्रबल हैं। उनके साथ न कोई देवता है, महात्मा मुनि। इस विषय में (राम से टकराने वाले) आगे कोई विचार न करें। लेकिन रावण पर सत्ता की मदांधता चढ़ी हुई थी। धनुर्भंग भी उसे दूर न कर सका था। इसलिए यह समझना भी ग़लत होगा कि कोई यदि एक या दो बार हार गया है तो वह आगे खुराफ़ात न करेगा। दुष्टताओं का एक अनुक्रम है।

पर प्रवहमानता का आदर्श मंच था-धनुर्भंग। वह सब एक धनुष के टूटने का मंच नहीं था। न कुछ राजाओं के गर्व टूटने का। यह तो लगातार जारी रहने का एक क्रम है और इसी से ही राजाओं के गर्व चूर्ण होते हैं क्योंकि वे तो इतिहास में डूबते उतराते हैं। राजाओं को समय के एक खंड में और देश (स्थान) के एक खंड में अपना मद बिखेरना है, लेकिन चिरंजीविता उन्हें उपलब्ध नहीं है। जीवन की विविधता जीवन की प्रवहमानता है। नरेश मेहता की एक कविता ऐसी ही है-

'प्रत्येक अपने स्व का चक्र/प्रतिक्षण लगा रहा है/और इस गति की परम तेजी को/सामान्य भाव में नहीं देखा जा सकता/पर यह चंद्रगति है/जिससे हमारे आकाश में प्रकम्पन उत्पन्न होता है/ताकि हमारी पृथिवी अपनी धुरी पर घूम सके/और धुरी-गति को स्वरूप मिल सके/यही धुरी-गति ही हमारी पृथिवी को/ऋतुमति बनाती है/ ऋतुमति धरती की यह ऋतुगति हमारे लिये/कितनी उत्सवरूपा है/यह हम सब जानते हैं/पर शायद यह हम नहीं जानते कि/सूर्य हमारी इस पृथिवी को लेकर/और पृथिवी हमें लेकर आकाशगंगा के केंद्र की परिक्रमा पर/ मन्वन्तर गति की गणनातीतता की ओर/भी धावित है/ और क्या उस परायात्रा की/हमें कोई प्रतीति है/ कि हमारी नभगंगा अन्य मन्दाकिनियों के साथ/अनावर्ती नक्षत्र- विस्तार की ब्रह्माण्डातीतता में/असर्पण गति से यात्रा कर रही है?/ एक महाशेष नाग-यात्रा है/जिस पर जैविकता का विष्णु शेषशायी है/यह-जो सोया हुआ है/जगा भी रहा है अलख वही।

सो जैसे धनुष टूटा है, वैसे ही बहुत से दल भी टूट रहे हैं। बहुत से पुराने नाते भी। बहुत-सी आधुनिक और समकालीन बातें हैं जो विखंडन की एक प्रक्रिया को बता रही है। कुछ बातों के लिए प्रत्यक्ष कथन की जगह रूपक ही ठीक रहता है। पर धनुष भंग विश्वास की स्थापना है। विश्वास भंग नहीं। राम पर विश्वास ही, राम को जानना ही हमारी सभ्यतागत चेतना का विकास है। इसलिए यह अंक।

(मनोज श्रीवास्तव)
राम-रज, 3-पारिका-फेज 2,
चूना भट्टी, कोलार रोड,
भोपाल-462016 (म.प्र.)
मो.-9425150651
ईमेल-shrivastava_manoj@hotmail.com

अंक 229 अप्रैल 2024

अनुक्रम

सम्पादकीय

साधो सबद साधना कीजै

जिनका राजा, उन्हीं का दुश्मन / **अजित वडनेरकर/10**

हिंदी एक विचार अनेक-3

हिंदी के लिए एक कविता / **प्रकाश मनु/12**

धर्मशास्त्रों में प्रतिपादित समाज शास्त्र-12

धर्मशास्त्रों में वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम / **रामेश्वर मिश्र पंकज/14**

महाभारत में राजधर्म / **कुसुमलता केडिया/16**

अनुवाद

आपकी आवश्यक सेवा क्या होगी (**मूल : ओपरा गेल विन्फ्रे**) / **अनु. विभा खरे/19**

आलेख

भारतीय ज्ञान परंपरा का प्राण-अध्यात्म / **रघुनंदन शर्मा/21**

महाकवियों के राम / **करुणाशंकर उपाध्याय/25**

केशव के राम / **गंगा प्रसाद बरसैंया/38**

राम! तुम मानव हो? ईश्वर नहीं हो क्या / **सत्येन्द्र शर्मा/41**

श्री राम का कृतित्व ही हमारी आचार संहिता / **अंजनी कुमार झा/45**

उमा राम सम हित जग माँहीं / **शकुन्तला कालरा/47**

जैन रामायण में रामकथा का वैविध्य / **राजेश श्रीवास्तव/52**

अयोध्या त्रेता से भविष्य तक / **विवेक रंजन श्रीवास्तव/57**

राम-अमित विस्तार / **सुनील देवधर/59**

रणनीति में मनोवैज्ञानिक दबाव लंका कांड (रामचरितमानस) / **संध्या सिलावट/62**

अवतार की अवधारणा और रामावतार / **प्रभु शंकर शुक्ल/66**

सिय पिय की पाती / **राजरानी शर्मा/68**

शोधालेख

डॉ. परशुराम शुक्ल के बाल-काव्य में जीवन मूल्य / **अनीता श्रीवास्तव/72**

स्वामी विवेकानंद का दार्शनिक चिंतन और राष्ट्रवाद / **राहुल कुमार भारती, रितेश कुमार/76**

कथाकार विजय जोशी की कहानियाँ / **हेमलता राठौड़, वीणा छंगाणी/80**

भारतीय भक्तिआन्दोलन में असम के संत / **आलिया जेसमिना/84**

हिंदी उपन्यासों के स्त्रीवाद पर फ्रेंच प्रभाव / **अविनाश कुमार उपाध्याय/89**

ललित निबंध

लोक के राम / **सुमन चौरे/93**

गेहूँ / **नर्मदा प्रसाद सिसोदिया/97**

आत्मकथ्य

स्वयं पर लिखना बहुत कठिन / **उषा सक्सेना/102**

अनुवाद

मु. क. नायक / **(मूल : चि.वी. जोशी) / अनु.: संगीता जगताप/104**

कहानी

खेला / **शुभदा मिश्र/108**

किसी दिन अचानक / **रजनी गुप्त/116**

कविता

पलाश / **रंजना अरगड़े/123**

राम / **मन मीत/125**

कठिन है / **प्रेमचंद्र गुप्ता/128**

जिनका राजा, उन्हीं का दुश्मन

– अजित वडनेरकर

जन्म – 1962।
शिक्षा – हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर उपाधि।
रचनाएँ – पाँच पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – राजकमल प्रकाशन का विद्यानिवास मिश्र कृति पांडुलिपि सम्मान।

मृग में समायी चौपायों की कायनात

राजेन्द्र, देवेन्द्र अथवा वनराज, देवराज का अर्थ सामान्य तौर पर राजाओं के राजा अथवा देवों के देव से लगाया जाता है। आशय इन्द्र ही है। इसी तरह वनराज यानी जंगल पर शासन करने वाला अथवा देवराज यानी देवों का अधिपति इन्द्र। इसी तर्ज पर मृगेन्द्र का अर्थ बड़ी आसानी से हिरणों का राजा ही बताया जाएगा, पर यह ग़लत होगा। शब्दों का सफ़र में एक ही शब्द या शब्दसमूह से विकसित होती अर्थछायाओं पर हमेशा बात होती रही है। आमतौर पर हिन्दी में मृग से तात्पर्य हिरण प्रजाति के पशुओं जैसे सांभर, चीतल से है मगर इस शब्द की अर्थवत्ता बहुत व्यापक है।

मृग से जुड़ी दिलचस्प शब्दावली :–तत्सम शब्दावली में मृग और उससे बने अनेक यौगिकों की लम्बी शृंखला है। अकेले मृग शब्द के कई अर्थ हैं। इसमें न सिर्फ चौपाया बल्कि पक्षी भी शामिल हैं। वैदिक काल में संस्कृत में मृग का अर्थ हिरण तक सीमित न होकर किसी भी वन्य पशु के लिए था। यहाँ तक कि सिंह, व्याघ्र आदि भी। जो भी मृगया अर्थात् शिकार के ज़रिए आहारचर्या करता हो, वह मृग है। मृग का अर्थ भी मूलत: गतिशील से है। कुत्ते को मृग भी कहा गया है। बहुत बारीकी से भी। पालतू कुत्ता गृहमृग और आवारा कुत्ता ग्राममृग।

राजा बना बैरी :– मृग का आशय जब कोई भी वन्य पशु है तो मृगेन्द्र का अर्थ निश्चित ही वनराज सिंह ही होगा। कहाँ मृग यानी नाज़ुक हिरण और कहाँ हिरणों का राजा मृगेन्द्र! यही नहीं इसी कड़ी में शेर की महिमा बखानने वाले और भी पद हैं जैसे मृगप्रभु, मृगराज, मृगाधिप, मृगाधिराज या मृगपति। बात यहीं तक नहीं है। चूँकि शेर ही जंगल का राजा है और जंगल में वन्यजीव रहते हैं। किसी भी जंगली चौपाए को मृग कहते हैं इसलिए वन्यजीवों का रिपु यानी शत्रु, बैरी, दुश्मन कौन हुआ! ज़ाहिर सी बात है कि मृगप्रभु ही मृगरिपु भी हैं। मृगश्रेष्ठ से भी ऐसा लगता है मानो हिरण की सर्वश्रेष्ठ प्रजाति होगी। मगर यहाँ भी अरण्यराज, वनपति शेर से ही आशय है।

मृगतृष्णा और मृगजल :– ग्रीष्म ऋतु में ज़मीन की निचली सतह से ऊपर उठती गर्म हवा की वजह से दूर पानी की लहरों का भ्रम होता है। रेगिस्तानी इलाकों में निवास करने वाला प्यासा हिरण या अन्य चौपाए अक्सर इस मतिभ्रम में दूर तक निकल आते हैं। इसीलिए अतृप्त कामनाओं की भटकन को मृगतृष्णा कहा जाता है। इसी तरह मृगमरीचिका गर्मसतह से उठती हवा को जल समझने के धोखे को कहा गया। मृगजल भी इसी को कहते हैं। दृष्टिभ्रम, धोखा, छल, मायाजाल के सन्दर्भ में इसीलिए मरीचिका या मृगतृष्णा का प्रयोग होता है। यहाँ भी मृग यानी सामान्य चौपाया ही है।

हरी-हरी घास :– मृग शब्द का अर्थ हरी घास भी है। प्राचीनकाल में मृग शब्द में चरागाह या चरने का भाव प्रमुख था और इससे घास अर्थ की पुष्टि होती है। मृगवल्लभ का अर्थ भी घास होता है। वल्लभ यानी प्रिय, मृग यानी हिरण। जो हिरण को प्रिय हो। जैसे राधावल्लभ का आशय कृष्ण से है। श्रीवल्लभ यानी विष्णु। मृगवल्लभ का आशय घास की एक खास किस्म से है जो ऊँचे पहाड़ों पर मिलती है। गुलमर्ग, सोनमर्ग जैसे नाम दरअसल पहाड़ी उपत्यकाओं की वजह से ही हैं जो घास के मैदानों के लिए जानी जाती हैं।

मृगवीथी, मृगणा :– हिन्दी का मार्ग शब्द बना है संस्कृत की मृग् क्रिया से जिसमें खोजना, ढूँढ़ना, तलाशना जैसे भाव निहित हैं। पर यह परवर्ती विकास है। कभी जिस राह पर चल कर मृगणा अर्थात् अनुसंधान या तलाश की जाती थी, उसे ही मार्ग कहा गया। हिरणों के चलने से जो बाट बनती है उसे मृगवीथि कहा गया। संस्कृत शब्द मृगणा का अर्थ होता है अनुसंधान, शोध, तलाश। मृगया में शिकार का भाव है। यह भी खोज है। बाद में मार्ग का अर्थ प्रविधि, तरीका, गति, क्रम अथवा प्रणाली भी हुआ। सभ्यता के विकास में हम उन्हीं रास्तों पर चल कर नए–नए पड़ाव तय करते रहे हैं जिन पर पहले पशुओं के खुरों के निशान थे। मृगवीथी ही मार्ग है।

मार्ग यानी चौपायों की राह :– जिस तरह से र्च धातु में चलने, गति करने का भाव प्रमुख है उसी के चलते इससे चारा (जिसका भक्षण किया जाए), चरना (चलते–चलते खाने की क्रिया), चरागाह (जहाँ चारा हो) जैसे विभिन्न शब्द बने हैं। कुछ यही प्रक्रिया मृग के साथ भी रही। र्च के उदाहरण से स्पष्ट है। भक्षण करते चलने से मृग गतिवाचक है। इसमें चौपाए की अर्थवत्ता आई। चौपायों यानी मृगों की आहारचर्या से बाद में व्यापक तौर पर मार्ग यानी रास्ता के अर्थ में प्रचलित हुआ। मृग के चौपाया वाले सन्दर्भों पर ग़ौर करें तो मार्ग से आशय पशुओं के चलने से बने रास्तों से ही है।

मृगचर्या यानी कंदमूल आहार :–प्राचीनकाल में ऋषिमुनियों की आहारचर्या को मृगचर्या भी कहा जाता था। आशय स्पष्ट है। वानप्रस्थी होने के नाते उन्हें वनोपज पर ही निर्भर रहना होता था। जिस तरह एक हिरण (अथवा चौपाया) घूमते हुए (चलते हुए, चरते हुए) अपना आहार खोजता था, उसी तरह वनभ्रमण करते हुए ऋषि मुनि या उनके शिष्य अपना आहार चुनते थे। कुल मिला कर पशुओं की तरह अपने भोजन का खुद अनुसन्धान करना और खाना। पशु भोजन का निर्माण नहीं करते, न ही उनके पास पाक विधियाँ होती हैं। खोजने पर जैसा मिला, उसे उदरस्थ किया। यही है मृगचर्या।

बड़े सबेरे मुर्गा बोला :– इसी शृंखला में पक्षी को भी फारसी में मुर्ग़ का नाम मिला जिसका मतलब हुआ चुगने वाला जीव। थलचर पक्षियों में मुर्ग़ सर्वाधिक लोकप्रिय आहार है। अरबी में इससे एक सामिष पकवान बनता है जिसे मुर्ग़मुसल्लम कहते हैं यानी साबुत भुना हुआ मुर्गा। इसी तरह एक और पक्षी होता है जिसे मुर्गाबी कहा जाता है। मुर्गाबी बतख की प्रजाति का जीव है और जल–थल दोनों जगहों पर रहता है। यह बना है मुर्गआब यानी पानी में रहनेवाला मुर्ग जिसका देशी रूप हुआ मुर्गाबी। उर्दू–फारसी में पानी को आब कहते हैं। प्रचलित अर्थ में जो मुर्गी है उसके लिए मुर्ग–सुब्हख्वान यानी सुबह का पंछी जैसा आलीशान शब्द है।

असम्पादित

शब्दसन्धान, शब्दकौतुक, व्युत्पत्ति, निरुक्ति, मृग, मृगया, मुर्गा, मर्ग।

जी–37, फेज–1, ग्रीन मीडोज
भोजपुर रोड, पी.ओ. मिसरोद,
भोपाल–462047 (म.प्र.)
मो.– 6265739044

हिंदी भवन में होलिकोत्सव

हिंदी के लिए एक कविता

- प्रकाश मनु

जन्म - 12 मई 1950।
शिक्षा - एम.एस.सी., एम.ए.।
रचनाएँ - नब्बे पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान - हिंदी अकादमी के साहित्यकार सम्मान सहित अनेक सम्मानों से अलंकृत।

हिंदी दिलों की भाषा है आत्मा की सनातन बानी
हिंदी है हमारे पुरखों का कोठार
हिंदी हृदय है इस महादेश का जिसमें बसते हैं सवा सौ करोड़ जन
और उनके हँसने-रोने, गाने और गुनगुनाने का जादुई अरथ भी

हिंदी धुरी है जिंदगी की कठिनतम लड़ाइयों की
हिंदी रोज-रोज के दुख-दरद, उच्छ्वास और फटे हुए
आँसुओं की भट्ठी
जो रोज अपनी आँच में तपाकर हमें कर देती है
वज्र से अधिक मजबूत
हिंदी है रात-दिन निरंतर दौड़ रहे एक विशालकाय रथ
के पहिए की गुंजार
हिंदी एक विराट स्वप्न और इच्छाओं का आकाश
जिसका ओर-छोर कोई आज तक नाप पाया ही नहीं

हिंदी चिड़ियों की चह-चह है हिंदी पत्तों की मर-मर
हिंदी गरीब की रोटी और रोजी है हाजीपुर के अवधू रिक्शे वाले
की फटी बनियान से चमकता पसीना
हिंदी रामू पुताई वाले के चूने सने हाथों और सादी सी कूँची
से उपजी दीवारों की सफेदी है
दीवाली के दीयों की झलर-मलर हँसी
होली का धूल सना अबीरी हुल्लड़ और टेसू की महकती शाम

हिंदी हमारी और हम सबकी प्यारी भारत माँ
के दुखों की बोली है
जिसमें आँसू भी हैं दुख कराह सिसकियाँ और सुच्चे
मोतियों सी हँसी भी
हिंदी रोली है बहना का प्यार, चंदन और अबीर दोस्ती का
हिंदी जिंदगानी है खेत-खलिहानों की जिंदादिल भाषा
जिसकी धूल भी गाती-गुनगुनाती है।

हिंदी कबीर का करघा मीरा के पदों की अनवरत पुकार है
हिंदी सुराज की तकली और चरखा है खादी और खुद्दारी है
हिंदी लोकगीतों का पलना है लोककथाओं की मीठी
शहदीली उड़ान वाली सप्तरंगी पाँखी
वह अटकती, कहीं भटकती भी हो अगर, तो उस पर हँसना
खुद अपनी माँ की मैली, फटी हुई साड़ी उधड़ी चोली की शर्म
पर निर्लज्ज होकर हँसना है।

हिंदी तुलसी की मर्यादा है सूर के रसभीने पदों की बोली-बानी
हिंदी जनता के फटेहाल महाकवि निराला की खुद्दारी
की भाषा है जिसकी पूरी जिंदगी लड़ते हुए बीती
हिंदी प्रेमचंद के किरमिच के फटे जूतों से झाँकती
मैली अँगुली है पैर की
जिस पर नजर आ जाता है हिंदी लेखक की
अनाम पीड़ाओं का इतिहास
कि इस महादेश के सवा सौ करोड़ परानियों के जीने मरने हँसने
और
रोने की भाषा है हिंदी
हिंदी उनके होने का आईना उनकी जिंदगी का पर्याय है

हिंदी बिना दीवारों वाला घर है
जिसमें रहते हैं अनगिनत मेहनतकश लोग अपने दुख-दर्द
माथे पर चुहचुहाते पसीने और बेअंत परेशानियों के साथ

हिंदी मिट्टी में साँस लेती लुहार की धौंकनी है कुम्हार का चाक
हिंदी है गोमुख जिससे निकलकर महा समुद्र की लहरों सरीखे
उच्छल ऊर्जित करोड़ों लोग
बढ़ा देते हैं रोज एक कदम और आगे पूरी आश्वस्ति से
और समय का महाभारत लिखता है रोज एक नया मन्वंतर

हिंदी है इक्कीसवीं सदी का नया अर्थ जो इस महादेश
की नाभि से निकला है
प्रभात सूर्य की किरणों में नहाए नीलोत्पल सरीखा
हिंदी है झोपड़पट्टी के सात बरस के बिरजू की झिझकती कलम
जिससे नए युग की रामायण और नया समय रचा जाना है...
हिंदी है पाँच बरस की एक छोटी सी बच्ची रजिया के हाथ का
ब्रश
जिससे अभी-अभी लिखा गया है स्वागतम्
और धूप में चमकते हैं उसके गीले सतरंगी आखर

हिंदी को एक दिन गाजे-बाजे से मनाने की दरकार नहीं दोस्तो
हिंदी तो रोज-रोज है हर दिन हर पल हर साँस
की लय और बेखुदी में
हिंदी हर पल धड़कती है हममें
हिंदी माँ है हमारे होने का मतलब...
हिंदी जिंदगी है और जिंदगियों के पार
की जिंदगी भी
जिसे मानी देते हैं करोड़ों करोड़ लोग अपने गुट्ठिल हाथों से

545 सेक्टर-29,
फरीदाबाद-121008 (हरियाणा)
मो. 09810602327

शक्ति स्वरूपा नृत्य नाटिका का मंचन

धर्म ही भारत की विराट एकता का आधार और मर्म है-एक

- रामेश्वर मिश्र पंकज

वर्तमान में निरंतर सृजनरत, रीवा मध्य प्रदेश में जन्मे ख्यातिलब्ध दार्शनिक, समाजवैज्ञानिक एवं इतिहासविद, समाजवादी एवं गाँधीवादी आंदोलनों में सक्रियता से सहभागिता कर विभिन्न महत्त्वपूर्ण पदों से सेवा निवृत्त। आपकी बाइस पुस्तकें प्रकाशित हैं।

आधारभूत तत्त्व है धर्म।

धर्म का अर्थ है सार्वभौम नियम (कॉस्मिक लॉज) जो विश्वव्यवस्था (कॉस्मिक आर्डर) को गतिम (मेन्टेन) रखते हैं। सृष्टि चक्र को अबाधित प्रवर्तित होने देना ही मानव धर्म है। भगवद्गीता में अध्याय 3 में इसे ही यज्ञ कहा गया है। यज्ञार्थ कर्म ही धर्म चक्र को प्रवर्तित रखते हैं। प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में ही प्रजाओं को यज्ञ के साथ सृजा है और कहा है कि इस यज्ञ के द्वारा ही तुम समृद्ध रहोगे तथा श्रेष्ठ कामनाएँ पूरी होंगी। यज्ञार्थ कर्म से दैव-शक्तियाँ प्रसन्न होती हैं और कर्ता को श्रेष्ठ भाव से भरती हैं। इससे परम श्रेय की प्राप्ति होती है और प्रेय की भी।

धर्म-बोध से उत्पन्न काम-बोध एवं अर्थ-बोध हमें शक्तिवान और समृद्ध बनाता है। ऐश्वर्य, विपुलता, प्रचुरता देता है। भारत अनादिकाल से विश्व का सर्वाधिक ऐश्वर्यशाली, समृद्ध, महिमावान राष्ट्र है। वह भारत जो इजराइल से जापान तक विस्तृत रहा है और समस्त हिमालय क्षेत्र जिसका अंग है, जिसमें तिब्बत, चीन, मंगोलिया से लेकर साइबेरिया (शिविरा) तक का समस्त क्षेत्र आता है और हिन्द महासागर तथा केस्पियन सागर जिसकी दक्षिणी सीमाएँ हैं। इतना ऐश्वर्य विश्व के किसी भी राष्ट्र में कभी नहीं रहा।

इस हमारी समृद्धि के प्रचुर प्रमाण वेदों में, रामायण में, महाभारत में, जातक कथाओं एवं जैन साहित्य में भरे पड़े हैं। हमारे अद्वितीय भव्य मंदिर, मूर्तियों का अद्वितीय सौंदर्य, देवताओं और उनके वाहनों के शरीर में सजे आभूषणों की प्रचुरता, मंदिरों में चित्रित घोड़ों-हाथियों, वृषभों तक के शरीर में शोभित आभूषणों की अपार विपुलता, प्राचीनतम काल में पाए जाने वाले अद्वितीय महल एवं भवन, 10 हजार वर्ष पूर्व समृद्ध नगर-वास्तु एवं 'ड्रेनेज सिस्टम' के प्रमाण, महाभारत में वन में चल रहे ऋषियों के साथ सैकड़ों ब्राह्मणों एवं ऋषियों का वर्णन तथा उनके साथ बैलगाड़ियों में लदी पुस्तकों का वर्णन, रामायण एवं महाभारत में सैकड़ों प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का वर्णन, वैदिक काल से उद्योग, शिल्प एवं वाणिज्य का तथा समृद्ध नगरों का वर्णन, देश भर में स्थल मार्ग में भव्य सड़कों के जाल बिछे होने के प्राचीन वर्णन, उनमें पहिए पर चलने वाले रथों, शकटों आदि का प्रभावी वर्णन, 19वीं शती ईस्वी तक देश में सैकड़ों जगत सेठ होने के स्वयं अंग्रेजों, जर्मनों, फ्रेंचों एवं अन्य यूरोपीयों के वर्णन, हर नगर में नगर सेठ होने का 20वीं शती ईस्वी तक का रिकार्ड, ये सब अति प्राचीनकाल से हमारी समृद्धि के साक्ष्य हैं। अत्यंत प्राचीन काल से हमारे यहाँ समुद्रमार्ग से व्यापार होता रहा है। इसीलिए हमारे महासागर का नाम हिंद महासागर है। अन्य किसी भी महासागर का नाम किसी देश के नाम से नहीं है। समुद्र हमारे लिए आत्मीय है, प्रिय है, हमारा क्रीड़ा क्षेत्र है।

हमारे भव्य मंदिर हजारों शिल्पियों की तपस्या से वर्षों में बनते थे। उसके लिए कितना समय, कितना धन, कितनी फुरसत, कैसी दक्षता, कौशल, तन्मयता, तल्लीनता, निपुणता चाहिए, कितनी शांति चाहिए, ये सब बताता है कि कितने आराम से, प्रचुरता और समृद्धि से राष्ट्र जीवन चलता रहा है। यह समृद्ध जीवन सँभालने वाली हमारी राज्य व्यवस्था रही है, जिसका वर्णन हमारे राजशास्त्रों में विस्तार से है। भौतिक समृद्धि में भी हम अत्यंत उन्नत रहे हैं और आंतरिक वैभव में भी। यह जो भारतीय वैभव है इसका संरक्षण एक प्रबल बुद्धि-सम्पन्न राज्य व्यवस्था से ही संभव हुआ है। जिसके कारण मानवीय

जीवन में विपुलता, समृद्धि, ऐश्वर्य का ऐसा विराट प्रवाह लाखों वर्षों से है।

दान की ऐसी महान परम्परा हमारे यहाँ रही है कि ग्रहण आदि दान-पर्वों पर भिक्षुक भी (दान लेने के साथ ही पर्व-स्नान के बाद) दान देते हैं। उसी महान परम्परा में हमारे यहाँ चलने वाले भंडारों और लंगरों में प्रतिदिन करोड़ों लोगों को भोजन मिलता है। उसी परम्परा के उत्तराधिकारी हमारे नरेन्द्र (श्री नरेन्द्र मोदी) ने कोरोना काल में 80 करोड़ लोगों को 6 महीने तक मुफ्त में अन्न दिया। यह भारत में ही सम्भव है। संयुक्त राज्य अमेरिका में तो सूप-किचन चले जिनमें सब्जियों आदि का रस देकर किसी तरह लोगों को जीवित रखा गया।

यह महान वैभवशाली समृद्धि परम्परा एक श्रेष्ठ राज्य व्यवस्था में ही संरक्षित रहती है। जो राज्य विचारों या आस्थाओं के आधार पर या जाति, वर्ग आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता अपितु सार्वभौम नियमों की मर्यादा में सबको अपनी-अपनी परम्परा के अनुसार जीवन जीने का अधिकार मानता है और तदनुसार वर्णाश्रम-धर्म प्रतिपालन जिसका सर्वोच्च लक्ष्य है। समाज को राज्यकर्ताओं की योजना के अनुसार बदलना, रूपांतरित करना अधर्म और पाप कहा गया है। सार्वभौम नियमों एवं मर्यादाओं का पालन सुनिश्चित करना ही राजधर्म है।

75 वर्षों से यह राजधर्म उपेक्षित, तिरस्कृत है। इसके कारण राज्य कर्ता प्रजा के मध्य स्पष्ट भेदभाव करते रहे हैं और उसके लिए काल्पनिक कहानियाँ फैलाई जाती रही हैं। जो मुख्यत: ईसाई मिशनरियों ने और उनकी प्रेरणा से कतिपय मुसलमान मौलवियों आदि ने रचीं फैलाई हैं। बाद में, कम्युनिस्टों ने उन गप्पों को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया और उसे ही हिन्दू समाज का सत्य बता दिया। जिनका हिन्दुओं के सत्य से कोई सम्बन्ध नहीं है।

अपने सच्चे इतिहास की स्मृति के लिए सत्यनिष्ठ इतिहास एवं धर्मनिष्ठ राज्यशासन के विषय में प्रामाणिक शास्त्र पढ़ाने वाले उच्च विद्या केन्द्र अति आवश्यक हैं। राजधर्म शब्द को नारे की तरह उछाचने से धर्म-अधर्म का विवेक ही मिट जाएगा। राजधर्म पर एक सौ से अधिक शास्त्र हमारे यहाँ हैं। उनमें महाभारत में राजधर्मानुशासन पर्व, ब्रह्मर्षि नाटक का महाराज युधिष्ठिर को उपदेश, चाणक्य का अर्थशास्त्र, शुक्रनीति, बृहस्पति नीति, मनु स्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति, व्यास-स्मृति-शुक्रनीति सार आदि विश्वविख्यात हैं। उनकी समकालीन टीकाओं सहित उन्हें पाठ्यक्रम का अंग बनाया जाना चाहिए। तभी धर्म का बोध राष्ट्र में व्याक्त होगा।

ए 141, आकृति हाईलैण्ड
डाकघर-फंदा, भोपाल-462030 (म.प्र.)
मो. 8349350267

होलिकोत्सव में होली गीत प्रस्तुति

महाभारत में राजधर्म - 2

- कुसुमलता केडिया

इतिहास, समाज विज्ञान और अर्थशास्त्र की गहरी अध्येता और तर्कपूर्ण विवेचना में सिद्धहस्त विदुषी प्रो. कुसुमलता केडिया के वैचारिक आलेखों का शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशन किया जा रहा है ताकि हमारे पाठकों में बौद्धिक उत्तेजना उत्पन्न हो और वे हमारी ज्ञान परंपरा को तार्किक ढंग से आत्मसात कर मौलिक लेखन की ओर प्रवृत्त हों। प्रस्तुत है इस लेखमाला की अगली किश्त 'महाभारत में राजधर्म -2' पाठकों की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

- सम्पादक

स्वदेशी अर्थचेतना की संवाहक।

जन्म - 2 जुलाई 1954।

जन्म स्थान - पडरौना (उ.प्र.)।

शिक्षा - एम.ए., पीएच.डी।

रचनाएँ - अनेक पुस्तकें प्रकाशित।

भीष्म पितामह ने राजधर्म की प्रधानता और महत्व को प्रतिपादित करते हुये सर्वप्रथम यह स्पष्ट किया कि समान्य धर्म, साधारण धर्म, सार्ववर्णिक धर्म या मानव धर्म का पालन तो प्रत्येक मनुष्य को करना ही चाहिए। मानवधर्म का उल्लंघन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति शासन द्वारा दंडनीय है। इसलिए शासकों को धर्मशास्त्रों में प्रतिपादित मानवधर्म का ज्ञान अवश्य रखना चाहिए। इसके साथ ही वर्षों और आश्रमों के धर्म तथा विशिष्ट कार्यक्षेत्रों के अपने-अपने धर्मों के विषय में भी शासन को ज्ञान रखना चाहिए। क्योंकि उसके आधार पर ही न्याय हो सकता है। इस क्रम में ही पितामह बताते हैं कि इन सामान्य धर्मों के साथ ही ब्राह्मण को इन्द्रिय संयम अन्यों से अधिक करना चाहिए तथा वेदों और शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिए। अगर यह सब करते हुये समाज के सद्गृहस्थों द्वारा ब्राह्मण को दान दिया जाए तो उस दान से अथवा ब्राह्मणोचित कर्म करने के फलस्वरूप प्राप्त धन से परिवार पालने का सामर्थ्य आ जाने पर विवाह करे और संतान पैदा करे अथवा विवाह का मन ना हो तो दान से प्राप्त समस्त धन को अन्य सुपात्र को दान कर दे तथा यज्ञ में लगा दे।

क्षत्रिय को दान तो करना चाहिए परंतु दान की याचना कभी नहीं करना चाहिए, यज्ञ करना चाहिए परंतु दूसरों का यज्ञ पुरोहित बनकर नहीं करना चाहिए। अध्ययन करे परंतु अध्यापन न करे। धर्म का उल्लंघन करने वालों और लुटेरों, डाकुओं तथा दस्युओं का वध करने के लिए सदा तत्पर रहे और युद्धभूमि में पराक्रम प्रकट करने के लिए भी सदा तत्पर रहे। जो क्षत्रिय शरीर पर घाव हुये बिना ही समर भूमि से लौट आता है, उसकी प्रशंसा इतिहासवेत्ता लोग कभी भी नहीं करते। इसीलिए युद्ध ही क्षत्रियों का प्रधान धर्म है। सनातन धर्म को बाधित करने वाले तथा वर्णाश्रम धर्म का पालन कर रहे सद्गृहस्थों के जीवन में एवं ब्रह्मचारियों तथा वानप्रस्थियों और संन्यासियों के जीवन में किसी भी प्रकार का विघ्न डालने वाले दस्युओं का संहार क्षत्रिय का श्रेष्ठतम कर्म है। राजा और कुछ कर्म या ना करें, यदि वह प्रजापालन और प्रजा का रक्षण करता है तो इसी से वह परिनिष्ठित कार्य अर्थात् कृतकृत्य माना जाता है।

वैश्यों को सदा उद्योगशील रहना चाहिए और कृषि पशुओं का तथा अपनी सम्पत्ति का पालन करना चाहिए। धर्मपूर्वक क्रय और विक्रय का व्यापार करना चाहिए और अनाजों, फसलों तथा बीजों की रक्षा करना चाहिए। इसी प्रकार परिचर्या कर्म करने वालों को सेवाकर्म भलीभांति करना चाहिए। धर्मात्मा शूद्र राजाज्ञा के अनुसार कोई भी धार्मिक कृत्य कर सकता है। सभी लोगों को सदा शूद्र के भरण-पोषण को अपना कर्तव्य मानना चाहिए और उन्हें अन्न, वस्त्र तथा आवश्यक सामानों की

कभी भी कमी नहीं होने देना चाहिए। अपनी सेवा में उपस्थित शूद्र की आजीविका की व्यवस्था करना धर्मकर्तव्य है, ऐसा धर्मवेत्ताओं का कथन है। अगर कोई स्वामी संतानहीन मर जाए तो उसका पिंडदान भी सेवक शूद्र को ही करना चाहिए। अपने स्वामी का किसी भी स्थिति में परित्याग नहीं करना चाहिए। अगर किसी कारण स्वामी के धन का नाश हो जाए तो अब तो उसे जो धन मिला है, उससे कुटुंब पालन के बाद बचे हुए धन से अशक्त हुए स्वामी का भी भरण पोषण करना चाहिए। यज्ञ चारों वर्णों का धर्म है सभी धर्म के वर्णों के लोगों को यज्ञ करना चाहिए परंतु शूद्र के यज्ञ में स्वाहा, वषट्कार तथा वैदिक मंत्रों का प्रयोग नहीं होता है। ऐसे अनेक शूद्र हुए हैं जिन्होंने इन मंत्रों के बिना विधिपूर्वक यज्ञ किए हैं और दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को हजारों या एक लाख तक पूर्णपात्र दान किए हैं। सभी वर्ण के लोगों ने यज्ञों का अनुष्ठान किया है और उनसे मनोवांछित फल प्राप्त किया है। इसीलिए सभी वर्ण यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों को देवता ही मानते हैं। ब्राह्मणों के निर्देशानुसार ही यज्ञों का अनुष्ठान किया जाता है। इसके साथ मानसिक संकल्प द्वारा भावनात्मक यज्ञ भी किये जाते हैं। जिनमें सभी वर्णों का अधिकार है। वह यज्ञ भी श्रद्धा के कारण परम पवित्र होता है। वस्तुत: सभी वर्ण ब्राह्मणों से ही उत्पन्न हुए हैं और इसलिए मूल रूप में तो सभी वर्ण ब्राह्मणों के ज्ञाति ही हैं। इसीलिए ब्राह्मणों के साथ सबकी अभिन्नता है। सभी को ब्राह्मण का सम्मान करना चाहिए। अभिन्नता का जोतक अंतिम 47वाँ श्लोक इस प्रकार है –

तस्माद् वर्णा ऋजवो ज्ञातिवर्णाः

संसृज्यंते तस्य विकार एव।

एकं साम यजुरेकमृगेका

विप्रश्चैको निश्चये तेषु सृष्टः।।

अर्थात् भगवान ने तीनों वर्णों की सृष्टि ब्राह्मणों से ही की है। अत: शेष तीन वर्ण भी वस्तुत: ब्रह्मणों के ही विकार हैं। अर्थात् आचरण और अध्ययन संबंधी न्यूनता एवं स्खलन के कारण शास्त्र के अनुसार ये वर्ण अन्यत्र को प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार एक ओंकार से ही ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद तीनों की सृष्टि है, उसी प्रकार एक ब्राह्मण वर्ण से ही शेष तीन वणों की विकृति पूर्वक निष्पत्ति है। अत: आध्यात्मिक स्तर पर ब्राह्मण के साथ उनकी सबकी अभिन्नता है क्योंकि सभी रूप मूलत: ब्राह्मण से ही प्रकट हुए हैं। इसीलिए श्रद्धा ही प्रधान है '**श्रद्धा वै कारणं महत्।**'

इसके बाद पितामह भीष्म ने सभी आश्रमों के धर्म की भी विवेचना की। ब्रह्मचर्य आश्रम में वेदाध् ययन पूर्ण करना चाहिए। यदि ब्रह्मचारी के मन में मोक्ष की तीव्र अभिलाषा जग जाए तो उसे सीधे ही संन्यास ग्रहण करने का अधिकार होता है। अन्यथा गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना चाहिए। शुभ कर्मों का अनुष्ठान करना और पत्नी के साथ न्यायोचित भोग भोगना तथा संतान उत्पन्न करना गृहस्थ आश्रम का धर्म है। गृहस्थ आश्रमी को देवताओं और पितरों की तृप्ति के लिए हव्य और कव्य समर्पित करने में कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए। निरंतर अन्नदान करना चाहिए और शेष तीनों आश्रमों का पालन करना चाहिए तथा यज्ञ याग आदि में प्रवृत्त रहकर ईर्ष्या, द्वेष से रहित जीवन जीना चाहिए। क्योंकि गृहस्थ आश्रम के धर्म का पालन करने पर स्वर्ग लोक अवश्य मिलता है। स्वर्ग लोक में पुण्य फल भोगकर पुन: पृथ्वी पर मानव रूप में अगले जन्म में आने पर यहाँ भी उसके सभी मनोरथ सहज सिद्ध होते हैं।

गृहस्थ आश्रम के दायित्व सम्पन्न कर व्यक्ति को, विशेषकर प्रत्येक ब्राह्मण को, अगर पत्नी साथ जाए, तो पत्नी के साथ और अगर पत्नी घर में ही बालबच्चों के साथ सुख का अनुभव करे तो अकेले ही वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करना चाहिए। वहाँ आरण्यक शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए तथा संयमित जीवन जीते हुए स्वाध्याय करते रहना चाहिए।

तत्पश्चात् संन्यास आश्रम में प्रवेश करना चाहिए। वहाँ रहते हुए मुनिवृत्ति से रहे। अपना कोई घर नहीं बनाए। किसी भी भोग वस्तु की कामना ना करे। जो कुछ भी उपलब्ध हो जाए उसी से जीवन निर्वाह करे और हृदय में किसी प्रकार का विकार नहीं आने दे। सबके प्रति समभाव रखे तथा अविनाशी ब्रह्म के ज्ञान की साधना करे।

राजधर्म की प्रधानता और महत्व :– तदुपरान्त पितामह भीष्म ने राजधर्म को सभी धर्मों में प्रधान बताते हुए उसका विस्तार से वर्णन
किया। पितामह ने कहा –

अल्पाश्रयानल्पफलान् वदन्ति
धर्मानन्यान् धर्मविदो मनुष्याः।
महाश्रयं बहुकल्याणरूपं
क्षात्रं धर्मं नेतरं प्राहुरार्याः।।
सर्वे धर्मा राजधर्मप्रधानाः
सर्वे वर्णाः पाल्यमाना भवन्ति।
सर्वस्त्यागो राजधर्मेषु राजं-
स्त्यागं धर्मं चाहुरग्र्यं पुराणम्।।
मज्जेत् त्रयी दण्डनीतौ हतायां
सर्वे धर्माः प्रक्षयेयुर्विबुद्धाः।
सर्वे धर्माश्चाश्रमाणां हताः स्युः
क्षात्रे त्यक्ते राजधर्मे पुराणे।
सर्वे त्यागा राजधर्मेषु दृष्टाः
सर्वा विद्या राजधर्मेषु चोक्ताः।
सर्वा विद्या राजधर्मेषुः युक्ताः
सर्वे लोका राजधर्मे प्रविष्टाः
यथा जीवाः प्राकृतैर्वध्यमाना
धर्मश्रुतानामुपपीडनाय।
एवं धर्मा राजधर्मैर्वियुक्ताः
संचिन्वन्तो नाद्रियन्ते स्वधर्मम्।।

अर्थात् राजधर्म ही सभी धर्मों में प्रधान है। राजधर्म के द्वारा ही सबका पालन होता है। सभी वर्ण और सभी आश्रम सहित समस्त प्रजाएं राजधर्म के द्वारा ही पालनीय हैं। इसीलिए राजधर्म को सर्वश्रेष्ठ त्याग भी कहा गया है और प्राचीन धर्म भी यही है। दण्डनीति के नष्ट हो जाने पर वेदों का भी विलोप हो जाता है और समाज से धर्म नष्ट हो जाता है। समस्त दीक्षायें और समस्त त्याग राजधर्म में ही प्रतिष्ठित हैं और समस्त लोक तथा समस्त विद्याएँ भी राजधर्म से सुरक्षित हैं। राजपुरुष यदि राजधर्म से रहित हो जाएँ तो वे दस्युओं के उत्पात से समाज की रक्षा नहीं कर पाते और तब समाज उसी प्रकार विनष्ट हो जाता है जैसे व्याध आदि के द्वारा पशु-पक्षी आदि जीवों का सम्पूर्ण विनाश हो जाता है। इसीलिए राजधर्म सर्वश्रेष्ठ है। चारों आश्रमों और चारों वर्णों की प्रतिष्ठा राजधर्म से ही है।

इस प्रकार समाज और राज्य का सम्बन्ध स्पष्ट है। धर्म का ज्ञान समाज में है। वह ज्ञान परंपरा से चला आया है। उस ज्ञान का प्रतिपादन वेद और धर्मशास्त्र करते हैं तथा शिष्टजन उसे जीवन में चरितार्थ करते हैं। इन सबकी रक्षा करना ही राजधर्म है। इस प्रकार राज्य समाज के धर्म का रक्षक है। वह धर्म का विधायक या सर्जक नहीं है। स्वयं धर्म का विधान करने वाला या उसका सृजन करने वाला राज्य धर्मविरोधी है, अधर्मी है। राज्य का कार्य धर्म का विधान करना या धर्म की सृष्टि करना नहीं है। उसका कार्य केवल धर्म की रक्षा करना है। यही समाज का और राज्य का संबंध है। **(क्रमशः)**

ए-142, आकृति हाईलैण्ड
डाकघर-फंदा, भोपाल-462036 (म.प्र.)
मो.-8349350267

होलिकोत्सव में नृत्य प्रस्तुति

आपकी आवश्यक सेवा क्या होगी

मूल – ओपरा गेल विन्फ्रे
अनु. – विभा खरे

शिक्षा – एम.एच.एस.सी., एम.ए.।
रचनाएँ –पत्र-पत्रिकाओं में लेखन।
विशेष – अनुवाद में विशेष कार्य।

(ओपरा का 2020 की कक्षा का आरंभिक भाषण) (जन्म 29 जनवरी, 1954),एक अमेरिकी टॉक शो होस्ट, टेलीविजन निर्माता, अभिनेत्री, लेखक और मीडिया मालिक हैं। वह शिकागो से प्रसारित अपने टॉक शो, द ओपरा विन्फ्रे शो के लिए सबसे ज्यादा जानी जाती हैं, जो (1986 से 2011) 25 वर्षों तक उनका यह शो राष्ट्रीय सिंडिकेशन में चला। उन्हें 'ऑल मीडिया क्वीन' कहा जाता है, वह 20वीं सदी की सबसे अमीर अफ्रीकी-अमेरिकी महिला थीं और एक समय दुनिया की एकमात्र अश्वेत अरबपति थीं। 2007 तक, उन्हें दुनिया की सबसे प्रभावशाली महिला के रूप में स्थान दिया गया था। उपरोक्त भाषण कोरोना काल में फेसबुक और इंस्टाग्राम द्वारा आयोजित 'ग्रेजुएशन 2020 सेलिब्रेट द क्लास ऑफ 2020' का भाग है। यह कार्यक्रम एक वर्चुअल ईवेंट था जहाँ स्नातकों को इस महत्त्वपूर्ण अवसर को ठीक से मनाने के लिए आमंत्रित किया गया था।)

निश्चित रूप से यह वह स्नातक समारोह नहीं है जिसकी आपने कल्पना की थी, भले ही हमारी परिस्थितियों के कारण समारोह में धूमधाम न हो, लेकिन भविष्य में कदम रखने के लिए कभी भी स्नातक कक्षा को इससे अधिक उद्देश्य, दृष्टि, जुनून और ऊर्जा और आशा के साथ नहीं बुलाया गया है। यह स्वीकार करते हुए कि आगे बढ़ने का कोई आसान रास्ता नहीं है और आगे बहुत अनिश्चितता है, उन्होंने हमें याद दिलाया कि 'सभी प्रश्नों के जवाब न होना भी सामान्य है।

यह इंगित करते हुए कि महामारी ने भारी असमानताओं को उजागर किया है, उन्होंने 2020 के वर्ग को चुनौती दी कि वे अपनी शक्ति, अपनी आवाज़ और अपने वोट का उपयोग करके समाज को एक नई और बेहतर सामान्य स्थिति खोजने में मदद करें क्योंकि हम COVID-19 से उभर रहे हैं। 'आपने जो सीखा है उसका सर्वोत्तम उपयोग अपने दिमाग में और अपने दिल में महसूस करके, हमारे दुखों को ठीक करने के लिए अपनी शिक्षा का उपयोग करें।'

और ऐसे समय में जहाँ शिक्षकों, स्वास्थ्य देखभाल पेशेवरों, डिलीवरी ड्राइवरों, भोजन प्रदाताओं और अन्य लोगों का आवश्यक कार्य हम सभी को जीवित रख रहा है, उन्होंने कुछ रुक कर स्नातकों से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा–'आपकी आवश्यक सेवा क्या होगी?'

'मुझे पता है कि शायद आपको ऐसा महसूस नहीं हो रहा होगा, लेकिन आप वास्तव में ऐसे समय (कोरोना काल) के लिए चुने गए विशेष छात्र हैं–2020 की कक्षा। आप एक संगठित कक्षा हैं– महामारी स्नातक कक्षा, जिसमें पूरी दुनिया आपके साथ स्नातक होने का प्रयास कर रही है (सभी इस कोरोना काल में स्नातक होने का प्रयास कर रहे हैं जहाँ हमने बहुत कुछ नया सीखा।

बेशक यह वह स्नातक समारोह नहीं है जिसकी आपने कल्पना की थी आप मंच पर चलने का सपना देख रहे हैं, आपका परिवार और दोस्त आपका उत्साह बढ़ा रहे हैं, टोपियाँ खुशी से हवा में लहरा रही हैं। लेकिन भले ही हमारी वर्तमान परिस्थितियों के कारण धूमधाम न हो, लेकिन कभी भी किसी स्नातक कक्षा को इससे अधिक उद्देश्य, दृष्टि, जुनून और ऊर्जा और आशा के साथ भविष्य में कदम रखने के लिए नहीं बुलाया गया है। आपका स्नातक समारोह दुनिया के फेसबुक मंच पर कई दिग्गजों के साथ जश्न मना कर संपन्न हो रहा है। मैं उनके साथ जुड़कर और आपका अभिनन्दन करके सम्मानित महसूस कर रही हूँ।

ग्रेजुएट शब्द लैटिन के ग्रैडस से आया है, जिसका अर्थ है 'किसी चीज़ की ओर एक कदम।' 15वीं सदी की शुरुआत में, 'स्नातक' एक शब्द था जिसका उपयोग रसायनशास्त्र में 'टेंपरिंग या शोधन' के लिए किया जाता था। हममें से प्रत्येक को अब स्नातक होने के लिए अर्थात् किसी चीज़ की ओर कदम बढ़ाने के लिए बुलाया जा रहा है– भले ही हम नहीं जानते कि वह क्या है? हममें से हर किसी को अब अपने आप के उन हिस्सों पर टेंपरिंग की आवश्यकता है, जिन्हें दूर किया जाना चाहिए, यह परिष्कृत करने के लिए कि हम कौन हैं?, हम सफलता को कैसे परिभाषित करते हैं?, और वास्तव में क्या हमारे लिए अर्थपूर्ण है? और आप–आज के असली स्नातक–आप हमारा नेतृत्व करेंगे। टेंपरिंग एक अंग्रेजी शब्द है जिसका प्रयोग लोहे को मजबूत बनाने के लिए गर्म करने और फिर उसे पीटने की प्रक्रिया के लिए किया जाता है। ऐसा करने से भंगुर लोहा एक मजबूत तलवार या किसी अन्य उपकरण में परिवर्तित किया जा सकता है।

काश मैं आपको बता पाती कि मुझे आगे का रास्ता पता है। मैं नहीं बता पाऊँगी। आगे बहुत अनिश्चितता है। सच तो यह है कि यह अनिश्चितता हमेशा से रही है। मैं जो जानती हूँ वह यह है कि यही मूल्य, धैर्य और दृढ़ संकल्प (और मुझे पता है कि आप दृढ़ हैं, यही कारण है कि हम आज आपके डिप्लोमा का जश्न मना रहे हैं) यही साहस और कल्पना जिसने आपको इस क्षण तक पहुँचाया है–ये सभी वही चीज़ें हैं जो आने वाली हर परिस्थिति में आपको सहारा देंगी।

यह महत्त्वपूर्ण है कि आप सीखें, और हम सभी सीखें, शांति से रहना सीखें, तब भी जब हम अज्ञात में कदम रखने की असुविधा के साथ हों। सभी प्रश्नों के उत्तर न होना वास्तव में ठीक है। उत्तर निश्चित रूप से आएँगे–यदि आप स्थिर होने के लिए 'नहीं जानने' को लम्बे समय तक स्वीकार कर सकते हैं, और नए विचारों को आपके अधिक शांत, गहरे, सच्चे स्व में जड़ें जमाने के लिए आपको पर्याप्त समय तक स्थिर रहना होगा। दुनिया का शोर तुम्हारी आवाज़ को दबा देता है; आपको उसे सुनने के लिए स्थिर होना होगा।

तो क्या आप इस अव्यवस्था की स्थिति का सदुउपयोग कर सकते हैं जो COVID–19 ने उत्पन्न किया है? क्या आप इसे एक बिन बुलाए मेहमान के रूप में मान सकते हैं जो हमारे रहने के तरीके को फिर से व्यवस्थित करने के लिए हमारे बीच आया है? क्या आप, 2020 की कक्षा, हमें यह नहीं दिखा सकते कि टूटे टुकड़ों को फिर से एक साथ कैसे जमाया जाए, बल्कि एक नया और अधिक विकसित सामान्य कैसे बनाया जाए, एक अधिक संपूर्ण न्यायपूर्ण, दयालु, सुंदर, कोमल, चमकदार, रचनात्मक दुनिया कैसे बनाई जाए?

हमें ऐसा करने की आवश्यकता है क्योंकि महामारी ने उन विशाल प्रणालीगत असमानताओं पर प्रकाश डाला है जिन्होंने बहुत लंबे समय से बहुत से लोगों के लिए जीवन को परिभाषित किया है। गरीब समुदायों के लिए असमानता स्वास्थ्य देखभाल तक पर्याप्त पहुँच के रूप में पहले से मौजूद है। छाया में छिपने को मजबूर अप्रवासी समुदायों के लिए असमानता छिप कर रहने के रूप में पहले से मौजूद है। जेल में बंद उन लोगों के लिए जिनमें सामाजिक दूरी बनाए रखने की क्षमता नहीं है, असमानता पहले से मौजूद स्थिति है। पूर्वाग्रह और कट्टरता के बोझ से दबे हर व्यक्ति के लिए, अमेरिकी त्वचा में रहने वाले हर काले पुरुष और महिला के लिए, जो टहलने के लिए भी जाने से डरते हैं, असमानता पहले से मौजूद स्थिति है।

आपके पास स्वस्थ स्थितियों के लिए खड़े होने, लड़ने और वोट देने की शक्ति है जो एक स्वस्थ समाज का निर्माण करेगी। यह क्षण आपके लिए निमंत्रण है कि आप अपनी शिक्षा का उपयोग हमारे दुखों को ठीक करने के लिए करें, जो आपने सीखा है उसका सर्वोत्तम उपयोग अपने दिमाग से करें और अपने दिल में महसूस करें।

इस क्षण ने हमें वह दिखाया है जो डॉ. किंग ने हमें बताने का प्रयास किया था। दशकों पहले उन्होंने समझ लिया था कि 'हम पारस्परिकता के एक अपरिहार्य नेटवर्क में फँस गए हैं, नियति के एक ही परिधान में बँधे हुए हैं।' यही उन्होंने कहा था। 'जो प्रत्यक्ष रूप से एक को प्रभावित करता है, वह सभी को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।'

यदि मानवता एक वैश्विक शरीर है, तो प्रत्येक आत्मा उस शरीर में एक कोशिका है। और हमें खुद को मन, शरीर और आत्मा से स्वस्थ रखकर वैश्विक शरीर को स्वस्थ रखने की चुनौती दी जा रही है, जैसी की पहले कभी नहीं दी गई। जैसा कि सभी परंपराएँ पुष्टि करती हैं, स्वयं की सबसे गहरी देखभाल मानव परिवार की देखभाल करना है।

हम इसे आवश्यक कार्यों के श्रमिकों के साथ स्पष्ट रूप से देखते हैं। देखो कौन जरूरी निकला! शिक्षक–आपके शिक्षक!–बेशक स्वास्थ्यकर्मी, किराने का सामान रखने वाले लोग, खजांची, ट्रक चालक, भोजन प्रदाता, वे जो आपके दादा–दादी की देखभाल कर रहे हैं, वे जो उन जगहों की सफाई करते हैं जहाँ हम काम करते हैं, फिर खरीदारी करते हैं और अपना जीवनयापन करते हैं। हम सभी यहाँ हैं क्योंकि वे, बड़े जोखिम के बावजूद, अभी भी अपनी आवश्यक सेवा प्रदान कर रहे हैं।

आपकी आवश्यक सेवा क्या होगी?

आपके लिए वास्तव में क्या मायने रखता है? तथ्य यह है कि आप जीवित हैं इसका मतलब है कि आपको उस प्रश्न के बारे में गहराई से सोचने की छूट दी गई है। आप अपनी, अपने समुदाय और दुनिया की सेवा में जो मायने रखता है उसका उपयोग कैसे करेंगे? मेरे लिए यह हमेशा बातें करना और कहानियाँ साझा करना रहा है। आपके लिए—यह आपको खोजना है।

मेरी आशा है कि आप अपनी शिक्षा, अपनी रचनात्मकता, अपनी वीरता, अपनी आवाज, अपने वोट का उपयोग करेंगे–जो कुछ भी आपने देखा है और जिसके लिए आप भूखे हैं, जिसे आप सच जानते हैं–उसका और अधिक समानता, और अधिक न्याय, और दुनिया में अधिक आनंद लाने के लिए इसका उपयोग करेंगे।

2020 की कक्षा, वह कक्षा बनना जिसने आगे बढ़ने का एक नया रास्ता शुरू किया।

एच.आई.जी., 72,
हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, बागमुगलिया,
एक्सटेंशन, भोपाल–462043 (म.प्र.)
मो.– 9425079134

भारतीय ज्ञान परम्परा का प्राण-अध्यात्म

-रघुनंदन शर्मा

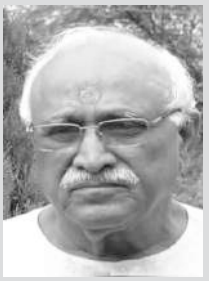

वरिष्ठ साहित्यकार, राजनीतिक विचारक, आध्यात्मिक चिंतक एवं शिक्षाविद पूर्व सांसद, कार्याध्यक्ष, तुलसी मानस प्रतिष्ठान।

भारतीय ज्ञान परंपरा उतनी ही पुरातन है जितनी की यह मानवीय सृष्टि। धरती पर मानव के जन्म के साथ ही उसमें ज्ञान का आर्विभाव हुआ है। प्राणी मात्र में सभी प्रवृत्तियाँ पशु के समान हैं, केवल मनुष्य में ही एकमात्र ज्ञान अधिक है। हमारे ऋषि इस बारे में कहते हैं कि

आहार, निद्रा, भय, मैथुनं, च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
ज्ञानशे एकोमधिको विशेषः धर्मेणहीनाः पशुर्भिसमानाः।।

अर्थात् प्राणी मात्र में निद्रा, भय और मैथुन यह मनुष्य और पशु में समान रूप से विद्यमान है। केवल विशेष रूप में ज्ञान ही मनुष्य में पशु से अधिक गुण के रूप में दिया गया है। यदि किसी मानव में ज्ञान नहीं है तो वह पशु के समान ही है।

सौभाग्य से भारत वर्ष ही एक ऐसी धरा है जिसमें मानव सभ्यता मानव के जन्म के साथ ही विकसित हुई तथा ज्ञानार्जन की अविरल धारा बह निकली। इसी ज्ञान निरन्तर प्रवाहित धारा को समृद्ध करने वाला अमर साहित्य, वेदों के रूप में हमें प्राप्त हुआ, उपनिषद् प्राप्त हुए। और उसके पश्चात् अनेक पुराण, रामायण, महाभारत तथा अन्यान्य विद्वानों द्वारा रचित सहस्त्रों ग्रन्थ एवं शास्त्रों ने ज्ञान परम्परा का अक्षय कोष भारत को प्रदान किया है। क्योंकि 'भा' का अर्थ है ज्ञान और 'रत' अर्थात् लगा हुआ। जो निरंतर ज्ञान में लगा हुआ है ऐसा आध्यात्मिक देश भारत है।

हमारे देश में भारतीय ज्ञान परंपरा अनादि है, सनातन है इसे पुरातन कहना उचित नहीं होगा। क्योंकि यह अक्षय एवं अनंत ज्ञान सरिता है, निर्झर है जिसे हिमालय से लेकर समुद्र पर्यन्त विस्तृत भूमि में सदैव ज्ञान संग्रह करने वाले चिंतक, विचारक, दार्शनिक एवं अध्यात्मिक महापुरुष, ज्ञान धारा के रूप में सतत् प्रवाहित करते रहे हैं। इसलिए भारत ज्ञान का अक्षय कोष है। भारतीय ज्ञान परंपरा ने आरंभ से ईर्ष्या, द्वेष, कलह, कटुता, क्लेष, घृणा आदि मानवीय अवगुणों पर विजय प्राप्त करने के लिये मानव मात्र को प्रेरित किया है। भारतीय ज्ञान, विश्व में परम शांति की स्थापना करते हुए कहता है-

ऊँ द्यौ शान्तिरन्तरिक्षः शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापःशान्तिः रोषधयःशान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्ति ब्रह्म शान्तिः सर्वः धुम्शान्ति।
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि सर्वरिष्ठाः सुशान्तिः भवतुः।
ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

अर्थात् भारतीय ज्ञान उद्घोष करता है कि इस अनंत आकाश अर्थात् अन्तरिक्ष में सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र सभी में शान्ति स्थापित हो। पृथ्वी में शान्ति बनी रहे। जल और वायु भी शांत रहे। औषधियाँ और वनस्पतियाँ भी शांति से युक्त हो। विश्व के समस्त देवता ब्रह्म सहित अर्थात् प्राणी मात्र शान्ति प्राप्त करें। यह शान्ति अनंत एवं चिरंतन शान्ति बनी रहे। किसी भी प्रकार के अरिष्ट शान्ति को भंग न कर पाये। भारतीय चिंतन एवं दर्शन ने विश्व के सभी धर्मों, विचारकों तथा चिन्तकों, दार्शनिकों को इतना पीछे छोड़ दिया है कि उन्हें भारतीय चिन्तन के दर्शन की समता प्राप्त करने के लिये लाखों वर्ष भी कम पड़ेंगे।

हमारा उपनिषद कहता है कि -

ऊँ ईषा वास्यामिद्रम सर्वं यत्किजच जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञ्जजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।

अर्थात् संसार में जो कुछ भी जड़ चेतन विद्यमान है वे सब ईश्वर के द्वारा बनाए गए हैं। तथा ईश्वर के द्वारा ही आच्छादित है। उन्हें तू त्याग भाव से ग्रहण करके अपने जीवन का पालन कर! किसी के धन की इच्छा न कर! अपने उपयोग के अलावा बचा हुआ धन अभावग्रस्त लोगों को अर्पण कर! ऐसा त्याग, समर्पण तथा सबको बाँटने के उदात्त विचारों का उदाहरण किसी भी देश, धर्म या समाज की परंपरा में नहीं मिलता है।

ऋषि आगे कहते हैं कि -

ऊँ सहना ववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यम् करवांवहै।
तेजस्विना वधीत मस्तु मा विदविषावहै।।

अर्थात् परमात्मा आचार्य एवं शिष्य के सहित मनुष्य मात्र की एक साथ रक्षा करें! सब साथ-साथ रहें! सभी अपने सामर्थ्य अनुसार साथ-साथ विद्या एवं ज्ञान प्राप्त करें! हम सब तेजस्वी हों! किसी से कोई ईर्ष्या न हो! तीनों प्रकार के ताप की शान्ति हो।

इसी प्रकार शास्त्र में ऋषि उद्घोष करता है –

अयम् निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानाम् तू वसुधैवकुटुम्बकम्।।

इसका अर्थ है कि यह मेरा है, यह पराया है, इस प्रकार की छोटी सोच मनुष्य में उत्पन्न नहीं होना चाहिए। मानव मात्र को अपना जीवन एवं चरित्र अत्यंत उदार प्रस्तुत करना चाहिए मानों पूरी पृथ्वी ही हमारा परिवार हो। इसमें रहने वाला प्रत्येक प्राणी अपने परिवार का सदस्य हो यह हरेक में अत्यंत व्यापक भाव से व्याप्त हो।

इस संदर्भ में हमारे धर्मशास्त्रों में अध्यात्म की शिक्षा के महत्व और आवश्यकता के सम्बन्ध में वर्णन आया है कि हमारी ज्ञान परम्परा का एक विशिष्ट पक्ष यह है कि हमारे दो प्रमुख अवतारों में भगवान श्रीराम ने अपने चारों भाईयों के साथ गुरु वशिष्ठ के गुरुकुल में आवासीय रूप में रहकर अल्प काल में ही सभी प्रकार की विद्या प्राप्त की तो द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण ने उज्जैन में सान्दीपनि आश्रम में ज्ञान प्राप्त किया। तथा उन्होंने 64 कलाओं की विद्या का अर्जन भी किया। वर्तमान युग में विश्व प्रसिद्ध विचारक विद्वान पूज्य विवेकानंद जी ने अपने गुरुदेव श्री रामकृष्ण परमहंस जी से ज्ञान प्राप्त किया। तब उन्होंने ज्ञान के साथ विज्ञान के विषयों को भी पढ़ा और समझा था। ये सभी युवा थे। इन्होंने व्यावहारिक शिक्षा के साथ गुरु दीक्षा भी ली। यही कारण है कि ये न केवल स्वयं के परिवार, समाज बल्कि विश्व के तारनहार बने। तब अध्यात्म की आवश्यकता एवं महत्व तो स्वयं सिद्ध है। इससे स्पष्ट है कि अध्यात्म से मनुष्य के जीवन में जहाँ पावनता, विचारभाव व संस्कार समाहित हो जाते हैं। तब समाज में नैतिकता बढ़ जाती है। लोग संयमित जीवनशैली जीते हैं जिसका प्रभाव न केवल मनुष्य बल्कि समस्त जीव जन्तु सुखी हो जाते हैं। रामराज्य की स्थापना के बाद का वर्णन यही कहता है। अत: अध्यात्म का प्रकृति और विज्ञान से भी गहरा सम्बन्ध है। यही कारण है कि भारतीय ज्ञान परम्परा को सर्वश्रेष्ठ माना गया है तथा अज्ञान को सबसे बड़ा शत्रु माना गया है। इसलिए हम यदि विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा में अध्यात्म विषय को अनिवार्य करते हैं तो जीवन के कुरूक्षेत्र में किसी अभिमन्यु की पराजय नहीं हो सकती है। इसके विपरीत आज संसार में अज्ञान और इसके प्रभाव से युवाओं में हताशा और निराशा दिखाई दे रही है इसके लिए अध्यात्म की शिक्षा ही एकमात्र रामबाण औषधि है जिसे पाठ्यक्रम में एक विषय के रूप में माध्यम से आध्यात्मिक ज्ञान के माध्यम से युवाओं की आत्मिक शक्ति का विकास करा सकते हैं। पर इसके लिए हमें समझना आवश्यक है कि अध्यात्म क्या है? और शिक्षा से उसका कितना अंतर्सम्बन्ध है। अध्यात्म का अर्थ है, सर्वव्यापक परमसत्ता सम्बन्धी विचार आत्मा से परमात्मा का सम्बन्ध है? इससे यह भी ज्ञात होता है कि हम सभी संपूर्ण जड़ चेतन अविनाशी सनातन और परमसत्ता का ही अंश है।

अत: इस दृष्टि से जहाँ अध्यात्म हमें आत्मा-परमात्मा का बोध कराता है तो विद्यार्थी जीवन से ही हमें वसुधैव कुटुम्बकम् की कल्याणकारी भावना का ज्ञान हो जाता है। हमारे प्राचीन गुरुकुलों में भी इसी प्रकार की श्रेष्ठ शिक्षा पद्धति विद्यार्थी को दी जाती थी किन्तु आधुनिक शिक्षा पद्धति के माध्यम से विज्ञान के नाम पर अध्यात्म को अलग करके पिछले सत्तर वर्षों में जो ज्ञान हमारे विद्यार्थियों को विश्वविद्यालयों के माध्यम से दिया गया है। उसके परिणाम स्वरूप जहाँ भौतिक विकास और सम्पन्नता तो हमने प्राप्त कर ली है, लेकिन अध्यात्म ज्ञान के अभाव में हम नैतिकता, आत्मबल एवं चारित्रिक दृष्टि से कमजोर होते गए। हम ही क्यों, इसी ज्ञान के अभाव में संपूर्ण विश्व में अन्याय, अराजकता, भय और हिंसा व्याप्त है। दूसरे असंयमित जीवन शैली के कारण प्राकृतिक प्रकोपों से उत्पन्न स्थितियाँ भी भयावह होती जा रही हैं ऐसे समय में अब वैज्ञानिक भी स्वीकारने लगे हैं कि वर्तमान प्राकृतिक असंतुलन के पीछे हमारी असंयमित जीवन शैली ही है। अब तो यह भी स्पष्ट होता जा रहा है कि भौतिक विकास से उत्पन्न परिस्थितियों के दुष्प्रभाव, जब संपूर्ण विश्व की विकास गति के चक्र को बाधित करने लगा है तब विश्व को भारत के अध्यात्म ज्ञान की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है। कोरानाकाल में तो वायुयान, रेलगाड़ियाँ, उद्योग, आवागमन के साधन जैसे रुक गए थे लेकिन उस समय प्रकृति में प्रदूषण के कम हो जाने से उसकी प्रसन्नता भी प्रकट हो रही थी। तब भौतिक विकास के पक्षधर, अंधानुकरण विश्व के राष्ट्राध्यक्षों को हमने 'श्री हत हुए हारि जब राजा' के रूप में देखा था। पूरा पश्चिम असहाय नजर आ रहा था। ऐसी स्थितियों की तुलनात्मक दृष्टि से तब भी भारत न केवल सुदृढ़ रहा बल्कि विश्व की मदद भी हमने की। तब हमारी भारतीय ज्ञान परम्परा की समृद्धता हम सबकी रक्षाकवच बनी ही है। जिसके कारण हम विश्वगुरु के रूप में जाने जाते थे। जिसे आत्मघाती, भस्मासुरी प्रवृत्तियों ने शिक्षा प्रणाली से अध्यात्म को अलग कर के हमें पुरातन से पृथक करने की भरपूर कोशिश भी की। राजनैतिक षड्यंत्रों के चलते एक सुनियोजित षड्यंत्र से धर्म निरपेक्षता के नाम पर हमारी ज्ञान परम्परा पर आवरण डालने के लिये विश्वविद्यालयों में भौतिक ज्ञान को विशेष महत्व दिया गया। जो जीवन के लिए एक भाग के रूप में तो आवश्यक भी है। लेकिन भारतीय चिन्तन से उद्भुत अध्यात्म ज्ञान और विज्ञान सृष्टि का सर्वोच्च विज्ञान है तथा यह संपूर्ण

मानवता के कल्याण की बात कहता है उसे हमने आवरण में लपेट कर पोथियों में बदल दिया। इससे युवा पीढ़ी में यह संदेश चला गया कि यह तो केवल जीवन की अंतिम अवस्था में मोक्ष के लिए आवश्यक है। जबकि अध्यात्म बुजुर्गों से ज्यादा युवाओं के लिए पल -प्रतिपल उपयोगी है। इसके अन्तर्गत लोक-परलोक मोक्ष के पूर्व मानव शरीर में स्थित इन्द्रियों के संयम-नियम के साथ निरोगता के सूत्र निहित हैं। इसी बात का समर्थन करते हुए श्रीभरत अयोध्याकाण्ड में भरी सभा में यह संकेत देते हुए कहते हैं 'सरूज शरीर बादि बहु भोगा' अर्थात् जैसे रोगी शरीर के लिए भोग व्यर्थ हो जाया करते हैं तब भौतिक ज्ञान से उत्पन्न सम्पन्नता और समृद्धता का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के माध्यम से युवाओं को अध्यात्म ज्ञान देकर उनके जीवन में वास्तविक आनंद या परमानंद की अनुभूति करायी जा सकती है। वहीं ऐसा विद्यार्थी न केवल स्वयं बल्कि अपना परिवार, समाज और राष्ट्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक अभ्युथान में भी अपनी सक्रिय भूमिका निभा सकता है।

अब हम विज्ञान और अध्यात्म को तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो स्पष्ट होता है कि दोनों जहाँ एक-दूसरे के पूरक है वहीं एक के बिना दूसरे का अस्तित्व प्रभावी नहीं हो सकता है। जैसे शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए वैज्ञानिक उपायों की आवश्यकता होती है क्योंकि हम जहाँ अपने भौतिक ज्ञान के आधार पर शारीरिक रोगों का तो पता लगाकर इन्हें चिकित्सा के माध्यम से दूर कर लेते हैं, वहीं अध्यात्म कहता है कि मानसिक रोगों की चिकित्सा भौतिक दृष्टि से संभव ही नहीं है। दूसरे जो मानसिक रोग सभी में होते हैं बाकी मानसिक रोगी स्वयं को रोगी ही नहीं मानता है क्योंकि बिना अध्यात्म के इन मानसिक रोगों को समझा नहीं जा सकता है। श्रीरामचरितमानस में वर्णन आया है 'हहिं सबके लखि बिरलेन्ह पाए' इससे स्पष्ट है कि जहाँ शारीरिक व्याधियाँ का तो उपचार है लेकिन मानसिक व्याधियाँ तो सभी में हैं फिर इनके उपचार की क्या व्यवस्था है। इस संदर्भ में भारतीय ज्ञान परम्परा ही पूरे विश्व में सबसे समृद्ध है। हमारे ऋषि-मुनियों ने इस दिशा में बहुत अनुसंधान कर एक संयमित जीवनशैली विकसित की है तब अध्यात्म हमें मन के रोगों को देखने की दृष्टि प्रदान करता है तथा उन्हें दूर करने में भी सहायक है ताकि हम सब मनसा, वाचा, कर्मणा, निरोग, देह लेकर स्वस्थता का अनुभव कर सके। किन्तु मन को स्वस्थ रखने में ये भौतिक उपाय किसी भी तरह से प्रभावी नहीं हो सकते है। मन को तो अध्यात्म ही नियंत्रित व संतुलित बनाये रख सकता हैं। पूज्य पंडित युगतुलसी रामकिंकर उपाध्याय जी के 'मानस रोग विवेचन' में भी यही लिखा है। अत: यह स्पष्ट है कि स्नातक पाठ्यक्रम में अध्यात्म की शिक्षा धार्मिक दृष्टि से नहीं भौतिक दृष्टि से भी उपयोगी है। यहाँ इसकी उपयोगिता एवं आवश्यकता इसलिए आवश्यक है कि चिकित्साशास्त्र में तो तन की चिकित्सा का ज्ञान होने से कुछ ही चिकित्सकों की आवश्यकता होती है। पर मन की चिकित्सा के लिए तो अध्यात्म विज्ञान सभी को मानसिक रोगों से सहज ही बिना खर्च के मुक्त कराता है। हमारे धर्मशास्त्रों में तो यह बार-बार संदेश दिया गया है। इसके महत्व के संदर्भ में पश्चिम के प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्बर्ट आईंस्टीन ने भी एक बार कहा था आपने भौतिक ज्ञान के आधार पर बड़े-बड़े अनुसंधान और खोजें की हैं पर क्या अभी कोई खोज अधूरी है? तो आईंस्टीन ने उत्तर में कहा था जो मूल शक्ति है, ऊर्जा है जिसके द्वारा मैंने अनुसंधान किया है, अभी उसी शक्ति की खोज करना बाकी है जो सबमें व्याप्त है। मुझे इसके लिए भारत में जन्म लेना पड़ेगा। उनका यह संदेश उनकी पुस्तक साइंस फिलासफी एण्ड रिवीजन में लिखा है। अत: पाठ्यक्रम में सभी विद्यार्थियों को समान रूप से अध्यात्म ज्ञान की आवश्यकता है इसे केवल विविध विषयों की श्रेणी में न रखकर सभी को विशिष्ट विषय के रूप में अध्यात्म ज्ञान देने का यह प्रयास सभी के लिए परम हितकारी सिद्ध होगा।

भारतीय ज्ञान परम्परा से उद्भूत अध्यात्म की आवश्यकता इसलिए भी है कि जिनके जीवन में अध्यात्म उतर गया ऐसे व्यक्ति की दृष्टि बदल जाती है। आत्मदर्शन, आत्मानुभूति मानव जीवन की श्रेष्ठ प्राप्तियाँ है। यह सत्य है कि हम सबके जीवन में भौतिक साधन सामग्री की आवश्यकता होती है। हम उसकी उपेक्षा भी नहीं कर सकते हैं परन्तु अध्यात्म ज्ञान बताता है कि ये सब जीवन का परम लक्ष्य नहीं है। यहाँ वैराग्य का अर्थ संसार से विरक्त हो जाना नहीं है लेकिन हमारी प्रीति आसक्ति में न बदले, यह भी आवश्यक है। जो संसार के हित में है अत: काम, क्रोध और लोभ पर नियंत्रण की आवश्यकता है। युवाओं को इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है। इसका प्रभाव हम सबके सामाजिक जीवन पर भी पड़ता है जैसे काम के अनियंत्रण से बढ़ती अश्लीलता, क्रोध से हिंसा, भय, आंतक लोभ से भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ जन्म लेती हैं। भगवद्गीता में इसलिए काम को सर्वभक्षी पापी कहा गया है।

'काम एष क्रोध एष रजो गुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्धयेन मिह वैरिणम्।।

अर्थात् असंयमित काम (रजोगुण के सम्पर्क से) बाद में क्रोध का रूप धारण करता है और जो इस संसार का सर्वभक्षी पापी शत्रु है।

दूसरे शारीरिक दृष्टि से भी अध्यात्म से ही आहार की शुचिता का बोध होता है। रहन-सहन एवं जीवन में शुद्धता भी आती है। तन की पवित्रता के साथ मन की पवित्रता बढ़ती है। मनुष्य में ज्ञान के साथ

विवेक भी जाग्रत हो जाता है अत: स्पष्ट है कि सच्चे विकास के लिए न केवल हमें बल्कि संपूर्ण विश्व को आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता है।

ऐसे अध्यात्म ज्ञान की शिक्षा को स्नातक पाठ्यक्रम से सभी को अनिवार्य कर देने से युवा पीढ़ी को संतुष्टि मिलेगी। इसके लिए हमारे शास्त्रों में संपूर्ण ज्ञान संपदा समायी हुई है। समाज को यह अध्यात्म संपदा का ज्ञान भाष्यकारों प्रवचनकारों के द्वारा उपलब्ध होती रही है, किन्तु इन संत्सग आयोजनों में वृद्धों की उपस्थिति अधिक रहने से युवी पीढ़ी वंचित रह जाती है। इसलिए हमारे धार्मिक आयोजन युवाओं को आध्यात्मिक ज्ञान देने में उतने सफल नहीं हैं जितने होने चाहिए। उच्चशिक्षा में अध्यात्म जैसे विषय शामिल होने से यह कमी दूर होगी। इसी संदर्भ में अतीत के गुरुकुलों में दी जाने वाली शिक्षा मात्र कर्मकाण्ड नहीं थी। बल्कि हमारे प्रतिदिन का शुभांरभ तो सभी को निरोगी और सुखी होने की कामना के साथ होता था। अत: आज बदलते परिवेश में नई पीढ़ी को सुखी संपन्न जीवन के लिए हम प्राचीनता के उस पक्ष से भी अवगत करा सके जो आधुनिक और वैज्ञानिक मान्यताओं से कहीं कम नहीं है। वर्तमान समय की यही माँग है। आज विश्व की निगाहें इसी कारण हमारी ओर लगी हुई है। योग विद्या से इसकी विश्वव्यापी शुरुआत हो चुकी है। किन्तु 'पर उपदेस कुसल बहुतेरे' के रूप में सबसे पहिले हमें अपनी ज्ञान परम्परा को महत्व देना है और इसके लिए शालेय शिक्षा से इसकी शुरुआत कर हम विश्वविद्यालीयन शिक्षा पाठ्यक्रम में अध्यात्म को सम्मिलित करके अपनी इस कमी को दूर करना होगा। हमें स्वयं समझना और समझाना होगा कि भारतीय ज्ञान परंपरा की सुसभ्य चिन्तन व आचरण की सभी सीमाओं को तोड़कर जब असीम हो जाती है। तब यह ऋषि ज्ञान बोल उठता है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित दुःखभाग्भवेत्।।

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी निरोगी रहे, मनुष्य मात्र स्वस्थ तथा सर्वगुण संपन्न अर्थात् भद्र दिखाई दे। किसी भी प्रकार का कोई दुख किसी को भी उत्पन्न न हो। विश्व में लोक कल्याण की ऐसी उच्चतम भावना केवल भारतीय ज्ञान परंपरा भारत में ही उत्पन्न कर सकती है। इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा में दीक्षित सनातनी बोल उठता है–

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो।
प्राणियों में सद्भावना हो और विश्व का कल्याण हो।

'शांतिकुंज' ई.-8/18, अरेरा कालोनी
दाना पानी रेस्टोरेन्ट के पास
भोपाल-462039 (म.प्र.)

रचनाकारों से अनुरोध

- *मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।*
- *रचना फुल स्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित मूल प्रति में भेजें।*
- *रचनाकार/लेखक अपना पूरा परिचय, पता, पिनकोड, फोन नंबर एवं फोटो साथ भेजें।*
- *डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचना वापस भेजी जा सकती है। अत: लेखकों से निवेदन है कि लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।*
- *'अक्षरा' में प्रकाशन हेतु रचना भेजने के बाद उसे अन्यत्र प्रकाशन हेतु न भेजें। यदि अन्यत्र प्रकाशित हो रही हो तो कार्यालय को अवश्य सूचित करें।*
- *आप अपनी रचनाएँ* **myakshara18@gmail.com** *पर ई-मेल द्वारा भी भेज सकते हैं।*

महाकवियों के राम

- करुणाशंकर उपाध्याय

जन्म - 5 अप्रैल 1968।
जन्मस्थान - शिवगढ़, प्रतापगढ़ (उ.प्र.)।
शिक्षा - पोस्ट डॉक्टरल रिसर्च।
रचनाएँ - 25 पुस्तकें प्रकाशित एवं कतिपय संपादित।
सम्मान - महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी का बाबूराव विष्णु पराड़कर पुरस्कार सहित अनेक सम्मान।

मेरा स्पष्ट अभिमत है कि काव्य-सृजन की प्राचीनतम परंपरा भारतवर्ष से ही प्रस्तावित होती है। ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ माना जाता है। वैदिक ऋषि ही विश्व के प्रथम कवि हैं। इन्होंने ही उस काव्य वाणी के सौंदर्य का अनुसंधान किया था जो सहृदय पाठक के समक्ष अपने सौंदर्य को अभिव्यक्त कर देती है। भारतीय परंपरा में शब्द को ब्रह्म के समान माना गया है। यहाँ का संपूर्ण चिंतन वाक् केंद्रित है और उसे विश्व जननी की संज्ञा दी गई है-'वागेव विश्वाभुवनानि जज्ञे।' इस संदर्भ में आचार्य दंडी का कथन विशेष रूप से चिंतनीय है। वे कहते हैं कि-

'इदमन्धं तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।'

अर्थात् यदि शब्द नामक ज्योति संसार में प्रज्ज्वलित न होती, तो यह सारा संसार अंधकार से आच्छादित रहता।

भारतवर्ष विश्व के श्रेष्ठतम महाकवियों का देश है और राम का धीरोदात्त चरित्र स्वयं ही महाकाव्य का प्रतिरूप है। भगवान राम भारतीय अस्मिता-बोध के साकार विग्रह हैं। ये भारतीय राष्ट्र-जीवन की सरल,स्पष्ट और अद्वितीय परिभाषा हैं। इस राष्ट्र-राज्य के नायक हैं। इनके बिना भारतीय समाज की परिकल्पना ही संभव नहीं है। जब तक यह धरती और ब्रह्मांड है तब तक राम का नाम अमर और अविस्मरणीय है। ये विश्व साहित्य और इतिहास के श्रेष्ठतम चरित नायक हैं। मूल्यों एवं मर्यादाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राम के चरित्र ने इस देश की जनता में उच्चादर्शों के प्रति गहरी आस्था जगाई है। यही कारण है कि भारतवर्ष के हर महत्त्वपूर्ण कवि ने राम और उनके चरित को अपने काव्य का उपजीव्य अवश्य बनाया है। भारतवर्ष में सबसे लंबी और प्रदीर्घ परंपरा रामकाव्य परंपरा की ही है। यहाँ हम क्रमशः भारतीय महाकवियों द्वारा चित्रित राम का स्वरूप-विश्लेषण प्रस्तुत करेंगे।

1-वाल्मीकि :-जब हम भारत के श्रेष्ठतम महाकवियों की दृष्टि में राम के स्वरूप का विश्लेषण करते हैं तो हमारा ध्यान सर्वप्रथम आदिकवि वाल्मीकि की ओर जाता है। वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण और वेदव्यास कृत महाभारत ऐसे विश्व प्रसिद्ध महाकाव्य हैं जो भारतवर्ष के ही सांस्कृतिक-आध्यात्मिक और साहित्यिक व्यक्तित्व का निर्धारण करते हैं। वाल्मीकि ब्रह्मा के दसवें पुत्र प्रचेता के पुत्र थे। वे प्रकृति नटी की रमणीय गोद में पले-बढ़े थे। फलतः प्रकृति के आलंबन रूप के वे अद्भुत चित्रकार माने जाते हैं। वे प्रकृति के नाना रूपों तथा व्यापारों का मानवीय भावों की सापेक्षता में अतिशय वैविध्यपूर्ण चित्र खींचते हैं। रामायण का महत्त्व राम जैसे धीरोदात्त नायक और सीता जैसी नायिका के कारण भी है। इसमें कुल सात कांड और 24000 श्लोक हैं। भारतीय साहित्य और इतिहास में जिन सत्यनिष्ठ जीवन मूल्यों का विकास हुआ उनका मूर्तिमान विग्रह पुरुषोत्तम राम हैं। फलस्वरूप भारतीय संस्कृति का अत्यंत उदात्त, समुज्ज्वल और नैसर्गिक रूप इस महाकाव्य में चित्रांकित हुआ है। रामायण की लोकप्रियता में उसकी सहज एवं अकृत्रिम शैली, असाधारण वर्णन शक्ति तथा प्राणवान चरित्रों का भी विशेष योग है। यही कारण है कि इसकी लोकप्रियता देश-काल की सीमा को पार करके विश्वव्यापी हो गई है।

रामायण और महाभारत भारतीय समाज के भावनात्मक और बौद्धिक निर्माण में युगांतरकारी भूमिका निभाते हैं। वर्तमान नेता युग में जब राम के व्यक्तित्व की महिमा को धूमिल करने के आसुरी प्रयास हो रहे हों तथा दूसरी ओर अयोध्या में राम का विश्वस्तरीय मंदिर बनकर तैयार है तब त्रेतायुग के राम का स्वरूप-विश्लेषण समय की माँग हो जाती है। राम शब्द का शाब्दिक अर्थ है-जिसमें सब रम जाएँ अथवा जिसमें सारे देवता रमण करें या जो हर कहीं रमा हुआ है वही राम है। ऐसा अनंत रमणीय और विराट व्यक्तित्व जो जाति, पंथ, सम्प्रदाय, वर्ग आदि मानव निर्मित सीमाओं का अतिक्रमण करके चराचर जगत के कल्याण का मानक उपस्थित करता है वही राम हैं। वे भारतीय जनमानस के चिरंतन लोकनायक हैं। वे सदा-सर्वदा से भारतीय लोकमन में रमे हुए हैं। इस संदर्भ में भारतवर्ष के श्रेष्ठतम आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने ठीक ही लिखा है कि, 'राम के बिना हिन्दू जीवन नीरस है-फीका है। यही रामरस उसका स्वाद बनाए रहा और

बनाए रहेगा। राम ही का मुख देख हिन्दू जनता का इतना बड़ा भाग अपने धर्म और जाति के घेरे में पड़ा रहा। न उसे तलवार काट सकी, न धन-मान का लोभ, न उपदेशों की तड़क-भड़क।' संस्कृत के अलावा समस्त भारतीय एवं वैश्विक भाषाओं में इनके प्रभाव संदर्भ एवं प्रेरणा से अनेक ग्रंथों की रचना हुई है। जब हम महाकवियों द्वारा चित्रित राम के स्वरूप का विश्लेषण करते हैं तो हमारा ध्यान सबसे पहले आदि कवि वाल्मीकि पर जाता है। वाल्मीकि मानव मूल्यों के आदि विधाता हैं। वे ब्रह्मा के दसवें पुत्र प्रचेता की संतान थे। रामायण के आरंभ में ही आदिकवि ने दृढ़तापूर्वक प्रश्न किया है कि-'चारित्रेण च को 'युक्त' अर्थात् जीवन में चरित्र से युक्त कौन है? वाल्मीकि की जीवन दृष्टि चरित्र योग की जिज्ञासा है। वे चरित्रवान व्यक्तित्व के संधान और प्रतिष्ठा के लिए रामायण का सृजन करते हैं। मनुष्य के सारे गुण चरित्र की व्याख्या के अंतर्गत समाहित हैं। वाल्मीकि चरित्र और धर्म को समानार्थी मानते हैं। अत: वे को धर्म का साकार विग्रह बतलाते हुए लिखते हैं कि -

'रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्य पराक्रमः।
राजा सर्वस्य लोकस्य देवानाम् इव वासवः।।(3-37-1377 रामायण, बालकाण्ड।)

वाल्मीकि ने राम के 16 अलौकिक गुणों का वर्णन किया है। इन गुणों की चर्चा करते हुए वे नारद से कहते हैं कि -

'इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः।
नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान धृतिमान वशी।।8
बुद्धिमान नीतिमान् वाग्मी श्रीमान शत्रु निबर्हणः।
विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः।।9
स च सर्वगुणोपेतः कौसल्यानन्दवर्धनः ।
समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव।।'10

अर्थात् इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न हुए एक ऐसे पुरुष हैं, जो लोगों में राम-नाम से विख्यात हैं। वे ही मन को वश में रखने वाले, महाबलवानर, कान्तिमान्, धैर्यवान् और जितेन्द्रिय हैं। वे बुद्धिमान्, नीतिमान,कुशल वक्ता, शोभायमान तथा शत्रुसंहारक हैं। उनके कंधे चौड़े और भुजाएँ बड़ी-बड़ी हैं। ग्रीवा शङ्ख के समान और ठोढ़ी मांसल (पुष्ट) है। 'उनका वक्षस्थल चौड़ा तथा धनुष बड़ा है। उनके गले के नीचे की हड्डी (हँसली) माँस से छिपी हुई है। वे शत्रुओं का दमन करनेवाले हैं। उनकी भुजाएँ घुटनों तक लम्बी हैं, मस्तक सुन्दर है, ललाट भव्य और चाल मनोहर है। उनका शरीर मध्यम और सुडौल है, देह का रंग चिकना है। वे बड़े प्रतापी हैं। उनका वक्ष:स्थल भरा हुआ है और आँखें बड़ी-बड़ी हैं। वे अतिशय शोभायमान और शुभलक्षणों से सम्पन्न हैं। वे 'धर्म के ज्ञाता, सत्यप्रतिज्ञ तथा प्रजाके हित-साधन में लगे रहने वाले हैं। वे यशस्वी, ज्ञानी, पवित्र, जितेन्द्रिय और मन को एकाग्र रखने वाले हैं। प्रजापति के समान पालक, श्रीसम्पन्न, शत्रु-विध्वंसक, जीवों तथा धर्म के रक्षक हैं। स्वधर्म और स्वजनों के पालक, वेद-वेदांगों के राम तत्त्ववेत्ता तथा धनुर्वेद में प्रवीण हैं। वे अखिल शास्त्रों के तत्त्वज्ञ, स्मरणशक्ति से युक्त और प्रतिभा सम्पन्न हैं। अच्छे विचार और उदार हृदयवाले वे श्रीरामचन्द्रजी बातचीत करने में चतुर तथा समस्त लोकों के प्रिय हैं। जैसे नदियाँ समुद्र में मिलती हैं, उसी प्रकार सदा राम से साधु पुरुष मिलते रहते हैं। वे सब में समान भाव रखनेवाले हैं, उनका दर्शन सदा ही प्रिय मालूम होता है। सम्पूर्ण गुणों से युक्त वे श्रीरामचन्द्रजी अपनी माता कौसल्या के आनन्द बढ़ाने वाले हैं, गम्भीरता में समुद्र और धैर्य में हिमालय के समान हैं। वे विष्णु भगवान् के समान बलवान् हैं। उनका दर्शन चन्द्रमा के समान मनोहर प्रतीत होता है। वे क्रोध में कालाग्नि के समान और क्षमा में पृथिवी के सदृश हैं, त्याग में कुबेर और सत्य में द्वितीय धर्मराज के समान हैं।

वाल्मीकि राम को शरीरधारी धर्म की संज्ञा देते हैं और उनकी प्रशंसा में धर्मज्ञ, धर्मनिष्ठ और धर्म भृतांवर जैसे विशेषण देते हैं। उनके अनुसार चरित्रवान मनुष्य ही जीवन को मूल्यवान और आकर्षण की वस्तु बनाता है। चरित्र ही धर्म है। राम ऐसे चरित्रवान पुरुष हैं जिनका शारीरिक और नैतिक विकास रथ के दो पहियों की तरह साथ-साथ हुआ है। यह भी चिंतनीय है कि जो राम मानवीय मूल्यों के महासमुद्र हैं उनका आहार भी नितांत सात्विक होगा।

वाल्मीकि ने रामायण के अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड और सुंदरकाण्ड में राम के सात्विक आहार का चित्रण किया है। राम अयोध्याकाण्ड में कौसल्या माता से आज्ञा लेते हुए कहते हैं कि -

चतुर्दश हिंद वर्षाणि वत्स्यामि विजने वने।
कंदमूलफलैर्जीवन् हित्वा मुनिवदामिषम्। 29

अर्थात् मैं राजभोग्य वस्तु का त्याग करके मुनि की भाँति कन्द, मूल और फलों से जीवन निर्वाह करता हुआ चौदह वर्षों तक निर्जन वन में विहार करूँगा। इसी तरह अरण्यकाण्ड में शूर्पणखा अपने भाई खर-दूषण से कहती है कि,-फल और मूल ही उनका भोजन है। वे जितेन्द्रिय, तपस्वी और ब्रह्मचारी हैं। दोनों ही राजा दशरथ के पुत्र और आपस में भाई-भाई हैं। उनके नाम राम और लक्ष्मण हैं। यह भी अत्यंत विचारणीय है कि राक्षसी होकर भी शूर्पणखा जिस राम को शाकाहारी होने का प्रमाण-पत्र दे रही है उसी राम को आजकल के भ्रष्ट नेता मांसाहारी कहने का घृणित प्रयास करते हैं। शूर्पणखा कहती है कि-

'फलमूलाशनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ।
पुत्रौ दशरथस्यास्तां भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ।।'

इसी तरह सुन्दरकाण्ड में जब हनुमान माता सीता से मिलते हैं तो कहते हैं, कोई भी रघुवंशी न तो माँस खाता है और न मधु का ही

सेवन करता है, फिर भगवान राम इन वस्तुओं का सेवन क्यों करते? वे सदा चार समय उपवास करके पाँचवें समय शास्त्रविहित जंगली फल-फूल और नीवार आदि भोजन करते हैं। वाल्मीकि ने ही सर्वप्रथम राम को ब्रह्म के अवतार के रूप में प्रतिपादित किया है। रावण की मृत्यु के उपरांत राम की स्तुति करते हुए स्वयं ब्रह्मा युद्धकांड में कहते हैं कि-

'भवान नारायणो देवः श्रीमांश्चक्रायुधः प्रभुः।
एकश्रृंगो वराहस्वं भूत भव्य सपत्नजित'- (युद्धकांड 117)

अर्थात् आप चक्र धारण करने वाले सर्वशक्तिमान भगवान नारायण, आप एक सींग वाले वाराह और आप देवताओं के भूत, वर्तमान व भविष्य के शत्रुओं को जीतने वाले हैं।

इस तरह वाल्मीकि के राम धर्म की साकार प्रतिमा हैं और उनका यही संदेश है कि असत्य, अन्यान्य, अधर्म और मूल्यहीनता कितने ही शक्तिशाली क्यों न हों परन्तु उन्हें सत्य, न्याय, धर्म और मूल्य के समक्ष हारना पड़ता है। यही कारण है कि आज भी वाल्मीकि के राम संपूर्ण मनुष्यता के लिए अनुकरणीय आदर्श बने हुए हैं। उनका कालजयी व्यक्तित्व संपूर्ण मानव-जाति के लिए प्रेरणा पुंज है।

2- वेदव्यास की दृष्टि में :- महाभारत विश्व का सबसे बड़ा महाकाव्य है। ऐसा माना जाता है कि जो कुछ भी भारतवर्ष में है वह महाभारत में अवश्य मिलेगा। महाकवि वेदव्यास ने भी महाभारत के अनेक पर्वों में रामकथा और राम के गुणों का बखान किया है। व्यास ने राम का अपराजेय योद्धा और आदर्श शासक के रूप में विशेष चित्रण किया है। महाभारत के वन पर्व में अध्याय 273 से 291 तक श्री राम कथा का वर्णन है। जब द्रौपदी का अपहरण जयद्रथ के द्वारा किया जाता है और अर्जुन एवं भीम द्रौपदी को जयद्रथ के कैद से छुड़ाते हैं तब युधिष्ठिर बहुत दुखी हो जाते हैं। उन्हें लगता है कि आखिर द्रौपदी जैसे सत्य परायण और पतिव्रता स्त्री को अपने जीवन में इतने दुखों का सामना क्यों करना पड़ा। युधिष्ठिर को ये भी लगता है कि आखिर पांडव भाइयों को अपने सच्चरित्रता, सत्य परायणता और धर्म के अनुसार चलने के बाद भी वनवास और इतने दुख क्यों उठाने पड़ रहे हैं? तब मार्कण्डेय ऋषि उन्हें रामकथा सुनाकर ढाढस बँधाते हैं कि राम से बढ़कर कोई दूसरा सच्चरित्र और धर्मनिष्ठ नहीं हुआ है फिर भी, उन्हें वनवास के समय सीता हरण का दुख झेलना पड़ा। यहाँ वेदव्यास राम के शौर्य और पराक्रम का अद्भुत वर्णन करते हैं।

श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यास भगवान श्रीराम के सौंदर्य का चित्रण करते हुए द्रोण पर्व के अभिमन्यु वध नामक अध्याय में लिखते हैं कि, 'उनकी श्यामसुन्दर छबि, तरुण अवस्था और कुछ-कुछ अरुणाई लिए बड़ी-बड़ी आँखें थीं। उनकी चाल मतवाले हाथी-जैसी थी। उनकी भुजाएँ सुन्द्र और घुटनों तक लंबी थीं। उनके कंधे सिंह के समान थे। उनमें महान बल था। उनकी कान्ति समस्त प्राणियों के मन को मोह लेने वाली थी। उन्हों ने ग्यारह हजार वर्षों तक राज्य किया था। श्रीरामचन्द्र जी के राज्य शासनकाल में समस्ति प्रजाओं में 'राम, राम, राम' यही चर्चा होती थी। श्रीराम के कारण सारा जगत ही राममय हो रहा था। फिर समय अनुसार अपने और भाइयों के अंशभूत दो-दो पुत्रों द्वारा आठ प्रकार के राजवंश की स्थापना करके उन्होंने चारों वर्णों की प्रजा को अपने धाम में भेजकर स्वयं ही सदेह परम धाम को गमन किया। महाभारत में भीष्म पितामह अनेक स्थानों पर श्रीराम का नाम लेते हैं और महर्षि वेदव्यास अभिमन्यु वध से दुखी युधिष्ठिर को रामकथा सुनाते हैं। वे राम के धैर्य, साहस एवं संघर्ष का उदाहरण देते हुए युधिष्ठिर से धैर्य धारण करने का आग्रह करते हैं। राम यहाँ संघर्षशील मनुष्य के लिए आदर्श प्रतिमान बनकर आते हैं। श्रीकृष्ण भी अर्जुन को गीता का उपदेश देते हुए कहते हैं कि-

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्। अर्थात् मैं पवित्र करने वालों में वायु और शस्त्रधारियों में राम हूँ। महाभारत के अनुशासन पर्व (115/63-67) में बहुत से राजाओं की सूची है जिन्होंने तथा कई अन्य महान् राजाओं ने कभी माँस नहीं खाया था। इनमें राम का भी नाम है-

श्येनचित्रेण राजेन्द्र सोमकेन वृकेण च।
रैवते रन्तिदेवेन वसुना, सृञ्जयेन च॥63॥
एतैश्चान्यैश्च राजेन्द्र कृपेण भरतेन च।
दुष्यन्तेन करूषेण रामालर्कनरैस्तथा॥64॥
विरूपश्वेन निमिना जनकेन च धीमता।
ऐलेन पृथुना चैव वीरसेनेन चैव ह॥65॥
इक्ष्वाकुणा शम्भुना च श्वेतेन सगरेण च।
अजेन धुन्धुना चैव तथैव च सुबाहुना॥66॥
हर्यश्वेन च राजेन्द्र क्षुपेण भरतेन च।
एतैश्चान्यैश्च राजेन्द्र पुरा मांसं न भक्षितम॥67॥

श्येनचित्र, सोमक, वृक, रैवत, रन्तिदेव , वसु, सृञ्जय, अन्यान्य नरेश, कृप, भरत, दुष्यन्त, करूष, राम, अलर्क, नर, विरूपाश्व, निमि, बुद्धिमान जनक, पुरूरवा, पृथु, वीरसेन, इक्ष्वाकु, शम्भु, श्वेतसागर, अज, धुन्धु, सुबाहु, हर्यश्व, क्षुप, भरत-इन सबने तथा अन्य राजाओं ने कभी माँस नहीं खाया था।

वेदव्यास महाभारत में राम राज्य को सुराज्य की पराकाष्ठा के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसमें शिक्षा, धर्म, दर्शन, समाज, अर्थतंत्र तथा राजनीति अपने शुद्ध रूप में उत्कर्ष पर पहुँच गई थी। उनके राज्य में सारी प्रजा निरन्तर आनन्दमग्न रहती थी। जैसे पिता अपने औरस पुत्रों का पालन करता है, उसी प्रकार वे समस्त प्रजा का स्नेहपूर्वक संरक्षण करते थे। वे अत्यन्त तेजस्वी थे और उनमें असंख्या गुण विद्यमान थे। अपनी मर्यादा से कभी च्युत न होने वाले लक्ष्मण के बड़े भाई श्रीराम ने पिता की आज्ञा से चौदह वर्षों तक अपनी पत्नी सीता के साथ वन में निवास किया था। नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्र जी ने निर्जन स्थान में तपस्वी

मुनियों की रक्षा के लिये चौदह हजार राक्षसों का वध किया था। वहीं रहते समय लक्ष्मण सहित श्रीराम को मोह में डालकर रावण नामक राक्षस ने उनकी पत्नी विदेहनन्दिनी सीता को हर लिया। अपनी मनोरमा पत्नी के राक्षस द्वारा हर लिए जाने का समाचार जटायु के मुख से सुनकर श्रीरामचन्द्र जी आतुर एवं शोकसंतप्त हो वानरराज सुग्रीव के पास गए। सुग्रीव से मिलकर श्रीराम ने महाबली वानरों को साथ ले महासागर में पुल बाँधकर समुद्र को पार किया। वहाँ पुलस्त्य गवंशी राक्षसों को उनके सुहृदों और बन्धु-बान्धवों सहित मारकर श्रीराम ने अपने प्रधान अपराधी अत्यन्त घोर मायावी लोककंटक पुलस्त्य नन्दन रावण को, जो दूसरों के द्वारा कभी जीता नहीं गया था, कुपित होकर समरभूमि में मार डाला।

व्यास के अनुसार श्रीरामचन्द्र जी ने चारों समुद्रों तक की सारी पृथ्वी का शासन किया और समस्त प्रजाओं पर अनुग्रह करके वे देवताओं द्वारा सम्मानित हुए। देवर्षिगणों से सेवित श्रीराम ने विधिपूर्वक राज्य पाकर अपनी कीर्ति से सम्पूर्ण जगत को व्याप्त कर दिया और समस्त प्राणियों पर अनुग्रह करते हुए वे धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करने लगे। भगवान राम ने निर्बाधरूप से राजसूय और अश्वमेघ-यज्ञ का अनुष्ठान किया और देवराज इन्द्र को हविष्य से तृप्त करके उन्हें अत्यंत आनन्द प्रदान किया। राजा राम ने नाना प्रकार के दूसरे-दूसरे यज्ञ भी किए थे, जो अनेक गुणों से सम्पन्न थे। श्रीरामचन्द्र जी ने भूख और प्यास को जीत लिया था। सम्पूर्ण देहधारियों के रोगों को नष्ट कर दिया था। वे उत्तम गुणों से सम्पन्न हो सदैव अपने तेज से प्रकाशित होते। उन दिनों किसी प्रकार का अनर्थ नहीं होता था। सारी प्रजा दीर्घायु होती थी। किसी युवक की मृत्यु नहीं हुआ करती थी। चारों वेदों के स्वाध्याय से प्रसन्न हुए देवता तथा पितृगण नाना प्रकार के हव्य और कव्य प्राप्त करते थे। सब ओर इष्ट [6] और पूर्त [7] का अनुष्ठान होता रहता था। श्रीरामचन्द्र जी के राज्य में किसी भी देश में डाँस और मच्छरों का भय नहीं था। साँप और बिच्छू नष्ट हो गए थे। जल में पड़ने पर भी किसी प्राणी की मृत्यु नहीं होती थी। श्रीराम के राज्य में कहीं भी चोर, नाना प्रकार के रोग और भाँति-भाँति के उपद्रव नहीं थे। दुर्भिक्ष, व्याधि और अनावृष्टि का भय भी कहीं नहीं था। सारा जगत अत्यन्त, सुख से सम्पन्न और प्रसन्न ही दिखायी देता था। इस प्रकार श्रीराम के राज्य करते समय सब लोग बहुत सुखी थे। इस तरह व्यास के शब्दों में रामराज्य एक आदर्श एवं लोककल्याणकारी राज्य व्यवस्था थी,जहाँ मनुष्यों का जीवन ही नहीं, वनस्पति जगत, कृषि-व्यवस्था एवं पशुपालन व्यवस्था भी संतुलित और सुपरिणत था। ऐसा आदर्श शासन संपूर्ण विश्व में अपना प्रतिमान स्वयं ही है।

3- कालिदास की दृष्टि में :- कालिदास विश्व के श्रेष्ठतम महाकवि हैं। इन्हें कविकुलगुरु की संज्ञा प्रदान की गई है। ये अपने वाग्वैदग्ध्य और रसमाधुरी के कारण विश्व प्रसिद्ध हैं। इनके दोनों महाकाव्य यज्ञों, मंदिरों, तपश्चर्या, तपस्वियों तथा ऋषियों आदि के चित्रण से भरे पड़े हैं। इनका कुमारसंभवम् के बाद दूसरा महाकाव्य 'रघुवंशम्' है जो उन्नीस सर्गों में विभक्त है। इसके 10 से 15 वें सर्ग तक रामकथा का चित्रण हुआ है। कालिदास ने वाल्मीकि रामायण से कथा ग्रहण करके भी उसमें परिवर्तन करते हुए उसे काव्यात्मक औदात्य प्रदान किया है।

कालिदास ने राम को धीरोदात्त नायक के प्रतिमान के रूप में प्रस्तुत किया है। वे ऐसे असाधारण पुरुष थे, जिनका स्थान न केवल रघुकुल और भारतवर्ष में अपितु सारे संसार में अद्वितीय है। राम के उज्ज्वल चरित्र ने सम्राट रघु के कुल की कीर्ति को अमर कर दिया। कालिदास के राम तेजस्वी, अतिशय पराक्रमी और सुबाहु-ताड़का से लेकर रावण तक का संहार करने वाले शत्रुसंहारक हैं। वे धर्म-परायण, न्यायप्रिय और लोकरक्षक हैं। वे आज्ञापालक, दृढ़निश्चयी और कठोर व्रत का पालन करने वाले हैं। वे यज्ञ-संस्कृति की रक्षा करने वाले हैं। उन्हें भक्ति का आश्रय अर्थात् भगवान कहने का श्रेय भी कालिदास को ही जाता है। इनके राम के मानवीय रूप का विकास करते हुए उनके एक पत्नीव्रत की प्रशंसा करते हैं। जब लक्ष्मण राम को असहाय सीता का संदेश सुनाते हैं तो जैसे पौष माह का चंद्रमा ओस से धुँधला हो जाता है वैसे ही धीर, गंभीर, स्थिर चित्त होते हुए भी राम की आँखों में आँसू आ गए।

यथा-'**बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचंद्रः।**
कौलीनभीतेन गृहान्निरस्ता न तेन वैदेहसुता मनस्तः।।'
कारण यह है कि राम ने सीता को लोकापवाद के भय से अलग किया था, मन से पृथक नहीं किया था। फलस्वरूप जब सीता को यह समाचार मिला कि उनका परित्याग करके राम ने दूसरा विवाह नहीं किया और अश्व मेघ-यज्ञ में सहधर्मिणी के स्थान पर उनकी स्वर्णमयी मूर्ति को स्थापित किया तब परि-वियोग का अत्यंत भारी दुख भी सह्य प्रतीत होने लगा।

कालिदास अपने दिव्य चरित्रों में मानवीय गुणों का सुन्दर अभिनिवेश करते हैं। वे सभी मनोभावों के चित्रण के साथ-साथ मनुष्य और प्रकृति के संबंधों को अत्यधिक संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करते हैं।

कालिदास अपने समय के राष्ट्रीय कवि हैं। इनके अनुसार भारत राष्ट्र की विशालता अनुपमेय है। संपूर्ण भारतवर्ष एक अखंड भौगोलिक इकाई के रूप में अवस्थित है। इसके हिमकिरीट रूप में सुशोभित हिमालय पर्वत, पृथिवी के मानदंड की भाँति, पश्चिम एवं पूर्व दोनों ही समुद्रों को अपनी भुजाओं से स्पर्श करता है। भारतीय संस्कृति का अविकल एवं सर्वांगपूर्ण रूप कालिदास के महाकाव्यों में अपने चारुत्व के साथ व्यंजित हुआ है। इन्होंने भारतवर्ष की अंतरात्मा को

वाणी दी है। इनके महाकाव्य सौष्ठव, कल्पना-माधुर्य, सहृदयता, व्यंजना-विलास, जीवंतता तथा भावानुकूल पद-विन्यास से परिपूर्ण हैं। इन्होंने राम को न केवल अपराजेय योद्धा और 11000 हजार वर्षों तक शासन करने वाले चक्रवर्ती सम्राट के रूप में प्रस्तुत किया है अपितु उन्हें एक कालजयी एवं अनुकरणीय आदर्श प्रतिमान के रूप में भी प्रस्तुत किया है। राम सचमुच गुणों की खान हैं और उनका हर कार्य मनुष्यता को प्रेरित-प्रभावित और रस-मग्न करता है। कालिदास रामकथा का समापन करते हुए लिखते हैं कि, 'राम ने आततायी रावण का वध और तपस्वियों की रक्षा का कार्य पूरा करके शांति-रक्षा के लिए उत्तर में हनुमान और दक्षिण में विभीषण को अपने दो कीर्ति स्तंभों के समान स्थापित कर दिया और स्वयं स्वर्ग सिधार गए। उनकी भक्ति में जिन वानरों, राक्षसों तथा पौरजनों ने शरीर त्याग किया, उनके लिए भगवान ने एक स्वर्ग की रचना कर दी।' इस तरह कालिदास के राम न केवल अनंत रमणीय सौंदर्य के साकार विग्रह और पुरुषोत्तम हैं अपितु वे त्याग की प्रतिमूर्ति और अयोध्या के ऐसे चक्रवर्ती सम्राट हैं जिनकी न्यायप्रियता और समदृष्टि का कोई सानी नहीं है। उनका महत्त्व तब तक बना रहेगा जब तक यह धरती है।

4- भवभूति की दृष्टि में :-उत्तररामचरितम् भवभूति का महाकाव्यात्मक नाटक है जो उन्हें कालिदास के समान ही महाकवि सिद्ध करता है। इनके संबंध में ठीक ही कहा गया है-'कवय: कालिदासाद्या: भवभूतिर्महाकवि।' उत्तररामचरितम रस की दृष्टि से क्लासिक और आभिज्ञान शाकुंतलम की भाँति कालजयी नाटक है। इसमें रामायण के उत्तरकांड की घटनाओं को कलात्मक उत्कर्ष के साथ प्रस्तुत किया गया है। राम का शरीर जितना मनमोहक एवं भव्य है उतना ही शील और उदात्त गुणों से विभूषित है। उनका चरित्र शील, सत्य और शक्ति का उत्स बनकर प्रकाशित हुआ है। भवभूति के राम धीरोदात्त नायक हैं और उनकी वृत्ति सात्वती वृत्ति है।

इसमें रामायण की कथा को परिवर्तित करते हुए सीता निर्वासन के मुद्दे पर राम को निष्कलंक सिद्ध किया गया है। भवभूति अष्टावक्र मुनि द्वारा राम को राजधर्म के कठोर अनुपालन का संदेश दिलवाते हैं। फलस्वरूप लोकापवाद की सूचना देकर दुर्मुख के चले जाने के बाद व्याकुल राम के उद्गारों में सीता के चरित्र की शुद्धता पर निष्कपट विश्वास बताकर सीता को तीर्थ के समान पवित्र घोषित करवाते हैं। सीता की शुद्धता के प्रति ऐसा निष्कपट विश्वास वाल्मीकि रामायण में नहीं मिलता। बावजूद इसके राम व्यवस्था के रक्षक हैं, आदर्श राजा हैं। उनके प्रति जन-मन में अपार श्रद्धा है। अत: मार्मिक वेदना से पीड़ित होकर भी राम लोकाराधन एवं राजधर्म के निर्वहन हेतु स्नेह, दया और सुख की प्रतिमूर्ति अपनी प्रियतमा सीता को लक्ष्मण द्वारा वन में भिजवा देते हैं। किन्तु भीतर ही भीतर पुटपाक के समान असह्य वेदना से दग्ध होते रहते हैं। यथा -

'अनिर्भिन्नो गंभीरत्वादन्तर्गूढ़घनव्यथ:।
पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणोरस:।।'

भवभूति राम-सीता के दाम्पत्य प्रणय का जो अलौकिक चित्रण कर गए हैं वह अन्यत्र दुर्लभ है। वे कहते हैं कि सीता-राम का दाम्पत्य प्रणय दुग्धवत् उज्ज्वल, मधुर और पवित्र है। वह तो जीवन की प्रत्येक स्थिति में साथ चलता है। जीवन की सुख-दुख दशा में तथा प्रत्येक अवस्था में जो अपरिवर्तित रहता है, जिसमें हृदय को अनिर्वचनीय सुख मिलता है। यहाँ तक कि प्रौढ़ वय भी जिसकी सरसता को दूर नहीं कर पाता, समय बीतते जाने पर, संकोच का आवरण हट जाने पर जो प्रगाढ़ एवं परिपक्व प्रणय-सार रूप में स्थिर हो जाता है, ऐसा कल्याणकारी दाम्पत्य प्रेम किसी-किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है। सीताराम के इसी अत्यंत उच्च एवं उदात्त प्रेम चित्रण के कारण भवभूति अद्वितीय माने जाते हैं।

राम के समस्त व्यापार केवल कर्तव्य निर्वाह के लिए होते हैं। राम का जीवन एकमात्र करूण रस के फलक पर विभिन्न रसों के चित्र अंकित करता है -'एको रस: करुण एव निमित्तभेदात्। सीता निर्वासन की परिस्थिति में राम का उत्तरदायित्व समुचित परिप्रेक्ष्य में दिखाकर कवि ने उनके चरित्र को कलंकमुक्त तो किया ही है, उन्हें एकांत निर्जन वन में अपनी भावना के प्रकाशन और उद्गार व्यक्त करने का भी अवसर दिया है। करुण रस प्रधान नाटक में भी आशावाद की सुखद किरणों की झलक यत्र-तत्र देते हुए कवि ने रामायण की दुखान्त कथा के प्रतिकूल नाटक को सुखान्त बना दिया है। यह सात अंकों का नाटक है। राज्याभिषेक के बाद राम राजा के रूप में अपने कर्तव्य पालन में अत्यधिक निरत हैं। उनके सभी गुरुजन (वशिष्ठ तथा माताएँ) ऋष्यशृंग के द्वादश वार्षिक सत्र में चले गए हैं। वशिष्ठ का संदेश जब राजधर्म के पालन के संबंध में राम को मिलता है तो वे कह उठते हैं -

'स्नेह दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाथ लोकस्य मुंञ्चतो नास्ति में व्यथा।।'

इस तरह राम के लिए वैयक्तिक प्रेम के स्थान पर लोकेषणा महत्त्वपूर्ण है। वे राजधर्म और अपने दायित्वबोध के प्रति अतिशय सचेत हैं।

सीता इस समय पूर्णगर्भा है। उसके साथ राम-चित्रवीथी के दर्शनार्थ जाते हैं। इस चित्रवीथी में राम के जीवन से संबंधित चित्रों को प्रदर्शित किया गया है-विश्वामित्र के आश्रम-प्रसंग से आरम्भ करके सीता की अग्निपरीक्षा तक के अनेक चित्र इसमें हैं। प्रत्येक चित्र को देखकर राम की प्रतिक्रिया होती है। वे सीताहरण के बाद के चित्रों को नहीं देख पाते। उन्हें लगता है कि मानो पुन: सीता वियोग का समय आ गया हो। आगे चलकर यही होता है। सीता थककर उनकी गोद में सो जाती हैं, राम उसके प्रति अपने आकर्षण का प्रकटन कई सुन्दर पदों में करते हैं। भवभूति दाम्पत्य प्रेम का अत्यंत सुन्दर कथन

राम के मुख से कराते हैं और लिखते हैं कि –

'इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनो-
रसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चंदनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसर
किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः ॥1 38॥

अर्थात् यह घर की लक्ष्मी हैं, आँखों के लिए अमृत-शलाका हैं। इसे देखना जीवनदायी है। इसका स्पर्श शरीर पर चंदन का लेप है। गले में पड़ी हुई इसकी भुजा शीतल, मृदुल मुक्ताहार है। इसकी कौन सी वस्तु है जो मुझे परम प्रिय नहीं! केवल सीता विरह की प्रतीति से राम उन्मथित हो उठते हैं। यह अद्वितीय प्रेम का परिचय है।

भवभूति ने राम के प्रति जन-मन का करुण भाव जगाकर ऐतिहासिक कार्य किया है। राम ने गर्भवती सीता को घर से निकाला, इस कथासूत्र के आधार पर सीता के प्रति करुण भाव जगाना अत्यंत सरल था। भवभूति ने न्याय-व्यवस्था से सहृदय राम के अंतर्द्वंद्व का चित्रण करके राम के प्रति सहानुभूति उभारने का असंभव कार्य किया है। ऐसा माना जाता है कि भवभूति राम के माध्यम से देवसापेक्ष न्याय व्यवस्था के स्थान पर देवनिरपेक्ष न्याय-व्यवस्था की प्रतिष्ठा करने वाले विश्व के पहले साहित्यकार हैं। इन्होंने वियोगजन्य राम के अंतर्विह्वल हृदय और सीता के प्रति राम के अलौकिक अनुराग को दिखाकर राम के मन का बोझ भी उतार दिया है। ऐसे प्रणय का समापन कल्याणमय होना चाहिए। अत: वे नाटक के अंत में देवी अरुंधती द्वारा समस्त जनसमूह के समक्ष सीता के पवित्र और एकनिष्ठ पतिव्रता होने को स्वीकृति दिलाकर राम की निष्ठुरता का शमन कर देते हैं और सीता-राम के पुनर्मिलन द्वारा राम-कथा को सुखान्त बना देते हैं। इस तरह भवभूति के राम अपेक्षाकृत अधिक सहज और मानवीय हैं। वे लोकमन में उतर जाने वाले हैं।

5-जैन कवि स्वयंभू की दृष्टि से :- संस्कृत की भाँति परवर्ती भारतीय भाषाओं में भी रामकाव्य का विपुल लेखन हुआ है। इस दृष्टि से अपभ्रंश अथवा पुरानी हिंदी के पहले महाकवि स्वयंभू का 'पउम चरिउ' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसे जैन रामायण भी कहा जाता है। पउम चरिउ का शाब्दिक अर्थ पद्य चरित अथवा राम चरित है। यह मूलत: चरित काव्य और धार्मिक ग्रंथ है। यह महाकाव्य 5 काण्डों और 90 संधियों में सम्पन्न हुआ है। इसकी 83 संधियाँ स्वयंभू और शेष 7 संधियाँ उनके पुत्र त्रिभुवन द्वारा लिखी गई हैं। स्वयंभू ने संतुलित दृष्टिकोण रखकर भी राम के व्यक्तित्व का निर्माण जैन धर्म के आलोक में किया है। अत: वाल्मीकि, व्यास, कालिदास और भवभूति के राम यहाँ परिवर्तित रूप में आते हैं। स्वयंभू ने राम के आदर्श, ऐतिहासिक चरित्र एवं ऐश्वर्य को अपनी कविता का विषय बनाया है। वे तत्कालीन संदर्भ के अनुसार राम के मानवीय रूप का चित्रण करते हैं। उनके राम मानवीय शक्तियों और दुर्बलताओं के समुच्चय हैं। वे नैसर्गिक रूप से मानव हैं। यहाँ राम के आदर्श और अनुकरणीय रूप के बजाय उनके वास्तविक एवं मानवीय रूप का चित्रण हुआ है। स्वयंभू के राम में अलौकिकता का आभास तक नहीं मिलता। स्वयंभू ने जैन धार्मिक साहित्य के अनुसार सभी पात्रों को जैन धर्म में दीक्षित बतलाया है। यही कारण है कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने समस्त जैन-बौद्ध साहित्य को धार्मिक साहित्य की कोटि में रख दिया था। उसे विशुद्ध साहित्य नहीं माना था।

स्वयंभू के राम साधारण मनुष्य हैं। पउमचरिउ की कथा राम के वनगमन प्रसंग से आरम्भ होती है। इसमें राम के गुणों को उजागर करने के स्थान पर उनकी दुर्बलताओं को बिना किसी आवरण के चित्रित किया गया है। यह सही मायने में लोक काव्य है जिसका शुभारंभ लोक में प्रचलित कुछ शंकाओं के साथ हुआ है। राम गंभीरा नदी पार करके जब एक लतागृह में विश्राम कर रहे थे तभी भरत वहाँ आते हैं। राम उनके सिर पर पगड़ी बाँधकर भरत को अयोध्या का राज्य सौंपते हैं और भरत यह प्रतिज्ञा करते हैं कि उनके वनवास से वापस लौटने पर वे अयोध्या का राज्य राम को सौंप देंगे।

वस्तुत: राम भारतवर्ष की सांस्कृतिक अस्मिता के प्रतीक और भारतीय संस्कृति की सशक्त एवं चिरंतन अभिव्यक्ति हैं। ये भारतीय लोकमानस में आद्यंत परिव्याप्त हैं। स्वयंभू भारतीय लोकमन में विद्यमान राम के स्वरूप को ही कथा का आधार बनाया है। फलस्वरूप महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने भी स्वयंभू की प्रशंसा में लिखा है कि-**'जे प्राकृत कवि परम सयाने। भाषा महं हरिचरित बखाने।।'** इस तरह तुलसीदास लोकभाषा में रामकथा का चित्रण करने वाले स्वयंभू को विशेष सम्मान देते हैं। स्वयंभू के राम लोकजीवन से अनुप्राणित नायक हैं जो वाल्मीकि के ब्रह्म के अवतारी पुरुष से भिन्न हैं।

इसके आरंभ में मगध नरेश श्रेणिक जिनवर से प्रश्न करते हैं कि-

'जइ रामहो तिहुयणु उवरे माइ। / तो रावण कहि तिय लेवि जाइ।।
अण्णु वि खरदूषण-समरें देव। / पहु जुज्झइ सुज्झइ भिच्चु केंच।
किह वाणर गिरिवर उच्चहंति। / बंधेवि मयरहरु समुत्तरंति।।
किह रावणु दहमुह बीसहत्थु। / अमराहिव-भुव-बंधण-समत्थु।।'

इस तरह स्वयंभू ने राम को लोकजीवन की निधि बना दिया है। वे साधारण मनुष्य की भाँति सुख-दुख का अनुभव करते हैं और जैन धर्म के अनुसार कर्म फल में विश्वास भी रखते हैं। इनके राम इतिहास पुरुष और धर्म-पुरुष अधिक हैं। स्वयंभू के राम अपने पिता के वचनों के पालन हेतु मुनि-वेश में वन-वन भटकते हैं। उनका चौदह वर्षीय वनवास केवल एक त्रासदी भर नहीं है अपितु मनुष्य द्वारा नियति की चुनौती स्वीकारने और जीवन के कठिनतम और संघर्षपूर्ण क्षण में भी अपना विवेक कायम रखने तथा मानसिक क्षमता के सुनियोजित प्रयास द्वारा परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने की कहानी

है। एक सामान्य मनुष्य की भाँति वे वन में अकथनीय विपत्तियाँ झेलते हैं। रावण उनकी पत्नी का हरण कर लेता है। फलस्वरूप उन्हें विश्वविजयी रावण से संघर्ष करना पड़ा। वे तरह-तरह के संघर्षों से जूझते हुए अंत में अग्निदग्ध कुंदन की भाँति खरे उतरते हैं।

स्वयंभू के पउम चरिउ का कथानक अत्यंत व्यापक है। इसमें राम के साथ-साथ चराचर जगत और मानवेतर प्रकृति का भी मार्मिक चित्रण मिलता है। राम का व्यवहार पशु-पक्षियों, वन्य-जीवों एवं वनवासियों के प्रति भी समान है। रीछ-वानरों के प्रति राम का सम्मानजनक बर्ताव इस बात का प्रमाण है कि यदि हमारे वर्तमान शासक वनस्थ आदिवासियों के बीच जाएँ तो वे कितने सद्भाव से पेश आएँ। मेघनाद के शक्ति प्रहार से मूर्छित लक्ष्मण को देखकर राम के विलाप का वर्णन तो अनेक कवियों ने किया है लेकिन भरत के विलाप का वर्णन करने वाले स्वयंभू पहले कवि हैं। जब भरत को हनुमान से लक्ष्मण के आहत होने की सूचना मिलती है तब भरत का अंत: करण टूट-टूटकर बिखरने लगता है। यहाँ भरत की वेदना का पारावार चित्रित हुआ है। स्वयंभू ने भरत के विलाप का अत्यंत मार्मिक और करुणाप्लावित चित्रण किया है।

स्वयंभू जैन धर्म के अनुयायी थे और उसके अनुसार ही राम कथा के प्रसंगों की उद्भावना करते हैं। फलस्वरूप पउम चरिउ का समापन माता सीता द्वारा दीक्षा ग्रहण करने के साथ हुआ है। कवि राम को क्षमाभाव धारण करवाकर माता सीता को निवृत्ति-मार्गी बना देता है। यहीं पर पउम चरिउ का समापन होता है जो प्रकारांतर से जैन धर्म के पुरस्करण हेतु किया गया है। पउम चरिउ में राम और राम कथा दोनों का ही जैन धर्म के अनुसार रूपांतरण कर दिया गया है। यही कारण है कि स्वयंभू के राम अलौकिक पुरुष न होकर सामान्य मनुष्य हैं और उसी भाँति सुख-दुख झेलते हैं। यहाँ राम का नितांत मानवीय रूप उभरता है जो राम-कथा को वैविध्यपूर्ण बनाता है। यहाँ बिखरे लोकजीवन की बहुमूल्य संवेदनाओं को राम के माध्यम से काव्य का उपजीव्य बनाया गया है। कवि ने राम कथा को मार्मिक बनाने के लिए अपभ्रंश की कड़वक शैली का अद्भुत प्रयोग किया है। स्वयंभू ने लोकजीवन के प्रतीकों-बिंबों और उपमाओं द्वारा राम के व्यक्तित्व को उद्भासित किया है। यह भी संभव है कि आधुनिक काल में मैथिलीशरण गुप्त से लेकर नरेश मेहता तक सभी कवियों ने स्वयंभू से प्रेरणा ग्रहण की हो। इस दृष्टि से भी स्वयंभू के राम का ऐतिहासिक महत्त्व है। इनके राम भारतीय लोकजीवन के भाव-पुरुष हैं।

6-कबीर की दृष्टि में :- कबीर न तो महाकाव्यकार हैं और न ही इन्होंने कोई रामकाव्य ही लिखा है। लेकिन इनकी राम संबंधी अवधारणा प्राय: चर्चा में रहती है। ये भक्तिकाल के संत काव्यधारा के शिखर कवि और भक्त हैं। जब भी गोस्वामी तुलसीदास के राम की चर्चा होती है तब कबीर के राम को उनके प्रतिसंतुलन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। अत: यहाँ कबीर के राम संबंधी चिंतन का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है। कबीर के राम पूर्व परात्पर परमेश्वर ही हैं। वे अवतारी पुरुष न होकर सर्वव्यापी हैं। इस संबंध डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि-'कबीर राम के भक्त थे, लेकिन विष्णु के अवतार के रूप में नहीं। उनके लिए, राम किसी भी व्यक्तिगत रूप या गुण से परे हैं। कबीर का अंतिम लक्ष्य एक परम ईश्वर को प्राप्त करना था जो बिना किसी गुण के निराकार है, जो समय और स्थान से परे है, और जो कारण-कार्य-संबंध से भी परे है।' कबीर भले ही '**दसरथ सुत तिहुं लोक बखाना, राम नाम का मरम है आना**'-कहकर अपने राम को पारंपरिक राम से अलग करते हैं परन्तु उनकी भक्ति भागवत की प्रेम निश्चल भक्ति है। कबीर की भक्ति भी आत्मस्वरूप -बोध का ही एक रूप है।

कबीर राम नाम स्मरण में ही जीवन की सार्थकता ढूँढ़ते हैं। इनका आग्रह है कि हर मुख राम नाम के उच्चारण के लिए है और जिस मुख से राम नाम का उच्चारण नहीं होता वह निरर्थक है-

कबीर मुख सोई भला, जा मुख निकसे राम।

जा मुख राम न नीकसे, ता का मुख किस काम॥

इस तरह कबीर राम नाम को विशेष महत्त्व देते हैं। वस्तुत: कबीर के राम शब्द अर्थ केवल इतना है कि ईश्वर को नाम, रूप, गुण, काल आदि की सीमाओं से परे है। वह सर्वत्र परिव्याप्त हैं। कबीर के अपने राम को 'रमता राम' कहते हैं। कबीर की भक्ति-भावना राम के साथ संबंध स्थापित करती है। वे सबसे पहले 'हरि जननी मैं बालक तोरा'-कहते हैं। उसके बाद 'राम मोर पिउ, मैं राम की बहुरिया' कहते हैं। वे लोकनीति का निर्वाह करते हुए राम रूपी परब्रह्म से विवाह भी रचाते हैं। वे कहते हैं कि, 'दुलहनी गावहु मंगलचार। हम घरि आयो हो राजा राम भरतार। तन रति करि मैं, मन रति करिहूँ पंचतत बराती।। रामदेव मोरै पाहुन आये, मैं जोबन मैमाती।' वे लोकाचार का भी विधिवत निर्वहन करते हुए भगवान राम के साथ परिणय रचाने का उपक्रम करते हैं। कबीर राम के प्रति रागात्मक तादत्म्य स्थापित करने के लिए मधुयामिनी का भी चित्रण करते हैं-'ये अँखियाँ अलसानी हो, पिउ सेज चलो।' यह भागवत पुराण का प्रभाव है। वे भागवत पुराण की इस संसक्ति की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि -

'काम मिलावै राम हूँ जो को जाने राखि।

कबीर विचारा का करै जो सुखदेव बोलै भाषि।।'

अर्थात् भागवत पुराण में शुकदेव जी गोपियों की परम प्रेमासक्ति और रासलीला का वर्णन कर चुके हैं। यदि ईश्वर में जीव की परम संसक्ति रूप लोकरति का एकात्म्य है तो भी मुक्ति संभव है। कबीर अंत में

अपने राम के प्रति दैन्य भाव-बोध से अनुप्राणित होकर यहाँ तक लिखते हैं कि, 'मैं तो कूता राम का, मुतिया मेरा नाउं'। यह दैन्यभाव का चरमोत्कर्ष है। भक्ति में भगवान के महत्त्व की स्वीकृति और अपनी दीनता का प्रकटन आवश्यक माना जाता है। कबीर उसका आदर्श प्रतिमान उपस्थित करते हैं। कबीर राम के आदर्श गुणों को प्रचारित करना चाहते हैं। इसके लिए वे राम की प्राप्ति के लिए जंगल में खाक छानते हैं। वे राम के समान ही सात्विक विचारधारा वाले पुरुष के मिल जाने पर यदि बिगड़ा कार्य बन जाए या पूर्ण हो जाए तो उसे भी 'राम' से कम नहीं मानते हैं। यथा-

कबीर वन वन में फिरा, कारनि अपने राम।
राम सरीखे जन मिले, तिन सारे सब काम।।'

कबीर भारतीय लोकमानस में व्याप्त राम की अनेक छवियों से परिचित हैं।वे राम को बाह्यजगत में ढूँढ़ने के बजाय अंतर्जगत में ढूँढ़ने का आदर्श प्रस्तुत करते हैं। वे राम के विविध रूपों की चर्चा करते हुए राम के चार रूप बतलाते हैं-

'एक राम दशरथ का बेटा। एक राम घटघट में बैठा।

एक राम का सकल पसारा। एक राम त्रिभुवन से न्यारा।।'

इस तरह कबीर राम के चार रूपों का वर्णन करते हुए उनके वास्तविक स्वरूप को जानने का आग्रह करते हैं। उनके अनुसार एक राम दशरथ-पुत्र हैं, दूसरे राम सबके भीतर विद्यमान हैं! तीसरे राम वे हैं जिनका सारे संसार में विस्तार है जो सर्वव्यापी हैं अर्थात् सृष्टि के कण-कण में विराजमान हैं। चौथे राम इन सबसे न्यारे परब्रह्म हैं जिनके वास्तविक स्वरूप को समझना आवश्यक है। कबीर ने राम-भक्ति का जो आदर्श रखा, वही उनका सबसे बड़ा अवदान है। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने ठीक ही लिखा है कि, 'इसमें कोई संदेह नहीं है कि कबीर ने नैतिक मोर्चे पर जनता के बड़े भाग को सँभाला जो नाथपंथियों के प्रभाव से प्रेम भाव और भक्ति रस से शून्य और शुष्क पड़ता जा रहा था। उनके द्वारा यह बहुत बड़ा कार्य हुआ। इसके साथ ही मनुष्य की एक सामान्य भावना को आगे करके निम्न श्रेणी की जनता में उन्होंने आत्मगौरव का भाव जगाया और उसे भक्ति के ऊँचे से ऊँचे स्थान की ओर बढ़ने के लिए बढ़ावा दिया।' सारांश यह है कि कबीर के राम साक्षात पारब्रह्म हैं। वे घट-घट वासी और सर्वव्यापी हैं। वे सर्वस्वीकृत सर्वानुभूति के विषय हैं। उनकी भक्ति ही जीव के उद्धार का सही मार्ग है। उनकी भक्ति द्वारा कबीर को 'हम न मैं मरिहैं संसारा'-जैसा आत्मविश्वास आया है। राम अखंडानंद स्वरूप हैं। उनकी भक्ति द्वारा ही जीव अपने जीवन को सार्थक और जरा-मरण के बंधन से मुक्त कर सकता है। वह सदा-सर्वदा के लिए ईश्वरत्व प्राप्त कर सकता है।

7-गोस्वामी तुलसीदास की दृष्टि में :-महाकवि गोस्वामी तुलसीदास हिंदी के सबसे दुर्निवार कवि हैं। उनसे बच पाना लगभग असंभव है। आज राम की जो विश्वव्यापी छवि है वह तुलसीदास के राम की ही है। तुलसीदास के राम भारतीय जनमानस के चिरंतन लोकनायक हैं। वे भारतीय संस्कृति के भावपुरुष हैं, भारतीय अस्मिता के प्रतीक हैं। वे नारायण होकर भी लोकमंगल तथा लोकहित के लिए नर रूप में लीला करते हैं। भारतीय परंपरा में जो कुछ भी वरणीय है, जो कुछ भी सर्वोत्तम है तथा जो सनातन आदर्श हैं वे तुलसी के राम के रूप में साकार हो गए हैं। राम संपूर्ण मनुष्यता के हैं और सब राम के हैं। उनका व्यक्तित्व ही अपने आप में एक महाकाव्य है।

तुलसीदास के राम वेद, उपनिषद, वेदांत प्रतिपादित ब्रह्म के समान सत्, चित्, आनंद से युक्त सूर्य हैं जहाँ मोह-माया की रात नहीं ठहर सकती-'राम सच्चिदानंद दिनेसा'। तुलसी के अनुसार ब्रह्म ज्ञानी लोग राम को अनादि ब्रह्म कहते हैं-'प्रभु जे सुनि परमारथबादी। कहहि राम कहुँ ब्रह्म अनादी'। वे दशरथ पुत्र राम को ही ईश्वर मानते हैं-'राम सो अवध नृपति सुत सोई। की अज अगुन अलख गति कोई।' तुलसीदास कबीर को उत्तर देते हुए यह सिद्ध करते हैं कि अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र ही वास्तविक राम हैं-**'जिमि इहि गावहिं वेद, बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान। सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवान।।'** वे बार-बार राम को ब्रह्म कहते हैं। उनके अनुसार,

'राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।।

राम ब्रह्म चिनमय अबिनासी। सर्व रहित सब उर पुर बासी।।

वे स्वयं भगवान शिव से राम के स्वरूप का निरूपण करते हुए लिखते हैं कि,

'बिनु पग चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु कर्म करइ बिधि नाना।।

तन बिनु पर्स नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।

अस सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।।'

इस तरह तुलसी के राम नित्य, अजन्मा, व्यापक, अद्वितीय और अनादि हैं। वे सनातन हैं, अखिल ब्रह्मांड के रचयिता हैं। वे जगत के कर्ता, पालक और संहारक हैं। वे जगत के निमित्त एवं उपादान दोनों ही कारण हैं-'जेहि सृष्टि उपाई, त्रिविध बनाई, संग सहाय न दूजा।' इसी आधार पर तुलसीदास उन्हें जगत के माता- पिता की संज्ञा देते हैं-'एहि विधि राम जगत पितु-माता।' वे विश्व प्रपंच के संहारक भी हैं और जगत का प्रलय उनकी भृकुटी का विलास मात्र है-'भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई।' तुलसीदास के राम संसार से अधर्म का नाश करने के लिए समय-समय पर अवतरित होते हैं-

'मीन कमठ सूकर नरहरी। वामन परसु राम बपु धरी।।

जब- जब नाथ सुरन्ह दुख पायो। नाना तनु धरि तुम्हइ नसायो।।'

गोस्वामी तुलसीदास ऐसे परब्रह्म को अवतारी पुरुष के रूप में एक गृहस्थ बना देते हैं। वे अपने पिता के आज्ञापालक पुत्र हैं, भाइयों के सम्मानित भाई हैं, पत्नी के आदर्श पति हैं और गुरु के योग्यतम शिष्य हैं। उनके भी कुछ मित्र हैं, कुछ शत्रु और कुछ भक्त। तुलसी के राम इस दृष्टि से भी मानवीय आदर्श के सर्वोच्च प्रतिमान हैं कि उन्हें न तो अपने राज्याभिषेक की बात सुनकर प्रसन्नता हुई और न ही वनवास का समाचार सुनकर दुख हुआ। यह एक धीरोदात्त नायक तथा मर्यादा पुरुषोत्तम को प्रकर्ष पर पहुँचाने वाला चरम मानक है। तुलसी की दृष्टि में राम की यह स्थितप्रज्ञ एवं परिपक्व मुख वाली छवि उनके लिए सुंदर मुगलों की प्रदाता है–'**प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः। मुखाम्बुजश्री रघुनन्द नस्य मे सदास्तु सा मंजुल मंगलप्रदा।।**'

तुलसीदास के राम 'कोटि मनोज लजाव निहारे' अर्थात् करोड़ों कामदेव की शोभा को लज्जित करने वाले अनंत रमणीय सौंदर्य के साकार विग्रह हैं। राम के सौंदर्य के चित्रण के लिए तुलसीदास सतपंच चौपाई अर्थात् 105 चौपाइयों का सृजन करते हैं। अभी अयोध्या में स्थापित राम लला की प्रतिमा तुलसीदास की उक्त चौपाइयों पर ही आधारित है। तुलसी भली–भाँति जानते थे। कि सुंदर और शक्तिशाली व्यक्ति भी कुपंथगामी हो सकता है फलतः वे राम के व्यक्तित्व में शक्ति और सौंदर्य के साथ–साथ शील का भी समन्वय करते हैं–'राम रूप गुन सील सुभाऊ।' वे केवल निषादराज गुहा तथा केवट को गले ही नहीं लगाते अपितु उन्हें भरत सम भ्राता भी कहते हैं। राम के चित्रकूट पहुँचते ही कोल–किरात उमड़ पड़ते हैं। महाभारत में जो सम्मान श्रीकृष्ण ने गीता का उपदेश सुनाकर अर्जुन को दिया है,वही सम्मान तुलसी के राम शबरी को देते हैं। वे शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश देते हैं। तुलसीदास के राम रीछ–वानरों, आदिम जनजातियों को संगठित करके दुनिया की सबसे शक्तिशाली, मदांध, भोगवादी रावणीसत्ता को ध्वस्त कर देते हैं। उनका जन्म ही संसार के कल्याण के लिए हुआ है–'राम जनम जग मंगल हेतु।' वे दंडकारण्य में मुनियों के हड्डियों के पहाड़ को देखकर संपूर्ण विश्व से राक्षसों के नाश की प्रतिज्ञा करते हैं–'**निसिचर हीन करउं महि,भुज उठाइ पन कीन्ह। सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ–जाइ सुख दीन्ह।**'

वस्तुतः लोकहित के लिए उत्सर्ग की यात्रा का नाम ही राम है। वे अथ से इति तक त्याग की प्रतिमूर्ति बनकर उभरते हैं। राम स्वयं राज–त्याग, राजसी वैभव का त्याग तथा अहं के परित्याग द्वारा त्याग का सर्वोच्च प्रतिमान उपस्थित करते हैं। इसके ठीक विपरीत साम्राज्यवादी, भोगवादी सत्ता का प्रतीक रावण है जिसका अर्थ ही है जो रव अर्थात् शोर करे, संग्रह करके संसाधनों का दुरुपयोग करे। राम भूपाल अर्थात् भूमि का पालन करने वाले राजाओं में शिरोमणि हैं जबकि रावण विज्ञान, आसुरी शक्ति और प्रौद्योगिकी के सहारे भूमि का दोहन करने वाला। तुलसीदास मुगलों के बहुपत्नीप्रथा पर प्रखर काव्यात्मक आक्रमण करते हुए यह स्थापित करते हैं कि राम राज्य तभी आ सकता है जब लोग राम की तरह एक पत्नीव्रत का पालन करें। तुलसी का राम राज्य लोककल्याणकारी आदर्श राज्य–व्यवस्था का आदर्श प्रतिमान है। जिस पर आज के सैकड़ों लोकतंत्र न्योछावर किए जा सकते हैं। तुलसी का रामराज्य सुख, समृद्धि, सद्भाव, सहयोग, सौजन्य, जीवनास्था और आनंद का महापर्व है। राम स्वयं प्रजा के समक्ष यह प्रस्ताव करते हैं कि, '**जो अनीति कछु भाखहुं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।।**' तुलसीदास के राम मध्यकालीन मुगल शासकों के दंडविधान तथा सामंतों के परपीड़न पर आधारित भोगवादी दृष्टि का निषेध करके लोकरंजन तथा लोकरक्षण का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वे उद्धारक हैं। यही कारण है कि वे वंदनीय हैं। तुलसीदास लिखते हैं कि–'**यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरायत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः.यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतांवन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्।**' अर्थात् जिनकी माया के वशीभूत सम्पूर्ण विश्व, ब्रम्हादि देवता और असुर हैं। जिनकी सत्ता से रस्सी में सर्प के भ्रम की भाँति यह सारा दृश्य जगत सत्य ही प्रतीत होता है और जिनके केवल चरण ही भवसागर से तरने की इच्छा वालों के लिए एकमात्र नौका है। उन समस्त कारणों से पर (सब कारणों के कारण और सर्वश्रेष्ठ) राम कहलाने वाले भगवान हरि की मैं वंदना करता हूँ।

सारांश यह है कि राम जैसा सर्वगुण–सम्पन्न नायक संपूर्ण विश्व के साहित्य में नहीं है। तुलसीदास ने जिस राम की सृष्टि कर दी है वे जब तक यह धरती और ब्रह्मांड है तब तक मानव जाति के आदर्श बने रहेंगे। उनकी प्रकृति धीर, प्रशांत, सहिष्णु, मर्यादित, उदात्त और गहरे महासागर की भाँति है जो मानव मात्र के समक्ष मर्यादा का ऐसा आदर्श उपस्थित करते हैं जहाँ तक पहुँचना लगभग असंभव है। ऐसा कवित्व पूर्ण और आदर्श चरित्र संपूर्ण विश्व साहित्य की अनमोल निधि है।

8–केशवदास की दृष्टि में :– केशवदास रीतिकाल के प्रवर्तक आचार्य कवि हैं। ये मुख्यतः संस्कृत काव्य और काव्यशास्त्र के विद्वान थे परन्तु संस्कृत, अवधी मिश्रित बुंदेली में 'रामचंद्रिका' नामक महाकाव्य की रचना की है। इस ग्रंथ में राम को अवतारी पुरुष के रूप में ही चित्रित किया गया है। इनके राम भक्तरंजक और धर्म–संस्थापक है। वे पारमार्थिक सत्य हैं और निर्गुण होते हुए भी सगुण हैं। केशवदास ने रामचंद्रिका में अपना संक्षिप्त परिचय देते हुए लिखा है कि–

सनाढ्य जाति गुनाढ्य है जग सिद्ध शुद्ध सुभाव।
उपज्यो तेहि कुल मंद मति शठ कवि केशवदास।
रामचंद्र की चंद्रिका भाषा करी प्रकाश।।

केशवदास का चिंतन शंकराचार्य के अद्वैतवाद से प्रभावित है। इनके लेखन का उद्देश्य भगवान राम के संपूर्ण चरित का गान न होकर

चंद्रमा की भाँति केवल उनके विमल यश का चित्रांकन था। केशवदास ने स्वयं ही रामचंद्रिका की रचना का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है कि –

'जागत जाकी जाति जग, एक रूप स्वच्छंद।
रामचंद्र की चंद्रिका बरनत हौं बहु छंद।'

रामचंद्रिका में संस्कृत ग्रंथों 'प्रसन्नराघव, हनुमन्नाटक, कादंबरी और नैषध चरित' की अनेक पंक्तियों का काव्यानुवाद भी मिलता है।

इनकी भक्ति वैष्णव अद्वैतवाद से परिचालित है। इनके लिए इस धरती पर धर्म और मर्यादा की प्रतिष्ठा के लिए राम का अवतार होता है। इनके लिए राम स्वयं जगत हैं और संपूर्ण जगत उनमें अंतर्निहित है–**'तुम ही जग हौ, जग तुमही में। / तुमहि विरचि मरजाद दुनी में।।**
मरजादहिं छोड़त जानत जाको। / तबहि अवतार धरो तुम ताको।।'

इनके राम ब्रह्म के अवतार एवं लोकोत्तर शक्ति–सम्पन्न हैं। इस धरती के सारे जीवन उनके प्रतिबिंब हैं। वे लिखते हैं कि–

'सब जानि बूझियत मोहि राम। / सुनिए सो कहों जग ब्रह्म नाम।।
तिनके अशेष प्रतिबिंब जाल। / तेई जीवन जानि जग में कृपाल।।'
(–रामचंद्रिका, 25/2)

इनके अनुसार राम लोकोत्तर शक्ति के रूप में अनादि और अनंत हैं। वे साक्षात पारब्रह्म हैं जो अजर–अमर और अच्युत हैं। वे सत्यरूप, मायातीत और गुणातीत हैं। उनका स्वरूप अनिर्वचनीय है। जिस तरह तुलसीदास का भक्तिमार्ग 'पुरुष, नपुंसक, नारि वा जीव चराचर कोइ' अर्थात् सबके लिए खुला है उसी भाँति केशवदास का राम नाम सभी के लिए उपलब्ध है। गोस्वामी तुलसीदास के प्रभाववश केशवदास ने भी राम को पुत्र, शिष्य, भातृ, पति, मित्र और राजा के रूप में आदर्श के चरम प्रतिमान के रूप में चित्रित किया है। उनके अनुसार राम किसी वर्ग विशेष के नहीं हैं अपितु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र चारों वर्णों के प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपलब्ध हैं। उनके यहाँ स्त्री–पुरुष का भी भेद नहीं है। उनके नाम स्मरण मात्र से अनेक यज्ञ, दान और तीर्थ–यात्रा का प्रतिफल मिलता है। यह प्रकारांतर से तुलसीदास के 'कलियुग केवल नाम अधारा' का प्रतिपुष्टि है। वे लिखते हैं कि,

'रामचंद्र चरित्र को जु सुनै सदा चित्त लाय।
ताहि पुत्र कलत्र सम्पति देत रघुराय।।
यज्ञ दान अनेक तीरथ न्हान को फल होय।
नारि वा नर विप्र क्षत्रिय वैश्य शूद्र जो कोय।।' (रामचंद्रिका 39/38)

केशवदास के काव्य की सर्वोत्तम उपलब्धि उनके संवाद हैं। इसके अंतर्गत लक्ष्मण, राम–परशुराम संवाद और रावण–अंगद संवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके संवाद पात्रों की वाक्पटुता और राजनीति के दाँव–पेंच को भी अभिव्यंजित करते हैं। इनके वर्णन में वैभव, कीर्ति, भक्ति और विलास एक साथ अभिव्यक्त हुए हैं। ये संस्कृत काव्यशास्त्र के पंडित थे और इन्हें अपनी विद्वता का अभिमान भी था। केशवदास को अनेक राजाओं का प्रश्रय मिला था और जब ये माँ विंध्यवासिनी का प्रसाद ग्रहण करके कुँवर राव प्रताप राजा रामसिंह से मिलने के लिए जाते हैं तो उनकी तुलना सुग्रीव, लक्ष्मण और हनुमान से करते हैं। यथा–

'सोम्यौ तब सुग्रीव समान। रामकाज जिनकौ परवान।।
तुम लक्षन लछिमन सो लसै। मन क्रम वचन रामव्रत बसै।।'

ये तुलसीदास के समकालीन थे और उनके संपर्क में रहकर मार्गदर्शन लेते थे। ये सच्चे रामभक्त होकर भी अनेक स्थलों पर तुलसीदास से भिन्न मत प्रस्तुत करते हैं। इन्होंने राम द्वारा सीता परित्याग को अनुचित माना। साथ ही रावण के अवसान के उपरांत विभीषण द्वारा उसकी पत्नी मन्दोदरी को पत्नी रूप में वरण करने की घटना को विभीषण का चारित्रिक दोष बतलाया। इन्होंने बिंबात्मक भाषा का प्रयोग करते हुए लोक में प्रचलित प्राकृत और अपभ्रंश के भी शब्दों का प्रयोग करके अपनी अभिव्यक्ति को स्वाभाविक बनाया है। ये राम को शील का समुद्र कहते हुए 'रामचंद्रिका' के सप्तम प्रकाश में लिखते हैं कि –

'सुनिए राम सीलसमुद्र। तब बंधु हैं अति क्षुद्र।
यम बड़वानल कोप। अब कियो चाहत लोप।।'

यह भी ध्यातव्य है कि गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस की भाँति उस युग में केशवदास की रामचंद्रिका भी पर्याप्त लोकप्रिय हुई। यहाँ तक कि ओरछा के महलों में जो भित्तिचित्र बनाए गए हैं वे सब केशवदास की रामचंद्रिका पर आधारित हैं। जिस प्रकार रामलीला में रामचरितमानस और राधेश्याम रामायण के संवाद प्रयुक्त होते थे उसी प्रकार रामचंद्रिका के संवाद भी नाटकीय अभिनय की दृष्टि से अनुकूल होने के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुए। ऐसा माना जाता है कि बुंदेलखण्ड में आज भी इन संवादों का रामलीला में सम्यक प्रयोग होता है। इन्होंने तुलसीदास की तरह लोकजीवन और मार्मिक प्रसंगों की अद्भुत उद्भावना भले ही न की हो परन्तु उस समय की सारी प्रवृत्तियों का चित्रांकन अवश्य करते हैं।

सारांश यह है कि केशवदास के राम चौदह लोकों के रक्षक साक्षात पारब्रह्म परमेश्वर हैं। वे उस निर्मल ज्योति की भाँति हैं जो अखंड एवं स्वतंत्र है। वे त्रिगुणात्मक हैं। विश्व के समस्त रूपों की उत्पत्ति उसी ब्रह्म रूपी राम से हुई है। वह नित्य, नवीन, मायातीत और निर्विकार हैं। उनमें ही जगत का सृजन, पालन और संहार निहित है। संक्षेप में, केशवदास के राम शंकराचार्य के अद्वैत रूप ब्रह्म के साकार विग्रह हैं। यह चराचर जगत उनकी इच्छा और लीला से परिचालित है। अत: वे अजर–अमर और अविनाशी हैं। उनकी कालजयता असंदिग्ध है। इनके राम तुलसीदास के राम का ही विस्तार हैं।

9–हरिऔध की दृष्टि से :– अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आधुनिक काल के द्विवेदी युग के महत्त्वपूर्ण कवि हैं। इन्होंने रामकाव्य

परंपरा के अंतर्गत वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड को आधार बनाकर 'वैदेही वनवास' नामक प्रबंधकाव्य लिखा है। इन्हें आधुनिक काल का पहला महाकाव्य 'प्रियप्रवास' लिखने का श्रेय दिया जाता है। ये द्विवेदी युगीन सुधारवादी आंदोलनों से प्रभावित थे, फलस्वरूप राम को अवतारी पुरुष के रूप में चित्रित न करके एक आधुनिक आदर्श पुरुष के रूप में उनका चित्रण करते हैं। इनके राम आधुनिक काल के लोकनायक हैं। वे अपेक्षाकृत मानवीय अधिक हैं। इन्होंने वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति के विचारों को आत्मसात करके अपने समय और समाज की माँग के अनुरूप राम के व्यक्तित्व को गढ़ा है। हरिऔध ने राम के व्यक्तित्व का रूपायन करते हुए लिखा है कि–

'रघुनंदन हैं धीर धुरंधर, धर्मप्राण हैं भव-हित रत हैं।
लोकाराधन में हैं तत्पर, सत्यसंध हैं सत्यव्रत हैं।
नीतिनिपुण हैं न्यायनिरत हैं, परमउदार महानहृदय हैं।'

हरिऔध के राम मानवीय गुणों के आगार हैं। वे मनुष्यता के स्वाभाविक और श्रेष्ठतम गुणों के समुच्चय हैं। वे लोकहित को साधने वाले एक सच्चे लोकनायक हैं। वे परहित और देशहित के लिए अपने हितों का बलिदान देकर मनुष्यता के सर्वोच्च प्रतिमान का आदर्श उपस्थित करते हैं। वे मनुष्यता की नई परिभाषा देते हुए कहते हैं कि –

'भवहित, परहित, देशहितों का ध्यान रख,
कर लेना निज स्वार्थ सिद्धि है मनुजता।'

हरिऔध के अनुसार जब रामराज्य जैसी लोककल्याण कारी व्यवस्था में सबकुछ ठीक चल रहा था, उसी समय जनमानस में सीता के संबंध में अपकीर्ति फैलाई गई। राम राजधर्म का ईमानदारी और पूरी प्रामाणिकता के साथ निर्वहन करने वाले आदर्श शासक हैं। वे राजधर्म के अनुसार ही अपना राज्य चला रहे थे। उस समय हर कोई स्वतंत्र, समान और बंधुत्व के भाव से परिपूर्ण था। वहाँ मनुष्यता मुस्कुरा रही थी। रामराज्य में हर नागरिक सुखी और संतुष्ट था। राम स्वयं सीता को सांत्वना देते हुए 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' की विराट कामना प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार–

'सबको सुख हो कभी नहीं कोई दुख पाए।
सबका होवे भला किसी पर बला न आए।'

लेकिन इस बीच सीता के नाम पर अपकीर्ति का द्वार खुलना राम को गहराइयों तक प्रताड़ित करता है। वे अत्यन्त चिंतित और व्यग्र दिखाई देते हैं। बावजूद इसके राम अपने सुख और स्वार्थ का बलिदान देते हैं। उन्हें अपने कर्तव्य का संपूर्ण ज्ञान है। वे कह उठते हैं –

'राजपथ कर्तव्यों का पथ। / गहन है, है अशांति आलय।'

हरिऔध के राम श्रेष्ठ नरत्व के आदर्श हैं। वे दंडनीति से परे हैं। वे रावण का निग्रह भी लोकमंगल और विश्वशांति के लिए करते हैं। रावण का अपराध अक्षम्य था, अत: उसे दंड देना ही था। लेकिन वे भली–भाँति यह जानते हुए भी कि सीता के संबंध में फैलाई गई अपकीर्ति पूर्णत: असत्य है। लेकिन वे अपनी प्रजा में से किसी व्यक्ति को दंड नहीं दे सकते। फलत: लोकहित के लिए अपने स्वार्थ का बलिदान देकर एक आदर्श शासक का मानक बनाते हैं। वे कहते हैं कि –

'पठन कर लोकाराधन मंत्र, / करूँगा मैं इसका प्रतिकार।
साधकर जनहित-साधन सूत्र, / करूँगा घर-घर शांति प्रसार।।'
करूँगा घर-घर शांति प्रसार।।'

इस तरह मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम जैसा राजा ही जनहित और लोक कल्याण के लिए इतना बड़ा त्याग कर सकता है, स्वयं को दुख–दग्ध कर सकता है। हरिऔध के राम धर्मनिष्ठ शासक हैं। उनके लिए राजधर्म सर्वोपरि है। ऐसा धैर्यवान, संयमी और कर्तव्यनिष्ठ शासक अन्यत्र दुर्लभ है। वे इसे आपातकालीन परीक्षा मानते हैं । फिर भी, उनके लिए धर्म प्राणता ही श्रेयस्कर है। उनका मन कहता है कि, है विदेह जा भूल लोक अपवाद की/ तो कर दूँ मैं उन्हें न क्यों स्थानांतरित/ यद्यपि यह है बड़ी मर्म–भेदी–कथा/ तथा व्यथा है महती– निर्ममता–भरित/ किन्तु कसौटी है मनुष्य सुनु की/ स्वार्थ कष्ट सह भव–हित–साधन श्रेय है/आपतकाल, महत्त्व परीक्षा काल है/ संकट में धृति धर्म प्राणता ध्येय है। इस तरह हरिऔध के राम मानवीय मूल्यों के साकार विग्रह हैं। वे इस अर्थ में पुरुषोत्तम एवं आदर्श शासक हैं कि वे त्याग, धैर्य, सहिष्णुता और धर्म–प्राणता का सर्वोत्तम प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं। ऐसे धर्मनिष्ठ राजा के संबंध में स्वयं गुरु वशिष्ठ को कहना पड़ता है कि –

'त्याग आपका है उदात्त धृति धन्य है।
लोकोत्तर है आपकी सहनशीलता।।
है अपूर्व आदर्श लोकहित का जनक।
है महान भवदीय नीति मर्मज्ञता।।'

सारांश यह है कि हरिऔध के राम त्याग की प्रतिमूर्ति हैं। वे आदर्श राजा, प्रजापालक और मनुष्यता के आदर्श हैं। उनके लिए धर्म–प्राणता सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। वे अपार दुख सहकर भी राजधर्म की रक्षा के लिए सीता को राजभवन से निर्वासित करने का कठोर निर्णय लेते हैं। उनका चरित्र करुणा विगलित एक त्रासद कविता है। ऐसा धर्मप्राण चरित्र दूसरे साहित्य में शायद ही मिले। यही कारण है कि उनके चरित्र में युग–युगांतर तक को प्रेरित, प्रभावित और रस–मग्न करने में सक्षम है। हरिऔध ने रामचरित के वर्णन माध्यम से अपनी लेखनी को अमरत्व प्रदान करवा लिया है।

10–गुप्त जी की दृष्टि में :– मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के महत्त्वपूर्ण कवि हैं जिन्होंने रामकाव्य परंपरा को समृद्ध किया है। इनके द्वारा रचित 'साकेत' और 'पंचवटी' रामकाव्य परंपरा को आधुनिक काल की वैज्ञानिक प्रगति के आलोक में प्रस्तुत करते हैं। ये परंपरागत राम के प्रति आस्था रखते हुए भी उन्हें युगीन चुनौतियों के अनुरूप आधुनिक और सामाजिक बनाते हैं। इन्होंने साकेत के मुख पृष्ठ पर ही लिखा है कि–

'राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।'

गुप्त जी साकेत का शुभारंभ राम की स्तुति से करते हैं और उन्हें 'इदं पवित्रं पापघ्नम् वेदैश्च सम्मतं' के द्वारा सारे पापों से मुक्त करने वाला बतलाते हैं। कहने का आशय यह है कि नए युग की चेतना से अनुप्राणित होकर भी गुप्त जी परम वैष्णव और श्रेष्ठ रामभक्त हैं। यही कारण है कि उनके मन में राम की जो छवि है वह तुलसीदास से अलग नहीं हैं। इनके राम भी ब्रह्म के अवतार, जगदीश और साक्षात पारब्रह्म हैं। वे जगत के कल्याण हेतु मानव रूप में अवतरित हुए हैं। गुप्त जी लिखते हैं कि–

'हो गया निर्गुण सगुण साकार है। / ले लिया अखिलेश ने अवतार।।'

यह गुप्त जी की परंपरा के प्रति गंभीर आस्था है। लेकिन वे आधुनिक बुद्धिवाद के प्रभाववश उन्हें मानवीय रूप में प्रस्तुत करने का उपक्रम करते हैं। गुप्त जी के अनुसार राम मानव रूप में लीलाएँ करने के लिए अवतरित हुए हैं। वे मानवी का दुग्धपान करते हैं। संसार का मार्गदर्शन करते हुए पृथ्वी का भार उतारते हैं। वे भक्त वत्सल और लोकेश लीलाधाम के रूप में प्रसिद्ध हैं। फलस्वरूप वे ईश्वर के अवतार होकर भी मानव हैं। गुप्त जी स्वयं प्रश्न करते हैं –

'राम, तुम मानव हो? ईश्वर नहीं हो क्या?
विश्व में रमे हुए नहीं सभी कहीं हो क्या?
तब मैं निरीश्वर हूँ, ईश्वर क्षमा करें;
तुम न रमो तो सब तुममें रमा करें।'

मैथिलीशरण गुप्त के राम धैर्य और मर्यादा का संश्लेषण हैं। वे सुख–दुख और परस्पर विपरीत स्थितियों में भी समभाव रखते हैं। वे मानवत्व में ईश्वरत्व की प्रतिष्ठा करने वाले आदर्शपुरुष हैं। गुप्त जी लिखते हैं कि–

'रामभाव अभिषेक समय जैसा रहा। / बन जाते सहज सौम्य वैसा रहा।।
वर्षा हो या ग्रीष्म, सिन्धु रहता वही। / मर्यादा की सदा साक्षिणी है मही।।'

राम सत्य–धर्म के श्रेष्ठ भाव से समन्वित हैं। गुप्त जी राष्ट्रीय–सांस्कृतिक धारा के कवि हैं और स्वाधीनता संग्राम के कठिन संघर्ष के दिनों में भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय चेतना का अमर मंत्र फूँकने का साहसिक कार्य करते हैं। फलस्वरूप उनके राम भी वाल्मीकि और तुलसीदास के राम की भाँति जन्मभूमि प्रेम का निर्वचन करते हैं। वे अयोध्या की परम पावन धरती को प्रणाम निवेदित करते हुए कहते हैं कि–

'जन्मभूमि, ले प्रणति और प्रस्थान दे।
हमको गौरव, गर्व तथा निज मान दे।'

वे अयोध्या को 'मनुष्यत्व मनुजात धर्म की धात्री तू' का संबोधन देते हैं। वे तत्कालीन संदर्भ में समष्टि के लिए व्यष्टि के हितों के बलिदान को श्रेयस्कर मानते हैं–

'निज हेतु बरसता नहीं व्योम से पानी।
हम हों समष्टि के लिए व्यष्टि बलिदान।।'

गुप्त जी ने साकेत के अष्टम सर्ग में राम के मुख से ही उनके कार्यों की संकल्पना प्रस्तुत करवाई है। राम के अनुसार वे इस कारण आए हैं कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी रक्षा का अधिकार मिले। संपूर्ण समाज का भार शासन को ही वहन करना पड़ता है। वे दीन–हीन, दुखी और पीड़ित मनुष्यों के उन्नयन के लिए आए हैं। उनका जीवन स्वयं कष्ट भोगकर दूसरों को सुख पहुँचाने के लिए है। वे राज्यभोग के बजाय दूसरों को राज–काज करने योग्य बनाने आए हैं –

'मैं आया उनके हेतु की जो तापित हैं,
जो विवश, विकल, बल-हीन, दीन, शापित हैं।
मैं राज्य भोगने नहीं, भुनाने आया।
हंसों को मुक्ता-मुक्ति चुगाने आया।
भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया।
नर को ईश्वरता प्राप्त कराने आया।।'

इस तरह गुप्त जी के राम नरत्व का उन्नयन करके उसमें ईश्वरत्व के गुणों का सन्निवेष करने के लिए आए हैं। वे इस धरती पर स्वर्ग का कोई संदेश लाने के बजाय इसे ही स्वर्ग बनाने के विराट उद्देश्य को लेकर आए हैं–

'संदेश नहीं मैं यहाँ स्वर्ग का लाया।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।।'

सारांश यह है कि मैथिलीशरण गुप्त ने राम को ब्रह्म का अवतार मानते हुए भी उन्हें आधुनिक युग के अनुरूप आदर्श मनुष्य के रूप में चित्रित किया है। वे आज्ञापालक पुत्र, मर्यादा पुरुषोत्तम, लोकरक्षक, लोकरंजक युगपुरुष और सत्य, न्याय एवं धर्म के प्रतिष्ठाता और त्याग की प्रतिमूर्ति हैं। वे सच्चे अर्थों मानव सेवी और लोकतांत्रिक नेता हैं जो सबके कल्याण और उत्कर्ष के लिए संकल्पित हैं। वे मनुष्यता को उत्कर्ष प्रदान करने वाले नायक हैं। वे धैर्य, संयम, त्याग और तपस्या की प्रतिमर्ति हैं। उनमें सारे मानवीय मूल्य संश्लिष्ट हो गए हैं। अपने इन्हीं महनीय और अनुकरणीय गुणों के कारण वे हर युग के लिए प्रेरक आदर्श हैं। उनसे स्वयं मनुष्यता गौरवान्वित हुई है। ऐसा युगांतरकारी व्यक्तित्व अन्यत्र दुर्लभ है। अत: हम कह सकते हैं कि भले ही गुप्त जी ने साकेत का सृजन उर्मिला को न्याय दिलाने के उद्देश्य से किया है परन्तु उसमें राम के साथ भी संपूर्ण न्याय हुआ है।

11–प्रसाद और निराला की दृष्टि से :– महाकवि जयशंकर प्रसाद बीसवीं शती के संपूर्ण विश्व के सबसे बड़े महाकवि हैं। इनके लेखन में भारतीय ज्ञान परंपरा और जातीय स्मृति संश्लिष्ट रूप में प्रस्तुत हुई है। प्रसाद के रचनात्मक लेखन में भारतीय वाङ्मय की प्रतिभा बोलती है जो भारतीयों को बड़े स्वप्न देखने और उसे सत्य करने के लिए प्रेरित करती है। वे अपने जीवन–दर्शन और जीवन–स्वप्न का प्रमाणीकरण करने वाले कलाकार हैं। इनके विराट एवं बहु–आयामी व्यक्तित्व में जो आत्मप्रसार और आत्मपरिष्कार का भाव है वह संपूर्ण

भारत तथा हिंदी जाति का समवेत सांस्कृतिक अवचेतन है। इन्होंने कालिदास के रघुवंश के 16वें सर्ग के आधार पर कुश द्वारा अयोध्या के उद्धार पर लंबी कविता लिखी है। इन्होंने संपूर्ण भारतीय परंपरा में वरुण, राम और बुद्ध को विवेक तथा इंद्र, कृष्ण और शिव को आनंद का प्रतिनिधि देवता माना है। इनके द्वारा रचित एक कविता राम पर उपलब्ध होती है जिसमें राम के व्यक्तित्व का संश्लिष्ट चित्र उभरता है–

'जीवन जगत के, विकास विश्व वेद के हो
परम प्रकाश हो, स्वयं ही पूर्णकाम हो।
विधि के विरोध हो, निषेध की व्यवस्था तुम
खेद भय रहित, अभेद अभिराम हो।
कारण तुम्हीं थे, अब कर्म हो रहे हो तुम्हीं,
धर्म कृषि मर्म के नवीन घनश्याम हो।
रमणीय आप महामोदमय धाम तो भी,
रोम-रोम रम रहे कैसे तुम राम हो।'

प्रसाद के विपुल लेखन में राम के प्रति उक्त कविता का भी विशेष महत्त्व है। जहाँ तक सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का प्रश्न है तो इन्होंने अपने जीवन की श्रेष्ठतम कविता 'राम की शक्तिपूजा' शीर्षक से लिखी है जो लंबी कविता के रूप तंत्र में महाकाव्यात्मक औदात्य और वैभव परिपूर्ण है। यह कविता निराला की अपराजेय प्रतिभा का घोषणा-पत्र भी है। राम-रावण युद्ध के दौरान राम द्वारा शक्ति की मौलिक परिकल्पना तथा दृढ़ साधना द्वारा माता दुर्गा से विजय वर प्राप्त करना इस कविता का वर्ण्य-विषय है। यह कविता अपने संश्लिष्ट रचनात्मक तंत्र के कारण विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है।

निराला के राम एक योद्धा हैं जो दिनभर रावण पर अपने दिव्य बाण चलाते हैं परन्तु स्वयं महाशक्ति रावण की रक्षा करती हैं। राम युद्ध के अनिर्णीत फल से हतप्रभ और दुखी हैं। राम के चारों ओर गहन अंधकार है और उनके समक्ष अत्याचारी रावण अट्टहास कर रहा है। ऐसी स्थिति में जाम्बवान राम को 'आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर' कहकर उनमें साधना के प्रति दृढ़ विश्वास भरते हैं–

'रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त,
तो निश्चय तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त।'

निराला के राम शक्ति की आराधना महिषासुर मर्दिनी और सिंह वाहिनी दुर्गा के रूप में करते हैं। निराला निराशा एवं पराजय बोध के आघात से उबरने के लिए राम जैसे अपराजेय योद्धा के मन में गहन साधना का संकल्प पैदा करते हैं। राम के लिए जो सामने पर्वत है वह दुर्गा और उनका वाहन सिंह है। दसों दिशाएँ दुर्गा के दस हाथ हैं। उनके ऊपर आकाश में मस्तक पर चंद्रमा को धारण करने वाले शिव शोभित हैं। विश्वसत्ता में आत्मसत्ता के संधान का यह महाकाव्यात्मक प्रयास है। इसके लिए राम हनुमान से 108 कमल मँगवाते हैं। राम साधनावस्था में इन्हें दुर्गा के श्रीचरणों में अर्पित करेंगे। राम की साधना गहनतर होती गई और छठवें दिन उनका मन आज्ञा चक्र पर स्थिर हो गया। साधना के अंतिम क्षण में दुर्गा एक कमल पुष्प चुरा लेती हैं और जब राम 108 वाँ कमल लेने के लिए हाथ बढ़ाते हैं तो कुछ नहीं मिलता। उनका मन फूट पड़ा –

'धिक जीवन को जो पाता ही आया विरोध।
धिक साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।।'

राम की आँखों में आँसू भर आए, लेकिन 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका' वाला समानांतर मन यह स्मरण करके उत्साहित हो उठता है–

'कहतीं थीं माता मुझे सदा राजीवनयन!
दो नीलकमल हैं शेष अभी, यह पुनश्चरण।'

पूरा करता हूँ देकर मात: एक नयन।'और जैसे ही राम अपनी एक आँख निकालकर माँ दुर्गा के चरणों में अर्पित करने हेतु अपना दाँया हाथ बढ़ाते हैं वैसे ही ब्रह्मांड काँप उठा और दुर्गा प्रकट हुईं। वे 'होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन' कहते हुए राम के बदन में लीन हो गईं। इस तरह निराला के राम एक अपराजेय योद्धा के साथ-साथ अप्रतिम साधक भी हैं जो अपनी दृढ़ साधना से महाशक्ति को अपनी ओर करते हैं। इस कारण उनकी विजय सुनिश्चित हुई। इस तरह निराला ने राम के साधनावस्था से सिद्धावस्था में पहुँचने की प्रक्रिया का चित्रण किया है।

निष्कर्ष–इस प्रकार स्पष्ट है कि वाल्मीकि से लेकर वर्तमान समय तक के महाकवियों ने बदलते परिवेश की सापेक्षता में राम के स्वरूप का चित्रण किया है। निराला के बाद भी नरेश मेहता ने संशय की एक रात शीर्षक से खंड काव्य तथा डॉ. रवीन्द्र शुक्ल ने शत्रुघ्न चरित और उद्भ्रांत ने त्रेता नामक महाकाव्य लिखा है। इन प्रबंध काव्यों में राम के व्यक्तित्व का चित्रण आधुनिक युग की चुनौतियों और विमर्शों की सापेक्षता में हुआ है। राम का आदर्श एवं अनुकरणीय चरित्र हर युग के कवि में अनंत आकर्षण पैदा करता है। चूँकि राम भारत की आत्मा और भारतीय अस्मिता-बोध के प्रतीक हैं अत: उनपर लेखनी चलाए बिना कोई बड़ा कवि निश्चिंत नहीं हो पाता। राम भारतीय परंपरा और सर्वश्रेष्ठ सार्वभौम-शाश्वत वृत्तियों के साकार विग्रह हैं। वे यदि एक ओर अरुण, अकल, अनीह, अखंड, अनवद्य और अनुपमेय हैं तो दूसरी ओर करुणा सागर, दीनदयाल, गरीब नेवाज, भक्त वत्सल, पतित पावन, मर्यादा पुरुषोत्तम, दृढ़ साधक और शक्ति, शील एवं सौंदर्य के संश्लिष्ट रूप हैं। वे ऐसे कवित्वपूर्ण, सर्वगुण सम्पन्न एक अप्रतिम व्यक्तित्व हैं जो मानवीय मूल्यों, संदेशों एवं उच्चादर्शों से अनुप्राणित होकर गर्वोन्नत हिमालय की भाँति युग-युगांतर तक वसुंधरा रूपी मनुष्यता का मानदंड बना रहेगा। उसका पथ-प्रदर्शन करता रहेगा।

1102-सी-विंग, लक्षचंडी हाइट्स,
कृष्णवाटिका मार्ग, गोकुलधाम गोरेगाँव,
पूर्व मुंबई-400063 (महा.)
मो.- 9167921043

केशव के राम

– गंगा प्रसाद बरसैंया

जन्म – 6 फरवरी 1937।
जन्म स्थान– भौंरी, चित्रकूट (उ.प्र.)।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी।
रचनाएँ – सैंतीस पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – हिंदी प्रचारणी सभा उ.प्र. के 'साहित्य भारती' सम्मान सहित अनेक सम्मानों से अलंकृत।

राज वैभव के बीच अलंकारी बाह्य जीवन जीते हुए क्षणिकता और निरर्थकता का आंतरिक बोध होने पर किसी क्षण ईश्वरीय सत्ता की निकटता पाने का चाव आचार्य केशवदास में जागृत हुआ। उन्हें लगा कि उनके पूर्ववर्ती रामगायक महर्षि वाल्मीकि जैसे उन्हें उपदेश दे रहे हों कि व्यक्ति–गान की बजाय ईश्वरगान की सार्थकता है। यह बात अपने जीवन में तुलसीदास ने भी अनुभव की थी–'**कीन्हें प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुन गिरा लगत पछिताना।**' और अकबरी आमंत्रण को अस्वीकारने वाले संत कुंभनदास ने भी–'**संतन कहा सीकरी सो काम। आवत जात पनहिंया टूटीं बिसरि गयो हरिनाम।** सूरदास ने भी वेदना व्यक्त करने हुए कहा था–'**जाको मुख देखत दुख उपजत ताकौ राजा राम कहें।**'

इसीलिए स्वप्न में प्राप्त वाल्मीकि के निर्देश को स्वीकारते हुए सं. 1658 की कार्तिक शुक्ल बुधवार को 'रामचंद्रिका' की रचना कवि केशवदास ने की। पूर्ववर्ती रामकथाओं से भिन्न आचार्यत्व की गरिमा से मंडित होने पर भी इस कृति ने केशवदास को महाकवि की श्रेणी में प्रतिष्ठित किया, क्योंकि राम का जीवनवृत्त ही व्यक्ति को महाकवि बनाने वाला है। तभी तो आधुनिक राष्ट्रकवि स्व. मैथिलीशरण गुप्त ने स्वीकारा था–

'राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाय सहज संभाव्य है।'

लोगों का यह आरोप तो निराधार है कि रामचंद्रिका में केशव का लक्ष्य भक्ति–भावना का निर्वाह न होकर केवल पांडित्य प्रदर्शन था। वस्तुत: वे भी राम की आराधना परब्रह्म परमात्मा, कृपालु और गरीब–निवाज के रूप में करते हैं। हाँ, उनके राम ईश्वरीय असाधरणत्व के साथ ही रामत्व की महिमा से भी सम्प्रक्त हैं। केशव उस ईश्वरीय राम के गायक हैं जो राजा के रूप में सारे कार्य एवं विचार सम्पादित करते हैं। वे अपने परब्रह्म राजा राम का परिचय देते हुए लिखते हैं –

बोलि न बोल्यो बोल दयों फिर ताहि न दीन्हों।
मारि न मारयों शत्रु क्रोध मन वृथा न कीन्हों।
जुरि न मुरै संग्राम लोक की लीक न लोपी।
दान सत्य सन्मान सुयश दिशि विदिशा ओपी।
मन लोभ मोह मद काम वश भये न केशवदास मणि।
सोई परब्रह्म श्री राम हैं अवतारी अवतार मणि।

वे स्वयं कहते हैं कि जिनका यश सुर–नर–मुनि सभी गाते हुए नहीं अघाते ऐसे सौंदर्य–शिरोमणि, त्रिकालदर्शी, परमप्रभु का यशगान करके मैं भी संपूर्ण पापों से मुक्त हो जाऊँगा।

जिनको यश हंसा जगत प्रशंसा मुनि जन मानस रंता।
लोचनि अनुरूपनि श्याम सरूपनि अंजन अंजित संता।
कालत्र्यदर्शी निर्गुणपर्शी होत बिलम्ब न लागे।
तिनके गुण कहिहौ सब सुखलहिहौ पाप पुरातन भागे।

उनकी मान्यता है कि राम ही नहीं, उनका नाम भी उतना ही महिमावान है। जिनके गान ऋषि–महर्षि, तपस्वी–साधक, संत, वेद–पुराण करते रहे और आदि–अंत नहीं पा सके, उन अनादि ब्रह्म–राम का नाम सभी प्रकार की सिद्धि और मुक्ति देने में सक्षम है। जिन्हें वेद और दर्शन चिरंतन मानते हैं–

पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परिपूरण बतावैं न बतावैं और उक्ति को।
दरसन देत जिन्हैं दरसन समुझैं न नेति-नेति कहै वेद छाँड़ि आनि युक्ति को।
जानि यह केशोदास अनुदिन राम राम रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देहि अविणमाहि गुण देहि गरिमाहि भक्ति देहि महिमाहि नाम देहि मुक्ति को।

ऐसे विश्व को प्रकाश और चेतना प्रदान करने वाले स्वयं प्रकाशवान राम के यश–वर्णन के लिए ही विभिन्न छंदों से अलंकृत 'रामचंद्रिका' की रचना केशवदास ने की थी। लिखते हैं–

जगत जाकी ज्योति जग एक रूप स्वच्छंद।
रामचंद्र की चंद्रिका वरणत हौं बहुछंद।

केशव के राम केवल सौंदर्यनिधान और गरीब–निवाज तथा परब्रह्म की दिव्य असाधारणता से ही युक्त नहीं हैं, पिता की कठोर आज्ञाओं का पालन करने वाले राम नरेशों के नरेश और वीरों के वीर योद्धा भी हैं। गुरु आज्ञा से ताड़का–सुबाहु और राक्षस को तो मारा ही, उस धनुष को भी तोड़ा जिसे उठाने में बड़े–बड़े योद्धा भी सफल नहीं हो

सके थे। उनकी मुखाकृति आश्वस्तिकारी है–

सातहु दीपन के अवनीपति हारि रहे जिय के जब जाने।
बीसबिसे व्रत भंग भयो सो कहो अब केशव को धनु ताने।
शोक की आगि लगी परिपूरण आइ गये धनश्याम बिहाने।
जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरु पुण्य पुराने।

केशव के राम विवेकवान राजपुत्र हैं। वे क्षत्रियधर्म को समझते हैं। इसीलिए जब ताड़का सामने आई तो नारी पर शस्त्र प्रहार करने पर वे हिचकिचाने लगे। बाण उठाया पर चला नहीं –

बान तानि राम पै, न नारि जानि छाँड़ि जाय।

वह तो जब विश्वामित्र ने कहा–

द्विज दोषी न विचारिये कहा पुरुष कह नारि।
रामविराम न कीजिए बान ताड़का मार।

जब कहीं राम ने ताड़का पर प्रहार कर उसे देहमुक्त किया।

केशव के राम नरेशों के नरेश ही नहीं हैं, अपितु शील और स्वभाव में भी सर्वोपरि हैं। आनंदनिधान, सुरपालक राम पृथ्वी, ब्रह्माण्ड और गायों के रक्षक हैं। वे मन–वाणी और कर्म से उदार तथा सरल हैं। तभी तो ऋषिप्रवर विश्वामित्र ने उनका परिचय देते हुए कहा था कि–

दानिन के शील परदान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिये सुभाय के।
दीप दीपहूँ के अवनीपन के अवनीप पृथु सम केशोदास दास द्विज गाय के।
आनंद के कंद सुरपालक से बालक ये परदारप्रिय साधु मन वच काय के।
देह धर्म धारों पै विदेहराज जू से राज राजत कुमार ऐसे दशरथराय के।

शक्ति शील सौंदर्य के आगार राम द्वारा धनुष देखने की इच्छा व्यक्त करने पर जनक जी ने उसे वज्र से कठोर, विशाल, कराल, प्रचंड बताकर राम द्वारा उठाए जाने पर आशंका व्यक्त की, क्योंकि राम तो सुकुमार हैं–'कोमल कमल पाणि राम कैसे ल्यावई।' यह सुनकर विश्वामित्र ने राम को धनुष उठाने की आज्ञा दी। राम ने आज्ञापालन करते हुए धनुष को उठाया ही नहीं, बल्कि तोड़ भी दिया –

रामचन्द्र कटि सों पटु बांध्यों। लीलयेव हर को धनु साध्यो।
नेकु ताहि कर पल्लव सों छवे। फूल मूल जिमि टूक करयो द्वे।

तत्काल बाद जनकनंदिनी सीता ने धनुष–भंगकर्ता दशरथनंदन राम को पुष्पहार पहनाकर वरण ही नहीं किया, अपने आपको मन से समर्पित भी कर दिया। देवताओं ने पुष्पवर्षा की और मंगलवाद्य भी बजाए –

सीता जू रघुनाथ को अमल कमल की माल।
पहिराई जनुसबन की हृदयावलि भूपाल।
सीय जहीं पहिराई। रामहिं माल सुहाई।
दुंदुभि दैव बजाये। फल तहीं बरसाये।

केशव के राम सुकुमार सौंदर्य के धनी होने के साथ ही स्नेहियों के लिए विनम्र तथा अहंकारियों के लिए सबल शक्तिधारी भी हैं। धनुष–प्रसंग को लेकर परशुराम ने अहंकारवश सभी को ललकारते हुए अपनी वीरता का बार–बार बखान किया। दशरथ सहित लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के लिए अपशब्दों का प्रयोग किया तो भी विनत राम उन्हें विनम्रतापूर्वक संतुष्ट और शांत करने का प्रयास करते रहे। परंतु परशुराम का क्रोध शांत होने की बजाय बढ़ता ही चला गया। कभी दशरथ का नाम मिटाने की बात करते रहे –

बोरौं बसै रघुवंश कुठार की धार में बारन बाजि सरत्थहिं।
जो धनु हाथ धरै रघुनाथ तो आज अनाथ करो दशरत्थहिं।

और कभी रघुवंश का रक्तपान किए बिना सुख न मिलने की भावना व्यक्त करते रहे –

'तौ लों नहीं सुख जौं लहु तू रघुवंश को सोन सुधा न पियों रे।'

कभी तो सीधे राम से ही कह देते हैं –

'राम तिहारेह कठ को सोनित, पान को चाहै कुठार कैयोई।'

किंतु जब परशुराम ने राम के स्वाभिमान पर चोट करते हुए यह कहा कि–

राम सुबंधु संभारि छोड़त हौं सर प्रानहर।
देहु हथूयारन डारि हाथ समेति बेगि दै।

तब राम का शील मानों विदीर्ण हो गया। अंततः परशुराम को ललकारते हुए राम ने कहा –

भगन भयो हर धनुष सार तुमको अब सालैं। . . .
मृगुनंद संभारु कुठार मैं कियो सरसन युक्त सर।

राम के आक्रोश से सभी लोक–लोकपति प्रकोपित हो उठे। विनाश की घड़ी निकट आती दिखाई पड़ी। परशुराम को सत्यबोध हुआ और वे अपना धुनष देकर राम की महत्ता स्वीकार करते हुए चले गए। अहंकार की पराजय हुई।

केशव के राम सभी प्रकार की नीतियों और आदर्शों के ज्ञाता ही नहीं, उनके पालक और अनुकर्ता भी हैं। इसीलिए कैकेई द्वारा इच्छित वर माँगने पर पिता दशरथ की आज्ञा का पालन उन्होंने सहर्ष किया। माता कौशिल्या द्वारा क्षोभ और आक्रोश व्यक्त किए जाने पर वे नीति–धर्म की बातें बताते हुए माता को समझाने की चेष्टा करते हैं –

अन्न देइ, सीख देइ, राख लेइ प्राण जात।
राज बाप मोल ले 'करे' जो दीह पोष गात।
दास होइ, पुत्र होइ, शिष्य होइ कोई माइ।
शासना न मानई तो कोटि जन्म नर्क जाइ।

वनवास के समय जब दुखी भरत राम से अयोध्या लौटने का आग्रह करते हैं तो वहाँ भी राम पिता की आज्ञापालन को सर्वोपरि बताते हैं। भरत के यह कहने पर कि –

घर को चलिए अब श्री रघुराई। जन हौं तुम राज सदा सुखदाई।

यह बात कही जल सों गल भीन्यो। उठि सोदर पाइ परे तब लीन्यो।
राम तुरंत कहते हैं–

राज दियों हमको वन रूरो। राज दियो तुमको अब पूरो।
सो हमहूं तुमहूं मिलि कीजै। बाप को बोल न नेकहू छीजै।
राजा को अरु बाप को बचन न मेटै कोइ।
जो न मानिए भरत तो मारे को फल होइ।
राक्षसों का संहार करने मुनिजनों को अभय तथा पृथ्वी को पापमुक्त करने का लक्ष्य लेकर अवतरित होने वाले राम अनेक असाधारण और असंभव कार्य तो करते ही हैं, बहुत से प्रसंगों में वे सामान्य व्यक्ति की लीला करने से भी नहीं चूकते। एक ओर खर-दूषण जैसों का संहार करते हैं, तो दूसरी ओर जटायु को गले लगाते हैं, शबरी का आतिथ्य स्वीकारते हैं लेकिन सीता का हरण हो जाने पर सामान्य विरही की तरह रुदन करते हुए सबसे यही पूछते हैं –

सिय देहु बताय कृपा करिए।
सिय देहु बताय सहाय करौ।
सुग्रीव द्वारा दिए गए सीता के वस्त्रों को बार-बार कंठ से लगाकर रोते हैं। पावस रितु में वियोगी राम अपनी व्यथा को व्यक्त करने से रोक नहीं पाते –

कलहंस कलानिधि खंजन कंज कछू दिन केशव देख जिये।
गति आनन लोचन पायन के अनुरूपक से मन मानि लिये।
कहि काल कराल ते शोधि सबै हठि के बरसा मिस दूरि किये।
अब धौं बिन प्रान प्रिया रहिहैं कहि कौन हितू अवलम्ब लिये।
सीता के वियोग में राम कितने दुर्बल और दु:खी हैं, इसका अनुमान हनुमान के उस कथन से लगाया जा सकता है जब वे सीता से मुद्रिका के न बोलने का कारण बताते हुए कहते हैं –

तुम पूछत कहि मुद्रिके मौन होते यहि नाम।
कंगन की पदवी दई तुम बिन या कंह राम।
यही विरही दुखी राम जब लंका-विजय के लिए सेना लेकर प्रयाण करते हैं तो बड़े-बड़े भूधर धराशायी हो जाते हैं, समर्थ शासन शराणगत हो जाते हैं, पृथ्वी हिलने लगती है, शेषनाग घबरा जाता है। लेकिन इसके बाद भी राम भक्त-वत्सल और कृपालु हैं। इसीलिए रावण से अपमानित विभीषण जब राम के पास आता है तो राम उसे स्नेह से स्वीकारते हुए आश्वस्त करते हैं–

श्री रामचंद्र अति आरतवंत जानि।
लीन्हों बोलाय शरणागत सुखदानि।
लंकेश आउ चिरजीवहु लंकधाम।
राजा कहाऊ जौं लगि जग राम नाम।
राम सदाचार के रक्षक और अहंकार के शत्रु हैं। उनका तो अवतरण ही भुमिभार उतारने के लिए, धर्म के संरक्षण और आसुरों के संहार के लिए हुआ है। अहंकारी रावण अपने आपको अजेय, अविनाशी तथा सर्वशक्तिशान मानता हैं क्योंकि –

महामीच दासी सदा पाइ धोवे।
प्रतिहार हरै के कृपा सूर जोवे।
उसको रामदूत अंगद समझाते हुए स्पष्ट कहता है–

केशव काम को राम बिसारत और निकाम न कामहिं ऐहै।
चेति रे चेति अजौं चित अंतर-अंतर लोक अकेलोई जैहै।
हाथी न साथी न घोरे न चेरे न गांउ न ठांउ को ठांउ बिलैहै।
तात न मात न पुत्र न मित्र न वित्त न तीय कहीं संग रैहै।
लेकिन अहंकारी रावण नीति की, हित की बात मूढ़तावश नहीं मान सका। अंतत: मेघनाद, कुंभकर्ण सहित राम के हाथों वह भी मारा गया।

केशव के राम दृढ़ प्रतिज्ञ और वचनप्रतिपालक हैं। एक ओर शक्ति लगने पर अचेत भाई लक्ष्मण को गले लगाकर विलाप करते हैं –

लोचन बाहु तु ही धनु मेरो। तू बल विक्रम बारक हेरो।

तो दूसरी ओर कुंभकर्ण-मेघनाद का वध करने के बाद रावण के संधि-प्रस्ताव को अस्वीकारते हुए कहते हैं –

संधि की बातन को प्रतिउत्तर आपुन ही कहिए हित कै कै।
दीन्ही है लंक विभीषण को अब देहि कहा तुमको यह दै कै।
राज्य पाकर भी राम में वैभव-वासना नहीं है। वे तब भी विरक्ति और मुक्ति की बात करते हैं। तभी तो वशिष्ठ जी उनसे कहते हैं –

तुम आदि मध्य अवसान एक। अरु जीवन जन्य समुझो अनेक।
तुमही जो रची रचना विचारि। तेहि कौन भांति समुझौं मुरारि।
सब जानि बूझियत मोहि राम। सुनिये सो हों जग ब्रह्म राम।
तिनके अशेष प्रतिबिंब जाल। तेहि जीव जानि जग में कृपाल।
ऐसे परमप्रभु राजा राम के राज्य में कोई दु:खी नहीं हो सकता। कोई अन्याय और विषमता की कल्पना भी नहीं कर सकता। सर्वत्र शांति, सुख और सम्पन्नता है–

सबै जीव हैं सर्वदानंद पूरे। क्षमी संयमी विक्रमी साधु पूरे।
युवा सर्वदा सर्व विद्या विलासी। सदा सर्व सम्पत्ति शोभाक प्रकाशी।
सबै शील सौंदर्य सौगंधधारी। सबै ब्रह्मज्ञानी गुणी धर्मधारी।
सबे पुत्र पौत्रादि के सुकूव साजें। सबै भक्त माता पिता के बिराजै।
ऐसे गुण-सम्पन्न हैं महाकवि केशव के राम। केशव के यशस्वी राम को ठीक से समझने के लिए 'रामचन्द्रिका' का गहन अध्ययन आवश्यक है।

एच. आई.जी.-124, भरहुत नगर,
सतना-485001 (म.प्र.)
मो.-9425376413

राम! तुम मानव हो ईश्वर नहीं हो क्या

- सत्येन्द्र शर्मा

जन्म - 27 जुलाई 1954।
शिक्षा - एम. ए., पी-एच. डी.।
रचनाएँ -सात पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान - शम्भुनाथ सिंह न्यास सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

इसके बावजूद कि राम मुझे मेरी घुट्टी में मिले हैं और माता-पिता सहित परिजनों के, मेरी अबोधावस्था में ही उनकी बाँह गहकर चलते रहने के मौन-मुखर सन्देश को मैंने अपनी चेतना नाभि में कस्तूरी की भाँति गाँठ लिया है और तद्नुरूप जीवन के छ: दशकों से अधिक की जीवन-यात्रा पूरी करने पर भी उन्हें लेकर अपने चतुर्दिक परिवेश से अनवरत और अन्तहीन उठते सवालों से नहीं बिंधा हूँ और भव-सागर से उठती प्रश्नाकुल लहरों से नहीं भीगा हूँ, ऐसा कहना सच से किनारा करना होगा। श्री राम मेरे लिए जिज्ञासा, कौतूहल, रहस्य, रोमांच, आशंका, अविश्वास, आशा-विश्वास, आस्था-अनास्था, अस्ति-नस्ति के दोलायमान झूले में पेंगे भराते रहे हैं। यदि वे रूप हैं तो दृश्यमान क्यों नहीं हैं? यदि वे ध्वनि हैं तो सुनाई क्यों नहीं देते, यदि वे अरूप हैं तो किसी रूप भी में अपने होने का अहसास क्यों नहीं कराते! यदि वे ब्रह्म हैं और परम शक्तिशाली हैं तो स्वयं उन्हें अपनी जीवन-लीला में इतने संघर्षों और कठिन परीक्षाओं से क्यों गुजरना पड़ा है, और मान भी लिया जाए कि वे उनकी मानवीय क्रीड़ाएँ थीं तो अब कातर मनुष्यों को आसुरी शक्तियों से बचाने नृसिंह-रूप धारण कर खम्भे से प्रकट क्यों नहीं होते। यह न सही। पर जिस रावण-प्रवृत्ति-रूप का आपने अन्तिम संस्कार कर दिया था, वह आज दशमुख से अधिक सहस्त्रमुखी होकर हमारे व्यक्ति-परिवार और सामाजिक जीवन को लहूलुहान और हलाकान क्यों कर रहा है?

जिज्ञासाओं-आशंकाओं की भँवर से उठने वाले और भी बुलबुले हैं -राम दशरथ-नन्दन हैं अर्थात् इतिहास पुरुष हैं? तो ब्रह्म क्यों हैं? और ब्रह्म हैं तो उन्हें मनुषवत् लीलाचारी क्यों होना पड़ा? निर्गुणियाँ कबीर तो 'राम नाम' की अभ्यर्थना करते हुए भी उसका कुछ और ही 'मरम' जनाना चाहते हैं। कहा जाता है कि राम, वाल्मीकि के समकालीन हैं इसलिए उनका वही कथावृत्त प्रामाणिक है, तो फिर कालिदास, कम्ब, कृतिवास और भवभूति के अलग-अलग राम क्यों हैं? मैथिलीशरण गुप्त, निराला और नरेश मेहता के भी भिन्नवर्णी राम हैं। राम एक, रूप अनेक-'प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।' क्या पता राम के इन्हीं शताधिक निर्मित रूपों को देखकर विस्मय-विमुग्ध किन्हीं डॉ. भगवान सिंह को 'अपने-अपने राम' की अवतरण मीमांसा करना पड़ी हो। मेरी विनम्र अवधारणा तो यह है कि इस आर्यावर्त्त के धराधाम में शायद ही कोई ऐसा हो जो राम का मुखापेक्षी न हुआ। हो और जो नहीं हुआ वह उनके होने पर ही प्रश्न चिह्न न लगाता आया हो। यानी राम उनके चिन्तन के केन्द्र में तो हैं ही।

आदि कवि वाल्मीकि के राम-कथा लेखन से लेकर प्राकृत के अभ्युदय काल तक राम भले ही संस्कृत कवियों विशेषकर वाल्मीकि के रामायण से सार्वजनिक जीवन में अवतरित हुए हों किन्तु यह सर्वमान्य सा तथ्य है कि समूचे भारत में विशेषकर हिन्दी भाषी राज्यों और उनकी सीमाओं को लाँघकर दक्षिणी राज्यों तथा पूर्वोत्तर और पश्चिमी कोनों में भी वे गोस्वामी तुलसीदास के 'मानस' के कारण ही लोकव्यापी हुए हैं। और लोक व्याप्ति भी ऐसी कि जिसने अपने रचनाकाल से ही विदेशी आक्रान्ताओं से चोट खाए स्थूल शरीर और सूक्ष्म मन को राम की चेतना से आश्वस्त किया और जिजीविषा दी। यह लोक व्याप्ति समाज में जितनी गहरी थी उतनी ही युगान्तर जीवी भी। इसीलिए अपने रचे जाने के सैकड़ों वर्षों बाद भी इसके नायक राम नए भारत के प्रमुख सर्जकों में से एक-महात्मा गाँधी-के हृदयहार और उनके राज्य विषयक चिन्तन 'रामराज्य' की संकल्पना का मंत्र बनकर उभरते हैं। श्रीराम के व्यक्तित्व और कृतित्व को आदर्श मानने के कारण गाँधी के लिए यह अकारण न था और आकस्मिक इसलिए नहीं था कि उनकी ईश्वरीय सत्ता और उसके प्रभूत उनकी चमत्कारिक शक्ति से अधिक उनके 'सत्याग्रही' और आत्मानुशासित, मर्यादित तथा पारदर्शी चरित्र के एकनिष्ठ-कायल हो चुके थे। जिसका बहुलांश परिचय उन्हें गोस्वामी तुलसीदास के 'राम' अथवा उनके 'मानस' से मिला था। और राम के प्रति उनका यह आकर्षण उनके भारतीय सार्वजनिक जीवन में काम करने के लिए लोकव्यापी राम की छाँह गहना जनता में अपनी गहरी पकड़ बनाने की आकांक्षा और स्वार्थ से प्रेरित न था-वरन् राम उनके जीवन के स्थाई और अन्तिम नायक बन चुके थे-इसके बावजूद कि इसके पूर्व वे रस्किन के 'अंटू द लास्ट'

का अध्ययन, टालस्टॉय का नैकट्य और ईसाइयत का परिचय पा चुके थे। और यहाँ तक कि दक्षिण अफ्रीका में अपनी उदार यशस्वी मनस्विता के कारण एक सत्तर वर्षीय महिला से ईसाइयत अपना लेने के वात्सल्य भरे आमंत्रण को विनम्रत: अस्वीकार कर वे पूरे आत्मविश्वास से यह घोषणा कर सके कि–'ईसाई, मुसलमान आदि उनके धर्मों का मंथन करने के बाद भी मैं हिन्दू धर्म से चिपका रहा हूँ, हिन्दू धर्म पर मेरी श्रद्धा दुर्दम्य है।' **(राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी : न.द.अभ्यंकर; नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इन्डिया, नई दिल्ली, पृ. 412)।**

गाँधी की इस दुर्दम्य आस्था के पीछे दो मुख्य प्रेरणाएँ थीं। दर्शन और सिद्धान्त के स्तर पर गीता का 'कर्मवाद' और व्यवहार वाद के स्तर पर राम का जीवनगत आदर्श। वे राम में मनुष्य की उन सभी सद्प्रवृत्तियों का अक्षय कोष पाते हैं जो व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और अन्तत: विश्व मानवतावाद के लिए श्रेयस्कर है। सत्य–निष्ठा, त्याग–तप, दान–दयालुता, अहिंसा, अपरिग्रह–आत्मसंयम, निर्वैर्य–निष्कामता, सरलता–स्नेह, शुचिता, क्षमा, करुणा, न्याय की प्रतिष्ठा–पक्षधरता आदि और सर्वाधिक आकर्षक पक्ष–प्रेम के साम्राज्य की स्थापना, ऊँच–नीच, छोटे–बड़े, अमीर–गरीब, वर्ण–अवर्ण रहित प्रेम की विशदता–'रामहि केवल प्रेम पियारा' की जागतिक सच्चाई का दृष्टान्त। क्या ये सभी तत्व धर्म के उपादान नहीं हैं! क्या ये सभी धर्म का समुच्चय नहीं रचते! क्या इन प्रवृत्तियों से संचालित संज्ञाओं का समवेत आकार धर्म का रूप धारण नहीं करता। और चूँकि राम इन प्रवृत्तियों के आगार हैं, और धर्म–चेतना के पुंज–स्वरूप और शृंगार हैं अत: वे ऐसे धर्म के प्रतीक पुरुष हैं, जो चमत्कारों से अधिक उस गुणशीलता से परिचालित और प्रणम्य हैं जो मनुष्य मात्र के लिए अभिप्रेत हैं; इसीलिए साहित्य में राम के आदिकालीन अवतरण से लेकर आधुनिक युग तक उनकी अभ्यर्थना का यही कारण बना हुआ है –

'राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।' (साकेत–मैथिलीशरण गुप्त)

भारतीय सार्वजनिक जीवन के रंगमंच में अपनी सक्रिय भूमिका के एक दशक पूर्व गाँधी जी की लिखी 'हिन्द स्वराज्य' (1909 ई.) में सत्याग्रह, आत्मबल, स्वदेशी, स्वदेशाभिमान, गौ सरंक्षण, करुणा–बल, हिन्द सभ्यता बनाम शैतानी सभ्यता तथा 'प्रेम और सत्य की धारा' आदि पदों में जो अवधारणाएँ स्थापित की गईं हैं उनकी सूक्ष्म डोर पकड़कर यदि उनके मूल अभिप्राय तक जाएँ तो हम उस स्रोत पर पहुँचेंगे हैं जिसे सनातनता का गोमुख कहा जाता है और भारतीय जनों के लिए जिसका सर्वांङ्ग स्वरूप राम के जीवन में प्रकट होता है। गाँधी अपने शारीरिक और मानसिक परिपक्वावस्था (40 वर्ष) में इस महादेश की भौतिक और सांस्कृतिक संरचना के निमित्त जो रेखाएँ उकेरते हैं, उनमें राम का दर्शन घनीभूत और प्रत्यक्ष रूप से सामने आता है; उन्हीं के शब्दों में–'कवि तुलसीदास जी ने लिखा है–दया धरम का मूल है, पाप मूल अभिमान/तुलसी दया न छाँड़िए जब तक घट में प्राण। मुझे तो यह शब्द शास्त्र–वचन जैसा लगता है। जैसे दो और दो चार ही होते हैं, उतना ही भरोसा मुझे ऊपर के वचन पर है। दयाबल, आत्मबल है, सत्याग्रह है। अगर यह बल नहीं होता, तो पृथ्वी रसातल (सात पातालों में से एक) में पहुँच गई होती।' **(हिन्द स्वराज्य; मो.क. गाँधी; पृ. 70, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी)**

किंचित विचार करें तो देखेंगे कि इस धारणा में इस देश की जातीय और सांस्कृतिक चेतना के प्रवक्ता–कवि गोस्वामी तुलसीदास, उनके आस्था केन्द्र राम और उनका जीवन–दर्शन तो मुखर है ही, रसातल में चले जाने की आशंका प्रकट करने वाली सनातनीय शब्दावली भी है। इस वामनावतारी पुस्तिका में व्यक्ति–राज्य–विश्व के निर्माण की जो तस्वीर है वह उस रामराज्य की ही दिशा कल्पना है जिसे धरती पर उतारा जा सकता है, किन्तु उसके लिए बड़ी तैयारी चाहिए। बड़ा स्वप्न, बड़ा संकल्प, बड़ा धैर्य, सत्यनिष्ठा, सात्विकता, संवेदना, त्याग शुचिता, शिक्षा, पारदर्शिता और आत्मबल। व्यष्टि–जीवन संकीर्ण, आत्मकेन्द्रित, स्वार्थपूरित, सत्ताकामी, और दो रंगी हो तो श्रेष्ठ समष्टि–जीवन की कल्पना और प्राप्तय कैसे संभव है? व्यक्ति और विश्व समाज के संचालन के लिए अलग–अलग बटखरे नहीं हो सकते। और यह अर्हता सामान्य जन की अपेक्षा नेतृत्व कर्त्ता व्यक्ति और समूह की अधिक है क्योंकि उसका कार्य व्यवहार और आचरण प्रणाली ही जनता के लिए अनुकरणीय है–'महाजनो एन गता: स पन्था:।'

रामकर्त्ता हैं और राज्य व्यवस्था उनकी निर्मिति है, स्वभावत: वह रामराज्य है। यह पद अपने प्रादुर्भाव से लेकर अब तक जितनी बहुविधि दिशाओं, दृष्टियों, विचारधाराओं, भिन्न–भिन्न मतावलम्बियों आदि से घिरा है, वैसी नियति शायद ही किसी शब्द की हुई हो। पहला तो मारक प्रहार इसके राजतंत्रीय स्वरूप पर ही किया जाता है। ऐसे लोगों के मन में यह आशंका खुदबुदाती है कि क्या रामराज्य का स्तुतिगान राजतंत्र की पुनर्स्थापना और उस तंत्र के अपरूपों की प्रतिष्ठा करने का प्रयास नहीं है? वास्तव में ऐसी समझ कितनी बालोचित, भोलापन लिए हुए और स्थूल है क्योंकि 'रामराज्य' किसी व्यक्ति संज्ञा से संयुक्त होते हुए भी व्यक्तिवाचक न होकर वह समाज की बृहत्तर और अन्तिम तथा सबसे उपेक्षित, अवमानित, निरीह और अन्तिम इकाई को प्रथमत: वरेण्य किए जाने की गुणशीलता और उदारचेता मनस्विता के कारण मानवीय मूल्यों और आदर्शों का संवाहक

हो गया है ; इसलिए रामराज्य समष्टि की चेतना है और नि:सन्देह राम उस चेतना के प्रतीक पुरुष हैं। राम प्रणीत राज्य को व्यष्टि के समष्टि का प्रस्थान बिन्दु और व्यक्ति से समूह की यात्रा समझा जाना चाहिए क्योंकि इसके एकतंत्र की ओर जाने की कोई आशंका नहीं बचती। इस राम राज्य की अन्तश्चेतना में ही उस बीज भाव 'चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती' की प्रतिष्ठा है जो किसी भी लोकतंत्र का सांसारिक और आध्यात्मिक, भौतिक और सांस्कृतिक तथा स्थूल और सूक्ष्म रूप हो सकता है। इसी से आधुनिक लोकतंत्रीय दर्शन–समानता, स्वतंत्रता और विश्व बन्धुत्व के–मूल्य सही अर्थों में विकसित और पल्लवित हो सकते हैं। दुनिया में इन मूल्यों की प्रतिष्ठा और प्राप्ति के लिए विचारधाराओं के मैकेनिज्म को साध्य मान लिया गया है फलत: विचारधाराओं के संघर्ष और हार–जीत के मुद्दे प्रबल हो गए और वे मूल्य हाथ से छिटक गए जो किसी भी सभ्य, समुन्नत और सुसंस्कृत समाज की नींव बन सकते थे, अपरिग्रह, अहिंसा, अलोभ, अपचार, अपभाषण, निष्कामता आदि और त्याग वृत्ति की यह अवधारणा कि –

'ईशावास्यम् इदम् सर्वम् यत् किं च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुजीथा: मा गृथा: कस्य स्विद धनम्।।' (ईशोपनिषद्)
(यह सृष्टि ईश्वर का घर है, इसलिए इससे उतना ही ग्रहण करें जितना हमारे लिए आवश्यक है संचय वृति न पालें अन्यथा इस सम्पदा का स्थायित्व है क्या ?)

राम का व्यक्ति–जीवन एक आदर्श समष्टि जीवन का बड़ा आधार हो सकता है। यदि व्यक्ति में आत्मबोध, समाजबोध, प्रकृति बोध, सृष्टि बोध और जीवन का लक्ष्यबोध हो जाए तो ऐसे नागरिकों के लिए हाथ पकड़कर चलाने वाली या प्रत्येक साँस पर अंकुश रखने वाली राज्य व्यवस्थाएँ स्वत: अनुपयोगी हो सकती हैं। सभी नागरिक स्वधर्म का पालन करें, उनमें अहम्मन्यता न हो, वे समझदार, संस्कारित और स्वानुशासित हों–'सब निर्भय धर्म रत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी।' तब आधुनिक राज्य चिन्तक और दार्शनिक हेनरी डेविड थोरो के उस राज्य के धरती में उतारे जाने की संभावनाएँ तलाशी जा सकती हैं जिसमें उसने न्यूनतम शासन करने वाली सरकार की कल्पना–(**That government is the best, which Goverence the least.**) की है। राज्य के न्यूनतम हस्तक्षेप की गाँधी की अवधारणा के पीछे तात्कालिक रूप से थोरो का प्रभाव चाहे रहा हो किन्तु उनके इस चिन्तन के मूल में रामराज्य ही था, इसे उनकी राम के प्रति निष्ठा और उन्हें सत्य का पर्याय मान लेने के निश्चय में समझा जा सकता है। और इसीलिए यह अकारण नहीं है कि वे राम के दृश्य रूप से अधिक उनके दर्शन से बँधे थे। यहाँ तक कि–गाँधी जी के अनुरागी और उनके सहचर किसी लेखक ने लिखा है कि गाँधी ने लोक जीवन में प्रचलित सूक्ति 'ईश्वर सत्य है' को 'सत्य ही ईश्वर है' कहकर अपने ईश्वर की मूल्यगत प्रतिष्ठा कर दी और बेशक राम को इस मूल्य का पर्याय बताया है।

सनातम धर्म के विश्वास और उसके आधारभूत ग्रन्थों में राम ईश्वरावतार हैं; गोस्वामी तुलसीदास के यहाँ भी वे–व्यापक, अकल, अनीह, अज, निर्गुण, अरूप और अनाम ही हैं किन्तु भक्तों के लिए वे मनुजवत लीलाएँ कर रहे हैं। यह एक तरह से अच्छा ही है क्योंकि हमारे जैसे सन्देहवादियों के लिए वे मनुष्य रूप में ही हमारे प्राणों से भी अधिक प्यारे हैं। वे केवल ईश्वर होते तो अन्य धर्मावलम्बियों की भाँति दिव्यशक्ति से सम्पन्न, चमत्कारिक और धर्मोपदेशक होने के कारण हमारे सुख–दु:ख की संवेदना से दूर, अप्राप्य और अलभ्य होते किन्तु व्यक्ति रूप में जन्म लेने के कारण ही वे हमारी मानवीय चेतना के पथ प्रदर्शक और प्रेरक हैं कि उनकी प्रवृत्तियों का अनुकरण कर हम अपने भीतर भी उन मूल्यों का बीजवपन, पल्लवन और विकास कर सकते हैं–जो हमारे आधुनिक ऋषि स्वामी विवेकानन्द ने वेदोक्त सूत्र 'अमृतस्य पुत्र:' की मीमांसा करते हुए व्यक्त किए हैं। उनकी धारणा में जो मनुष्य निम्नस्तर (इन्द्रिय सुख) मध्यस्तर (शिक्षित, सुसंस्कृत) को पार कर उसके ऊपरी सोपान सर्वोच्च स्तर (विश्वात्म बोध–निष्कामता) पर अपना डेरा जमाता है। वह मनुष्य में देवत्व के विकास की ही साधना है। तम और रज से ऊपर उठकर सत् की चेतना में प्रवहमान और आनन्द की अनुभूति में जीने वाला ही सच्चिदानन्द है, पुरुषोत्तम है, रम्य है –

'लो चढ़ा तार–लो चढ़ा तार,
पाषाण–खण्ड ये करो हार,
दो स्पर्श अहल्योद्धार–सार उस जग का'
(तुलसीदास, निराला, पृ. 21, भारती भंडार, इलाहाबाद)

व्यक्ति के अहं का विसर्जन, आत्म परिष्कार और आत्मोन्नयन विवेकानन्द की दृष्टि में ब्रह्मत्व की प्राप्ति के सूत्र हैं। मनुष्य में देवत्व की संभावना रसायन प्रक्रिया की भाँति वैज्ञानिक और तर्कसंगत है; भारत भूमि में ही महावीर, गौतम बुद्ध, आदि शंकराचार्य, तुलसीदास, विवेकानन्द, तिलक, अरविन्द और महात्मा गाँधी आदि जिसके साक्षात् प्रमाण हैं। पुरुषोत्तम की गुणशीलता और समानुपात में सौ टंच बराबरी की अपेक्षा करना हमारी भूल होगी क्योंकि यह निर्माण प्रक्रिया मनुष्य चेतना की है न कि किसी जड़ पदार्थ की। इसलिए राम और (कृष्ण भी) चेतना की जिस उत्कर्ष भूमि को स्पर्श कर सके हैं यह ब्रह्मत्व का बोध दे तो आश्चर्य कैसा।

ऐसा नहीं है कि राम को ब्रह्म के रूप में देखने और अनुभूत करने की लालसा और उत्कंठा मुझे नहीं है, जैसा कि एक अंग्रेजी कहावत का भाव भी है कि 'यदि कामनाएँ ही घोड़े होतीं तो सभी लोग सवारी

गाँठ लेते।' राम की ब्रह्मानुभूति के लिए आवश्यक तप-त्याग, आत्यान्तिक लगन, एकाग्रता, आत्मसंयम और शुचिता-सूक्ष्मता की मुझमें क्षमता नहीं है, किन्तु वे मेरे चित्त के केन्द्र में हैं और मनुष्य के रूप में वे मुझे बहुत लुभाते हैं। इस सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल का यह कथन बरबस अपनी ओर हमारा ध्यान खींचता है। वे लिखते हैं- 'ईश्वरावतार राम हमारे बीच हमारे भाई-बन्धु बनकर आए थे और हमारे ही समान सुख-दु:ख भोगकर चले गए। वे ईश्वरता दिखाने नहीं आए थे, मनुष्यता दिखाने आए थे।' **(त्रिवेणी : रामचन्द्र शुक्ल; पृष्ठ 102 लोकभारती, इलाहबाद)**

मनुष्य रूप में जन्म लेकर सभी भवबाधाओं, रोग-शोक, सांसारिक प्रवंचनाओं-ईर्ष्या-द्वेष, शत्रुओं, माया-मोह, मत्सर और मदत्व आदि जन्तुओं और तन्तुओं के जाल से बने प्रकोष्ठ में रहकर उन सबसे परे, जल में कमल की भाँति। गोस्वामी जी ने अपने काव्य में जिन्हें जिस 'नव कंज-लोचन, कंज-मुख-कर, कंज-पद-कंजारुणम' रूप में देखा है वह उनका केवल बाह्य स्वरूप नहीं है वरन् वह उनकी आन्तरिक अरुणाभा अधिक है जो मद-मत्सर के बीच रहकर भी अपनी आत्म ज्योति से प्रभापूर्ण है और उसके धरातल में थिरकते स्फटिक से जलकण उनके आपादमस्तक स्वरूप सत्य, शिव और सौन्दर्य के बिंब हैं जो स्थूल होकर भी सूक्ष्म हैं; स्पर्श और पकड़ से दूर आकार और निराकार एक साथ।

प्रथम दृष्टि में यह तथ्य चकित कर देने वाला है कि प्रशस्त ललाट में वैष्णवी निष्ठा का लाल तिलक लगाने वाले आस्तिक और आस्थावादी मैथिलीशरण गुप्त 'साकेत' के प्राक्कथन से दिखने वाले अंश में अपने आराध्य राम से प्रश्नाकुल होकर कहते हुए दिखाई पड़ते हैं-'राम, तुम मानव हो? ईश्वर नहीं हो क्या?' और यदि ईश्वर नहीं हो तो कण-कण में व्याप्त भी नहीं होगे-'विश्व में रमे हुए नहीं सभी कहीं हो क्या?' ज्ञातव्य है कि कवि का यह प्रश्न जितना सपाट और सीधा जान पड़ता है, उसे उतनी ही सहजता में नहीं लिया जाना चाहिए। बड़ा कवि अपनी सरल अभिव्यंजना में अधिक घनात्मक होता है। यहाँ इन पंक्तियों का अर्थ किया जाना अपनी धृष्टता और अज्ञानता का परिचय देना होगा, इसलिए इससे बचते हुए यह संकेत करना ज्यादा उपयुक्त है कि कवि के मन में अपने आराध्य के आदर्श और चरित्र के प्रति जो विश्वास और निष्ठा भाव है, उन मूल्यों को वह सर्वथा लोक मंगलकारी होने के कारण वरेण्य मानता है और वे मूल्य जन जन के हृदय में रम जाएँ, यही उसकी आन्तरिक और अन्तिम चाहत है। 'मानस के हंस' के नायक तुलसीदास अपने शिष्यवत-प्रशंसक टोडर से कहते हैं- 'आज के हारे-थके, हर तरह से टूटे-बुझे हुए जनजीवन को इस आस्था से भर देना चाहता हूँ कि न्याय, धर्म, त्याग और शील आज भी इस जग में विद्यमान हैं। कोई चिनगारी को छोटा न समझे, वह किसी भी समय अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर निश्चय ही महाज्वाला बन जाएगी। राम थे, राम हैं, राम सदा रहेंगे-और इस पृथ्वी पर एक दिन राम राज्य आकर रहेगा।' **(मानस का हंस अमृतलाल नागर; पृ. 356- राजपाल एन्ड सन्स, दिल्ली)**

ध्यान रहे यह स्वर शताब्दियों पूर्व गोस्वामी जी का था और आधुनिक युग के मनीषी अमृतलाल नागर और राष्ट्रकवि गुप्त जी का भी है और यह इसलिए बहुत प्रासंगिक और मननीय है कि राम यदि ईश्वर नहीं भी हैं तो वे अपने महनीय आचरण के कारण मनुष्य में देवत्व के विकास के लिए प्रकाश पुंज तो हैं ही। और जिसका होना मानव जाति के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

श्यामायन सहकार मार्ग,
सतना - 485-001(म.प्र.)
मो.- 94251 67567

होलिकोत्सव में होली गीत प्रस्तुति

श्री राम का कृतित्व ही हमारी आचार संहिता

-अंजनी कुमार झा

रचनाएँ - 23 पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान - म. प्र. साहित्य अकादमी के अखिल भारतीय सम्मान सहित अनेक सम्मान।

त्रेता युग के मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का नाम ही आदर्श रूप से जीवन जीने की प्रवृत्ति का नाम है। मन को वश में करना ही मनुष्य रूप है। अयोध्या जिसे साकेत और रामनगरी भी कहा जाता है, यह ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नगर है। सरयू नदी के तट पर बसी इस नगरी का वाल्मीकि रामायण में अयोध्या नाम वर्णित है। अथर्ववेद में अयोध्या को भगवान का नगर बताया गया है। पुराणों में भी इसका उल्लेख है। जो बीज वाल्मीकि ने बोए, वे फल-फूल रहे हैं। उनका सम्पूर्ण दृष्टिकोण चरित्रयोग की जिज्ञासा है। चरित्रवान व्यक्ति को ढूँढ़ने के लिए ही आदि-काव्य 'रामायण' की रचना की गई। उनके लिए चरित्र और धर्म पर्यायवाची हैं। श्री राम सनातन धर्म वृक्ष के बीज हैं। वे नीतिमान और वाग्मी, कुशल वक्ता हैं। रामचरितमानस तुलसीदास के लिए लोकजागरण और लोक संस्कार का माध्यम है। राम शील, सौन्दर्य और शक्ति का समन्वित रूप है और उनका चरित्र आदर्श है। राम कथा की रचना उड़िया, बांग्ला, कश्मीरी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नडा, मलयालम आदि में है। अपने राज्याभिषेक के बाद भी उनका अभियान जारी रहा। उन्होंने लक्ष्मण, शत्रुघ्न और हनुमान जी को विभिन्न दिशाओं में भेजा और पूरे भारत को एक सूत्र में पिरोया।

भारतीय संस्कृति समूची वसुधा को कुटुंब मानती है और संसार का एक-एक प्राणी उसके अंग हैं। सभी समाज, वर्ग और क्षेत्र जन परस्पर प्रीति करें, एक-दूसरे का पूरक बनें, यह संदेश उनकी प्रत्येक यात्रा और अभियान में रहा। आसुरी प्रवृत्तियाँ वन में थीं, इसीलिए वही चुना और संत समाज और मनुष्य को शांति प्रदान की। देवों की पुरी और आठ चक्रों वाली स्वर्ण नगरी अयोध्या के चक्रवर्ती को सूर्य का अवतार भी माना जाता है। मुनि अगस्त्य उन्हें सूर्य की स्तुति के लिए आदित्य हृदय स्तोत्र रावण के संहार के लिए देते हैं। बौद्ध धर्मावलम्बी उन्हें बुद्ध का विशेष अवतार मानते हैं। जैन मतावलंबियों के लिए भी इसका महात्म्य है। 'राम' शब्द ईश्वर का पर्यायवाची या दशरथनन्दन श्रीराम के नाम की सूचक, व्यक्तिवाचक संज्ञा ही नहीं है। इस देश के अमृत-पुत्रों, ऋषि-मुनियों, साधु-संतों, श्रमिकों-कृषकों, यहाँ तक कि भिक्षुओं के जीवन में इस शब्द कि अनिवार्य सत्ता और असीम महत्ता सदैव देखी जा सकती है। उनका जन्म भी इस शब्द के उच्चारण के साथ होता है। मनुष्य को मृत्यु के बाद मोक्ष भी उन्हीं के नाम के स्मरण से होता है। जीवन का हर छोटा-बड़ा कार्य और परस्पर मिलने के लिए भी उन्हीं के नाम का सहारा लेना पड़ता है। उनका चरित्र तो सिंधु की भाँति है। अपार-अपरिमित, अनंत। उनके लिए केवट, शबरी, जटायु, सुग्रीव और हनुमान सभी बराबर हैं।

सामाजिक समरसता का यह सटीक उदाहरण है। पूरा समाज एक शरीर की तरह है। इसे उन्होंने अपने कर्म से दिखलाया। इस माध्यम से एक संदेश दिया कि मनुष्य के अंदर एक ही जीव आत्मा है- ईश्वर अंश जीव अविनाशी। श्रीराम ने-**विप्र धेनु सुर संत हित, लिन्ही मनुज अवतार** को ही चरितार्थ किया है। राम और रावण का युद्ध विचारों का है। भौतिकतावाद की अंध दौड़ में आध्यात्म को त्याज्य करने को लेकर है। राम कथा धरती का कल्पवृक्ष है। वे धर्मज्ञ हैं, धर्म-प्राण, धर्म-रक्षक, धर्म-ज्ञाता, धर्म के व्याख्याता हैं। वे आदर्श राजा, आदर्श पुत्र, आदर्श भाई और आदर्श पति हैं। राम उत्तर से दक्षिण को जोड़ते हैं। कबीर मुख से सदा राम ही बोलते रहे। उनसे जुड़े मूल्य ही भारतीय सभ्यता के मर्मभूत मूल्य हैं। वे एक ऐसे अवतारी पुरुष हैं, जिसमें सर्वोच्च दैवीय शक्ति अभिव्यक्त हुई है।

काम कोह मद मान न मोहा,
लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया,
तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया।

प्रत्येक भारतीय को अपने हृदय को ऐसा बनाना चाहिए। तुलसीदास ने मर्यादा पुरुषोत्तम के व्यक्तित्व पर कहा-राम ही ब्रह्म थे-अचिंत्य, अदृष्ट, अखण्ड, संपूर्ण, निर्विशेष चिन्मार्त्म, सर्वव्यापी और निर्गुण। इसी बात को गोस्वामी जी ने पूरे मानस में रेखांकित किया है। रामावतार की विशिष्टता उनके मर्यादा पुरुषोत्तम होने की है, जो सत्यनिष्ठा के प्रतीक, निष्कलंक आचरण की कसौटी और एक आदर्श मनुष्य के साकार-रूप हैं। वे कलह के नहीं सद्भाव के, विभाजन नहीं संयोग के, शत्रुता नहीं, सौहाद्र के और कटुता नहीं, सद्भावना के पक्षधर थे। राम सभी के हैं। राम सभी में हैं। वे सगुण साकार भी हैं और निर्गुण निराकार। दोनों ही दृष्टियों, धारणाओं-अवधारणाओं के राम गुणों से समृद्ध हैं, सद्गुणों के स्वामी हैं। वाल्मीकि तो समग्र रामाख्यान के प्रत्यक्षदर्शी हैं। उनके राम, उनके लिए समकालीन हैं, राजर्षि हैं और एक आदर्श राज्य के संस्थापक हैं।

गुरुनानक देव उनमें आत्मरूप और अनंतता के मात्र दर्शन ही नहीं करते हैं, बल्कि उनमें चक्षु भर निहारते रहते हैं।

सरजू जल मंजन कीया,
दरसन राम निहार,
आत्मरूप अनंत प्रभ,
चले मगन हितु घार।

कबीर प्रामाणिक राम पंथी हैं। वह कहते हैं-

एक राम दशरथ का बेटा,
एक राम घट-घट में बैठा,
एक राम का संकल पसरा,
एक राम त्रिभुवन से न्यारा।

रहीम ने तो मात्र एक दोहे में राम के प्रति अपर अपनत्व का प्रगटीकरण कर दिया।

गहि सरनागत राम की,
भवसागर की नाव,
रहिमन जगत उधार को,
और न कछू उपाव।

वे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक वंचितों के उद्धारक हैं। वह निषादराज के अभिन्न मित्र हैं, सखा हैं। वह भीलनी शबरी के जूठे बेर ग्रहण करने में संकोच नहीं करते। वह सुग्रीव को राज्य सौंप कर आगे बढ़ जाते हैं और विभीषण को लंकाधिपति बना कर अयोध्या जी लौट जाते हैं। वह चक्रवर्ती हैं, किन्तु विस्तारवाद के विरुद्ध हैं। उनका कृतित्व हमारी आचार संहिता है। समाजवादी विचारक डॉ. लोहिया के मत में, राम का जीवन किसी का कुछ भी हड़पे बिना फलने की कहानी है। वे लोकशाही के जीवंत प्रतीक हैं। वह लोगों से कहते हैं- **जो अनीति कछु भाखहूँ भाई, मुझको बरिजहूँ भाय बिसराई।** अर्थात् राज्यवासियों यदि मैं अनीति की बात कहूँ तो आप बिना किसी भय के मुझे तुरंत रोक दीजिए। वे अपनी प्रजा को अधिकार देते हैं कि वह अपने राजा को गलती करने से रोक दें। राज्य व्यवस्था का यह उच्चतम आदर्श है। वे संवैधानिक नैतिकता के शलाका पुरुष हैं। यह संविधानवाद के आचरण की उच्चतर अवस्था है। वे यश-कामना से दूर रहते हैं। स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानने की प्रवृत्ति को वे उचित नहीं मानते हैं। वे नीति से प्रीति रखते हैं। राजा रूप में अपने पहले ही सम्बोधन में कहा था-**परहित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।** अर्थात् दूसरों की भलाई के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को दुख पहुँचाने के समान कोई नीचता नहीं है।

108/ 48, शिवाजी नगर,
भोपाल-462016 (म.प्र.)
मो.-9425303668

उमा राम सम हित जग माँहीं

- शकुन्तला कालरा

जन्म - 11 सितंबर 1946।

जन्म स्थान - बक्खर (पाकिस्तान)।

रचनाएँ - चउअन पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान - हिंदी अकादमी सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

उमा राम सम हित जग माँहीं।
गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाँहीं। (रा.च.मा. 4/12/1)

किष्किंधाकांड की यह चौपाई शिव-उमा संवाद की है। जब राम के बाण से बालि आहत हो जाता है तब वह राम से अपना अपराध पूछता है कि उन्होंने किस कारण उसे 'ब्याध की नाईं' मारा है। दोनों में परस्पर संवाद होता है। राम उस पर विशेष कृपा करके उसे भक्ति का वरदान देकर उसे अपने धाम भेज देते हैं। शोक-संतप्त तारा को आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता का उपदेश देकर उसे ज्ञान और भक्ति प्रदान करते हैं। रामचरित मानस में ऐसे अनेक स्थल हैं जिनमें किसी न किसी के द्वारा किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का उपदेश दिया गया है। यह उपदेश नीतिपरक हैं या अध्यात्मपरक। इन उपदेशों में कर्मसिद्धान्त, ब्रह्म, जीव, माया, सृष्टि, ज्ञान वैराग्य आदि का विधिवत् निरूपण हुआ है। राम द्वारा अनेक पात्रों को समय-समय पर तद्विषयक उपदेश दिया गया है। राम द्वारा शबरी को दिया गया नवधाभक्ति का उपदेश अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार बालि-बध के पश्चात् राम ने शोक, मोहाविष्ट तारा को ज्ञान और वैराग्य का उपदेश दिया। अध्यात्म रामायण में भी राम ने इसी अवसर पर तारा को ज्ञान का उपदेश दिया है **(अध्यात्म रामायण 4/3/1-16, 4/3/18-35)**।

राम अपने शत्रु पर भी किस प्रकार कृपा करते हैं? इसी संदर्भ में रामचरितमानस के किष्किंधाकांड में शिव पार्वती से कहते हैं-राम सा हितैषी इस संसार में कोई नहीं है। सभी की प्रीति स्वार्थ-प्रेरित है। सुरलोक के देवता हों चाहे मृत्युलोक के नर और मुनि हों सब यह रीति अर्थात् स्वभाव है कि स्वार्थ के लिए ही प्रीति करते हैं। निःस्वार्थ प्रेम तो केवल ईश्वर ही करते हैं। इसलिए उन्हें अहेतुकी प्रीति करने वाला कहा गया है। सभी सांसारिक मनुष्य एक-दूसरे के साथ स्वार्थ के संबंध में ही बँधे हैं। संसार में गुरु, पिता, माता, बंधु या स्वामी इन पाँच को शुभ चिंतक और कल्याण करने वाला कहा गया है। यद्यपि ये पाँचों सुहृद हैं, किंतु शक्तिमान नहीं हैं। राम के समान ये पाँचों हितकारी नहीं हो सकते। ये विषम स्थिति में जीव का साथ छोड़ सकते हैं क्योंकि वे स्वयं ही पूर्ण समर्थ नहीं हैं। इनकी सीमाएँ हैं। राम पूर्ण समर्थ हैं। राम केवल सुहृद ही नहीं समर्थ भी हैं, सर्वशक्तिमान भी हैं। राम के तीर से आहत बालि मरणासन्न स्थिति में है। राम ने उसे क्यों मारा? समदर्शी राम ने सुग्रीव को मित्र और उसे अपना बैरी क्यों माना? छिपकर बाण क्यों चलाया? आदि-आदि अनेक शंकाएँ लेकर बालि न्यायप्रिय राम से प्रश्न करता है -

'धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं।।
मैं बैरी सुग्रीव पियारा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा।।' (रा.च.मा. 4/9/3)

अर्थात् मुझे आपने किस कारण मारा? मेरा दोष क्या है? मैंने तो आपका कोई अपराध नहीं किया। निरपराध का वध सबसे बड़ा अधर्म है। आपका यह कृत्य धर्मसम्मत नहीं है। आपके अवतरण का तो उद्देश्य ही धर्म की रक्षा है जिसे आपने बार-बार कहा है। धर्म की हानि, असुर प्रवृत्ति और पापवृत्ति के बढ़ने पर आप सज्जनों की पीड़ा के निवारणार्थ अवतरित होते हैं -

'जब-जब होई धरम की हानि। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानि।।
तब-तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।'

(रा.च.मा. 1/3-4)

दूसरा अधर्म है छिपकर मारना। पीछे से वार करना। आपने मुझे एक ब्याध की भाँति मारकर दूसरा अधर्म ही किया है। मुझे मारने के पीछे आपका क्या उद्देश्य है? क्या आप मुझे मारकर सुग्रीव के प्रति अपनी मित्रता निभाना चाहते हैं। तो प्रभु ये बताइए मैं आपका शत्रु कैसे हुआ? मेरी तो प्रत्यक्ष आपसे कोई शत्रुता नहीं है। हम दोनों पहली बार एक-दूसरे के सम्मुख हुए हैं। सुग्रीव मेरा भाई है परंतु हम दोनों में शत्रुता का संबंध है। सुग्रीव को बचाने के लिए आपने मुझे मारना चाहा। लेकिन आप तो समदर्शी हैं और यही आपका विरद तीनों लोकों में व्याप्त है। आपके लिए कोई मित्र और शत्रु कैसे हो सकता है? आप ही की तो घोषणा है-**'सब मम प्रिय सब मम उपजाये।'** बालि इस आधार पर राम को याद कराते हैं कि यहाँ आपने मेरे साथ न्याय नहीं किया। बालि का राम पर आक्षेप राम को कटघरे में ला खड़ा करता

है। तुलसीदास ने अपने आदर्श नायक एवं लोकरक्षक राम को हर लोकापवाद से बचाने का प्रयास किया है। यहाँ राम स्वयं बालि के इस आक्षेप का उत्तर देते हैं कि तुमने स्वयं अधर्म किया है। धर्म की बातें तुम्हें शोभा नहीं देतीं। तुमने अधर्म किया है। तुमने अनुज-वधू और उसके पुत्र का हरण ही नहीं किया वरन् अब अनुज का वध भी करना चाहते हो। हे शठ सुनो जो 'अनुज-वधू', भगिनी, सुतनारी और कन्या इन पर कुदृष्टि रखता है वह घोर अधर्म है। इन्हें मृत्युदंड देना अधर्म नहीं है। अत: मेरा तुम्हें ब्याध की भाँति मारना यह दंड किसी भी दृष्टि से अधर्म नहीं है। अधर्मी के लिए इस प्रकार का दंड धर्म ही माना जाएगा। अधर्मी को दूसरे से धर्म की आशा नहीं करनी चाहिए। यही नीति कहती है। मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया। भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने भी दुर्योधन से उसके इसी प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा कि-शठे-शठे आचरये अर्थात् दुष्ट को दुष्टतापूर्वक मारना अनुचित नहीं है। उसके साथ वैसा ही आचरण करना चाहिए जैसा वह दूसरों के साथ करता है।

किष्किंधाकांड में ही राम हनुमान से कहते हैं कि भले ही लोग मुझे 'समदरसी' कहते हैं किंतु मैं अपने सेवक के प्रति अतिरिक्त स्नेह भाव रखता हूँ। तुम मुझे 'सेवकप्रिय' जानो। मैं सबके साथ समान व्यवहार करता हूँ किंतु सेवक मुझे अधिक प्रिय हैं क्योंकि उनकी कोई दूसरी गति नहीं। यहाँ तुलसीदास राम पर बालि द्वारा लगाए आक्षेप का राम द्वारा ही उत्तर देते हुए कहते हैं कि सुग्रीव भयभीत होकर मेरी शरण में आया है। उसकी कोई मुझे छोड़कर दूसरी गति नहीं। ऐसे भक्तों की मैं सदा रक्षा करता हूँ। 'दोहावली' में भी भक्त तुलसीदास ने सेवक के एक इसी भरोसे, एक बल की बात की है -

'एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।'(दोहा 277)

आगे राम बालि के इस प्रश्न का भी उत्तर देते हैं कि तुमने कहा मैं ईश्वर हूँ। मेरा यह भी प्रण है कि जो मेरी शरण में आ जाता है उसकी मैं रक्षा करता हूँ। तुमसे भयभीत होकर सुग्रीव मेरे शरण में आया। मैं कैसे शरणागत की रक्षा नहीं करता। शरणागत की रक्षा करना नीति का एक अंग है और राम का प्रण भी। विभीषण के प्रसंग में भी राम के शरणागत वत्सल रूप का परिचय मिलता है। राम हनुमान को यही तर्क देकर समझाते हैं कि भले ही विभीषण शत्रु का भाई है किंतु वह मेरी शरण में आया है। अत: मैं उसका त्याग नहीं कर सकता। क्योंकि मेरा यह प्रण है 'मम पन सरनागत भयहारी'। जो शरण में आए हुए का त्याग करता है उसका मुख देखना भी पाप है -

'सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पाँवर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि।।' (रा.च.मा. 5/43 दोहा।)

नीति-निपुण राम बालि से कहते हैं हे मूढ़ तुम सुग्रीव को मेरे आश्रित जानकर भी अभिमानवश मारना चाहते थे -

'मम भुज बल आश्रित तेहि जानी। मारा चहसि अधम अभिमानी।।' (रा.च.मा. 4/9/5।)

इस तरह तुमने भगवद् शक्ति का भी अनादर किया है। इसलिए भी यह दण्ड यथार्थ है, अन्याय नहीं है। राम के उत्तर से बालि ने यह स्वीकार कर लिया कि मैं पापी हूँ, अधम हूँ, अभिमानी हूँ-किंतु अंत समय तो मुझे आपकी गति प्राप्त हुई। आप मेरे सामने हो, मैं आपके सामने हूँ तो क्या अभी भी कोई 'अधिमाई' शेष बचती है? आपकी तो यह प्रतिज्ञा है कि -

'सन्मुख होइ जीव मोहि जबहिं, जन्म कोटि अध नासहिं तबहीं।' (रा.च.मा. 5/44/1)

अब 'समदरसी' राम निर्मल हृदय हुए बालि के प्रति द्रवित हो उठे उन्होंने बालि के सिर पर अपना वरदहस्त रखा और कोमल स्वर में कहा-'तुम प्राण रखो मैं तुम्हारे शरीर को अचल करता हूँ-

अचल करों तनु राखहुँ पाना। (रा.च.मा. 4/10/1)

राम की यह सबसे बड़ी उदारता है कि वह उसे प्राणदान देकर उसकी हर शिकायत को दूर कर देना चाहते हैं। किंतु बालि का राम के दर्शन-मात्र से ही सारा अज्ञान स्वत: नष्ट हो जाता है और वह अपने इस तर्क से राम को निरुत्तर कर देते हैं -

जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।।
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनहि बनावा। (रा.च.मा. 4/10/2-3)

कहते हैं कि अंतिम समय मनुष्य की जैसी मति होती है वैसी ही उसकी गति होती है। जीव जिसका स्मरण करता है वह उसी को प्राप्त होता है। इसीलिए मुनिजन हर जन्म में यही यत्न करते हैं कि अंतिम समय उन्हें राम का स्मरण हो जिससे उन्हें मुक्ति प्राप्त हो। यत्न इसलिए कहा क्योंकि मन बड़ा चंचल है। वह स्थिर नहीं रह पाता। इंद्रियों को बार-बार हठात् अपने विषयों की ओर ले जाता है। मुनिजन चित्तप्रज्ञ होकर मन को इंद्रियों के विषय से हटाकर तुम्हारे में लगाने का प्रयास करते हैं। अपनी वृत्तियों को अंतर्मुखी कर लेते हैं फिर भी तुम ध्यान में नहीं आते। किंतु वही राम आज मेरे सन्मुख हैं। उनका वरद् हस्त मेरे शीश पर है। इससे बड़ा प्राप्तव्य और क्या हो सकता है। मुझे बिना यत्न किए यह सुयोग प्राप्त हो रहा है। मैं साक्षात् तुम्हारे दर्शन कर रहा हूँ। बिना किसी जप-तप के मुझे यह सुयोग सहज ही सुलभ हो गया है। आप कृपानिधान हैं। आप मुझ पर कृपा

करके प्राणदान देकर कृतार्थ करना चाहते हैं। हे नाथ, आप ही बताइए मैं यह नश्वर शरीर क्यों रखूँ जिसकी प्रकृति मरणधर्मा है। एक न एक दिन तो मरना ही है फिर आज क्यों नहीं? क्या आप मुझे शरीर रखने के लिए इसलिए कह रहे हैं कि मैंने अभिमानवश आपके प्रतिकूल आचरण किया है। हे सर्वज्ञ राम, मैं इतना मूर्ख भी नहीं हूँ कि कल्पवृक्ष को छोड़कर बबूल की बाड़ लगाऊँ –

मोहि जानि अति अभिमान बस, प्रभु कहेउ राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि कालि सुर तरु बारि करहिं बबूरहि।। (रा.च.मा. 4/10/छंद/1 का 2)

सब प्रकार की इच्छाओं को पूर्ण करने वाला कल्पवृक्ष मेरे सामने है और मैं भक्ति-मुक्ति हो छोड़कर इस अधम शरीर को अचल रखूँ? मुझे ऐसी कोई अभिलाषा नहीं। कभी रही भी होगी तो आपके दर्शन-मात्र से ही सभी तुच्छ सांसारिक अभिलाषाएँ समाप्त हो गई हैं। मेरा सारा देहाभिमान जाता रहा है। अत: हे करुणानिधान मुझे तो आप अपनी चरण-कमलों की अचल भक्ति का वरदान दीजिए –

'अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो वर माँगऊँ।'
जेहि जोनि जन्मऊँ कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ।। (रा.च.मा. 4/10/छंद 1 का 3)

अचल अर्थात् जन्म-जन्मान्तरों तक चलने वाली सतत् भक्ति। कर्मानुसार मुझे जो भी शरीर मिले मैं राम चरण का दृढ़ प्रेमी बनूँ। राम उसकी अस्वीकृति पर प्रतितर्क नहीं करते। वह बालि को अपना प्रेय और श्रेय चुनने की खुली छूट देते हैं। बालि जीवित रहकर अपना मनचाहा पारिवारिक सुख और राज्यभोग कर सकता था किंतु उसने ऐसा नहीं किया। राम रूपी कल्पवृक्ष से बड़ी चतुराई से वह जन्मजन्मान्तरों तक के लिए उनके चरणों में दृढ़ भक्ति का मार्ग चुनता है। राम चरणों में दृढ़ प्रीति का वरदान पाकर वह शरीर का त्याग करता है। उसे शरीर-त्याग में तनिक भी कष्ट नहीं होता। राम में अपनी प्रीति दृढ़ कर लेने से उसकी मृत्यु सहज बन गई। शरीर से प्राण ऐसे सहजता से छूटे जैसे मतवाले हाथी के कंठ से कब पुष्पों की माला अनायास अलग होकर गिर जाती है –

'राम चरन दृढ़ प्रीति करि, बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।।' (रा.च.मा. 4/10/दोहा।)

बालि बड़ा चतुर है। वह अपने पुत्र का भविष्य भी सुरक्षित कर लेता है। उसे भी शरणागत बना देता है। राम से अपने साथ-साथ अंगद के लिए भी रामचरणों में अनुराग का वरदान माँग लेता है –

'यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिए।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिए।। (रा.च.मा. 4/10/छंद 1 का 4)

राम उसे भक्ति का वरदान देते हुए अपने परमधाम में भेज देते हैं – 'राम बालि निज धाम पठावा।' इस तरह बालि सालोक्य मुक्ति पाकर कृतकृत्य हो जाता है। उसकी सभी सांसारिक इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं। राम के दर्शन का प्रभाव ही ऐसा है कि जीव नश्वर संसार के हर सुख भोग की क्षणभंगुरता एवं तुच्छता जानकर उपरामता की स्थिति में आ जाता है और तब उसके लिए भक्ति से बढ़कर कुछ अभीष्ट नहीं रहता। बालि जीव मात्र का प्रतीक है। शरणागत बालि को ज्ञान देकर राम ने जगाया है। ज्ञान से उसका आत्म परिष्कार हुआ। आत्म परिष्कार नहीं होगा तो ब्रह्म का सौंदर्य दिखाई नहीं देगा। आत्मसुद्धि से जीव पर पड़ी जन्मों की मैल धुल जाती है। बालि को मृत्यु से पूर्व जीवन में ही मुक्ति मिल गई। यह प्रकरण इस बात का साक्षी है कि प्राणी के एकमात्र आश्रय ईश्वर ही हैं जो अपने आप को पूर्णरूपेण ईश्वर को समर्पित कर देता है तो परमात्मा पूरी आयु उसका योगक्षेम वहन करते हैं जैसे सुग्रीव का। जो जीवन में दु:ख और विषाद की स्थिति में अपने को असमर्थ मान उसका स्मरण करता है अथवा उसकी शरण लेता है परमात्मा उसे ज्ञान देकर उसके शोक का निवारण करते हैं। मृत्यु से पूर्व यदि ईश्वर-परायण हो जाता है तो वह सहज ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है। बालि को इस बात का पूरा विश्वास है कि राम ही उसका हर प्रकार से हित कर सकते हैं। सच तो यह है कि जीव यदि ईश्वर पर भरोसा करता है उसकी शरण ग्रहण करता है तो उसका जीवन-मरण दोनों सुधर जाते हैं। सुग्रीव का जीवन सुधर गया और बालि का मरण। वास्तव में बालि का यह जन्म ही नहीं आने वाले सभी जन्म सफल हो गए क्योंकि उसने हर जन्म में राम से सबसे दुर्लभ उसकी भक्ति का वरदान माँग लिया। इतना ही नहीं राम उसे पूर्व के पापों से भी मुक्त कर देते हैं। बालि ने महापाप किया है अनुज, पत्नी का बलात् हरण किया है। गीता में भी भगवान कृष्ण ने यही कहा है जो अनन्य भाव से भगवान की शरण में हो जाता है, उसे भगवान सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर देते हैं –

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच: ।। (गीता 18/66)

विभीषण की भी स्थिति यही रही है। यद्यपि वह लंकेश बनने की सूक्ष्म वासना उर में लिए हुए राम के पास आता है किंतु राम से मिलते ही उसकी सारी इच्छाएँ प्रभुपद-प्रीति की सरिता में बह जाती हैं और वह भी राम से उनकी पावन भक्ति का वरदान माँगता है –

'उर कछु प्रथम बासना रही। प्रभु पद प्रीति सरित सो बही।।
अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव मन भावनी।' (रा.च.मा. 5/49/3-4)

शरणागत-वत्सल राम सभी भक्तों पर अपनी अहेतुकी कृपा बरसाते

रहते हैं। वह परम हितैषी हैं। राम विभीषण का राजतिलक भी करते हैं और उसे अपनी भक्ति का वरदान भी देते हैं। यानी विभीषण के दोनों लोक राम सँवार देते हैं।

बालि की मृत्यु का समाचार पाते ही तारा बेसुध सी दौड़ती हुई शव के पास आती है। उससे लिपटकर विलाप करती है –

'नाना बिधि बिलाप कर तारा।
छूटे केस न देह सँभारा।।' (रा.च.मा. 4/11/1)

शोक की चरम सीमा पर उसके बाल छूट जाते हैं। उसे देह की सँभाल तक नहीं रहती। तारा का यह विलाप अत्यंत मर्मस्पर्शी है। उन्माद की स्थिति में वह मृत पति की देह से बातें करती हैं। तारा को विकल देखकर राम उसे आत्मज्ञान देते हैं –

'तारा बिकल देखि रघुराया। दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।।
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।।
'प्रगट सो तनु तव आगे सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा।।' (रा.च.मा. 4/11/2-3)

तारा रामभक्त है। बालि जिस समय सुग्रीव से लड़ने के लिए क्रोध में भरकर वेग से दौड़ता है उस समय तारा उसे समझाती है –

'सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा। ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा।।
कोसलेस सुत लछिमन रामा। कालहु जीति सकहिं संग्रामा।।' (रा.च.मा. 4/7/14)

यही कारण है कि मानस की तारा राम पर किसी प्रकार का आरोप नहीं लगाती। बालि को भी मानसकार ने रामभक्त दिखाया है। वह तारा को कहता है –

'कह बाली सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ।।' (रा.च.मा. 4/7)

शोक विकल तारा पर राम विशेष कृपा करते हैं। वह तारा को ज्ञान देते हैं। उसकी माया हर लेते हैं। यह राम की तारा पर विशेष 'कृपा' ही है। माया के स्थान पर ज्ञान जागृत होता है। 'वाल्मीकि रामायण' में शोक संतप्त तारा बालि के साथ राम से अपने लिए भी उसी तीर से वध की प्रार्थना करती है किंतु मानसकार ने 'नाना बिध बिलाप कर तारा' कहकर इसमें हर प्रकार के विलाप को समाहित कर दिया है जैसे रोते-रोते शव पर गिरना, देह की सँभाल न रहना, मूर्च्छित हो जाना आदि-आदि।

करुणानिधान राम ने न केवल बालि को निजधाम देकर उसका कल्याण किया, वरन् तारा को भी विषाद से मुक्त किया। गीता में अर्जुन जब विषाद-ग्रस्त होते हैं तो कृष्ण उसे ज्ञान देकर उसके मोह को नष्ट करते हैं। अज्ञान का कारण मोह है। कृष्ण के ज्ञानोपदेश के बाद अर्जुन का मोह नष्ट हो जाता है और वह कहता है –

'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोअस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।।' (गीता 18/73)

मोह के नष्ट होते ही 'स्मृतिर्लब्धवा' कहता है अर्थात् जीव के मोह का कारण 'आत्मविस्मृति' है। जैसे ही आत्मस्वरूप का ज्ञान होता है जीव का सारा अज्ञान नष्ट हो जाता है। उसके सारे संशय दूर हो जाते हैं और बुद्धि स्थिर हो जाती है। यही अर्जुन के साथ हुआ और यही तारा के साथ। मोह ने दोनों के चित्त में प्रवेश कर उनकी स्मृति को ढक लिया। दु:ख का बीज मोह है। मोह में बुद्धि सम्मोहित हो जाती है। हम व्याकुल हो जाते हैं। तारा इसी मोह से आक्रांत हुई है। राम के द्वारा उसके मोह का निरसन होता है। जैसे कृष्ण के माध्यम से अर्जुन का। ज्ञान उपदेश से दोनों के चित्त का परिष्कार होता है। राम ने कृपा करके जब तारा को ज्ञान का उपदेश दिया तो उसका अविद्याजन्य अज्ञान जाता रहा। अज्ञान का अर्थ है जो चीज जैसी है उसे उस रूप में न देखना। तारा पति की निर्जीव देह को चेतन समझ रही है। शरीर जड़ है अचेतन है, स्थिर रहने वाला नहीं। वह मृतधर्मा है। किंतु उसे सत्य समझकर तारा विलाप करती है। राम कहते हैं यह शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्त्वों से बना हुआ है। यह अत्यंत अधम है। इसमें जो ठोस तत्त्व है वह पृथ्वी है जिनसे अस्थि, चर्म, नाड़ी, रोम, मास का निर्माण होता है। और जो शरीर में रक्त के रूप में है वह जल तत्त्व है। मूत्र, श्लेष्म, जल, शुक्र और स्वेद जल तत्त्व से जुड़े हुए हैं। इसमें जो उष्णता है व अग्नि तत्त्व के कारण है। भूख-प्यास, मोह और मैथुन का संबंध अग्नि से है। श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया वायु तत्त्व के कारण है आकाश तत्त्व के कारण इंद्रियाँ स्पर्श, रूप, रस, गंधादि का अनुभव करती हैं। मिट्टी अर्थात् पृथ्वी से बना होने के कारण यह शरीर अनित्य है। इस अनित्य शरीर के भीतर जो नित्य तत्त्व है वह 'जीव' है। अर्थात् आत्मा। आत्मा चैतन्य और आनंद स्वरूप है। तुम्हारे सम्मुख जो तन पृथ्वी पर निष्चेष्ट होकर सोया है वह नश्वर है। यही इसकी प्रकृति है। शरीर प्रकट है पर आत्मा अप्रकट और यह आत्मा नित्य है, चेतन, अमल और सुख की राशि है। तुम अनित्य शरीर के लिए व्यर्थ विलाप कर रही हो?

तारा के माध्यम से राम का संदेश है कि आत्मा अमर है। मृत्यु सिर्फ शरीर की होती है। गीता में भगवान कृष्ण का भी अर्जुन को यही संदेश है कि मरणधर्मा स्वजनों से मोह नहीं करना चाहिए। मृत्यु एक दिन आवश्यक है। बालि महान योद्धा और अप्रतिम वीर है किंतु अमरता का वरदान लेकर नहीं आया है। युद्ध में मृत्यु की संभावना तो रहेगी। 'जीव' तो नित्य है। शरीर के नष्ट होने से वह नष्ट नहीं होता। अत: तुम अनित्य वस्तु के लिए शोक मत करो। राम के इन शब्दों से तारा के मन में ज्ञान उपजते ही उसका मोह जनित अज्ञान जाता रहा। जैसे प्रकाश के होते ही अंधकार का स्वत: नाश हो जाता है, वैसे तारा

का अज्ञानांधकार स्वत: नष्ट हो गया। प्रभु राम के चरणों में सिर नवाकर वह उनसे सबसे दुर्लभ वस्तु उनकी भक्ति का वर माँग लेती है –

'उपजा ज्ञान चरन तब लागी।
लीन्हेसि परम भगति बइ माँगी।। (रा.च.मा. 4/11/3)

चरणों की वंदना करना भाव है तारा का राम के प्रति कृतकृत्य अनुभव करना। तुलसी के हर पात्र ने सदा राम से उनके चरण-कमलों में अनुराग की, दास्य भक्ति की कामना की है। वह जानते हैं सबसे दुर्लभ वस्तु भक्ति है। भक्ति के उपजते ही मोह जनित सारे विकार स्वत: नष्ट हो जाते हैं। वैसे भी जब यह ज्ञान हो जाता है कि संसार मिथ्या है। अनित्य है। इसके सब व्यापार नश्वर हैं तो कबीर की भाँति हर ज्ञानी की 'क्या माँगूँ कुछ थिर नाहिं' की मन:स्थिति हो जाती है। तारा परम भक्ति का वर माँग लेती है क्योंकि जप-तप-योग आदि सबका फल भक्ति ही है। शिव पार्वती से कहते हैं **'सब कर फल हरि भगति भवानी।'** इस तरह मोह ग्रस्त तारा राम से भक्ति का वरदान पाकर कृतकृत्य हो गई। शिव भवानी से कहते हैं कि सबकी मति को चलाने वाले इन्द्रियों के नियंता ईश्वर हैं। सब कुछ उनकी प्रेरणा से होता है। संसार एक रंगमंच है। ईश्वर सूत्रधार है। जीव कठपुतलियों की भाँति नाचता है –

'उमा दारु जोषित की नाई।
सबहिं नचावत रामु गोसाई।' (रा.च.मा. 11/4/4)

गीता में भी भगवान कृष्ण अर्जुन से यही कहते हैं। बालि, जब राम के सम्मुख समर्पण कर देता है तो राम न केवल उस पर कृपा करते हैं वरन् उसके परिवार को भी उनका मनवांछित प्रदान करते हैं। बालि व तारा को भक्ति का वरदान प्राप्त होता है और अंगद को युवराज का पद। समदर्शी राम ने तीनों के साथ न्याय किया। उन्हें उनका अभीष्ट प्रदान कर बालि के इस उपालम्भ को भी दूर कर देते हैं कि वे समदर्शी नहीं हैं।

प्रस्तुत प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि जो ईश्वर के परायण हैं उनका उद्धार निश्चित है। राम बालि को निजधाम ही नहीं भेजते उसे हर जन्म में अचल भक्ति का वरदान भी देते हैं। वह परम शांति और आनंद को प्राप्त कर राम के परमधाम का अधिकारी बन जाता है। परमधाम अर्थात् ऐसी आध्यात्मिक अवस्था को प्राप्त कर लेना जिसके उपरान्त जन्म-मरण का चक्कर ही समाप्त हो जाता है। तारा को तत्वज्ञान का उपदेश देकर राम उसे मोह और शोक से मुक्त करते हैं। भगवान राम का बालि और तारा दोनों को दिया गया यह उपदेश हर जीव के लिए दीक्षा है जो उसे मोह-शोक से उबारता है।

इस सारे प्रसंग को सुनाते हुए शिव पार्वती से कहते हैं कि संसार में राम सा हितकारी कोई नहीं है। संसार में गुरु, पिता, माता, बंधु, प्रभु जीव के सबसे सर्वाधिक शुभचिंतक माने गए हैं किंतु राम के समान हितकारी ये पाँचों भी नहीं हैं। देवता, मनुष्य और मुनि सभी 'स्वारथ' के वशीभूत हैं। संसार के सभी संबंध स्वार्थ से ही प्रेरित हैं। स्वार्थ से ही शुरू होकर स्वार्थ पर ही खत्म होते हैं। माता-पिता भी, स्वार्थरत हैं। उनकी प्रीति किसी न किसी हेतु से है जो समयानुसार घटती-बढ़ती रहती हैं और वे विषम स्थिति में त्याग भी कर देते हैं। किंतु जीव एक बार जब राम की शरण में आ जाता है तो वह उसका अंत तक निर्वाह करते हैं। राम की प्रीति अहेतुकी है।

एन.डी.-57, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034,
मो. 9958455392

होलिकोत्सव में नृत्य प्रस्तुति

जैन रामायण में रामकथा का वैविध्य

– राजेश श्रीवास्तव

शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी, डी.लिट्।
रचनाएँ – सोलह पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – वागीश्वरी सम्मान सहित अनेक सम्मान।
विशेष – रामायण केन्द्र भोपाल के निदेशक।

जैन सम्प्रदाय का रामकथा संसार विपुल एवं अभिनव है। मेरा अनेक जैन आचार्यों से सम्पर्क रहा। हर बार कुछ नई रामकथाओं पर ज्ञानवर्धन हुआ। जितनी रामायण प्रकाशित हुई हैं उससे कहीं अधिक प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं। जैन कथामाला में जब अष्टम बलदेव मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और अष्टम वासुदेव श्री लक्ष्मण जी तथा सीता जी का वर्णन हमें यह निश्चित ही विचार करने को प्रेरित करता है कि जैन धर्म में रामायण की एक व्यवस्थित परम्परा रही है। विविध महाकवियों का रामकथा का यह श्रम सर्वथा विचारणीय है कि वैदिक, बौद्ध तथा जैन परम्परा की रामकथा को किस प्रकार देखा जाए। एक सामान्य सा प्रथमदृष्टया अन्तर तो यही प्रतीत होता है कि जैन दृष्टि में भगवान कभी भी देह धारण नहीं करते। भगवान बनने वाला प्रत्येक व्यक्ति प्रथमत: मनुष्य रूप में ही जन्म धारण करता हुआ आध्यात्मिक विकास की उस चरम भूमिका में पहुँच जाता है जहाँ पहुँचकर वह भगवान के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। जैन दृष्टि श्रीराम को और महावीर को भी इसी दृष्टि से देखती है। जैन दृष्टि राम के ईश्वारत्व को धीमे धीमे विकसित होते हुए देखती है। जबकि हिन्दू दर्शन के राम अवतार रूप में ही प्रकट होते हैं।

भए प्रकट कृपाला दीन दयाला कौशल्या हितकारी। और
विप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

वैदिक और जैन रामकथा में बहुत अन्तर और मतभेद है। पात्रों के नाम, कथा, उनकी भूमिका तथा उद्देश्य को लेकर भी। बावजूद इसके भी कि रामकथा नहीं बदलती। कि जैसे आसमान का रंग बदलता रहता है, नदियों का पानी और प्रवाह बदलता रहता है, देशकाल और सभ्यताएँ बदलती रहती हैं किन्तु श्रीराम की कथा प्रवाहित है जनमानस में तरह-तरह के वैविध्य के साथ।

मेरे संज्ञान में सौ से भी अधिक जैन रामायण हैं किंतु रामायणदर्शनम पुस्तक में से कुछ जैन रामायणों का विवरण यहाँ प्रस्तुत करना समीचीन होगा।

1-पउमचरियं

(विमलसूरि, हिन्दी अनुवाद- शान्तिलाल वोरा सम्पादन-डॉ. हर्मन जेकोबीप्रकाशन-प्राकृतग्रंथ परिषद वाराणसी, 1962 ई,)

पउमचरियं-विमलसूरिकृत यह रामकाव्य सं. 530 में लिखा गया। इसमें 118 उद्देश्य (पर्व) हैं। राजा श्रेविण (सेविग) महावीर के मुख्य शिष्य गौतम से रामकथा जानना चाहता है। हनुमान नामकरण की एक कथा इसमें विशेष है। पर्व 15 के अनुसार आदित्यपुर के राजकुमार पवनंजय ने महेन्द्रपुर की राजकुमारी अंजना से विवाह किया। पवनंजय वर्षों तक पत्नी के प्रति उदासीन रहा। रावण की ओर से वरुण से युद्ध करते समय अचानक ही एक रात छिपकर अपनी पत्नी से मिला। अंजना के गर्भ को शंका से देखते हुए उसे निष्कासित कर दिया। उसके मामा प्रतिसूर्यक ने अंजना और उसके पुत्र को शरण दी। हनुरुहपुर के निकट बालक एक शिला पर गिरा तो वह चकनाचूर हो गई। इससे उसका नाम श्रीशैल रखा गया। युद्ध से लौटकर पवनंजय ने अपनी पत्नी के सतीत्व का साक्ष्य दिया। हनुरुहपुर में रहने के करण बालक का नाम हनुमान हुआ।

21 वें पर्व के अनुसार रघु के पुत्र अनरण्य के दो पुत्र थे-अनन्तरथ और दशरथ। अनन्तरथ अपने पिता अनरण्य के साथ दीक्षा ले लेते हैं जिससे दशरथ को राज्य मिल जाता है। राम (पऽ) की माता का नाम अपराजिता था और वह अरुहस्थल के राजा सुकौशल और अमृतप्रभा की पुत्री थीं। कौतुकमंगल नगर के राजा शुभमति और उनकी पत्नी पृथ्वीश्री की पुत्री कैकेयी के स्वयंवर का प्रसंग भी है। दशरथ से विवाह करने के उपरांत उसका नाम सुमित्रा कर दिया गया। पउमचरियं के पर्व 13 के अनुसार अहल्या ज्वलनसिंह तथा वेगवति की पुत्री है जिसने अपने स्वयंवर के अवसर पर इंद्र को ठुकराकर राजा नन्दिमाली को अपना लिया था। बाद में नन्दिमाली को वैराग्य हुआ और उन्होंने दीक्षा ले ली थी। किसी दिन इंद्र ने उस ध्यानस्थ नन्दिमाली को बाँधा था जिस कारण इंद्र रावण से हार गए थे।

2-रामकथा वासुदेव हिण्डी (छठी शताब्दी)

प्राकृतभाषा के जैन कथा ग्रंथों में वासुदेव हिण्डी की रचना दो खंडों में हुई है। प्रथम खंड के रचनाकार संघदास गणिवाचक और द्वितीय खंड के रचयिता धर्मसेन गणी महतार हैं। प्रथम की भाषा जैन प्राकृत है और दूसरे की मागधी शौरसेनी। यूँ तो इसमें कृष्ण के पिता वसुदेव के भ्रमणवृत्तांतों का वर्णन मुख्यरूप से है किंतु प्रसंगवश रामायण की कथा भी मिलती है, जिसे स्वतंत्र रामकथा के रूप में प्रकाशित किया गया है।

वासुदेव हिण्डी के प्रथमखंड के 14 वे मदनवेश्या लम्बक के अनुसार वेताल्य पर्वत के दक्षिण छोर पर अरिंजयपुर नामक नगर में मेघनाद नामक राजा रहता था। उसकी पत्नी का नाम श्रीकांता और रूपवतीपुत्री का नाम पद्मश्री था। उसका विवाह सभूम नामक चक्रवर्ती राजा से हुआ। परशुराम ने जिस प्रकार 21 बार पृथ्वी को क्षत्रियों से मुक्त कराया था, उसी प्रकार सभूम ने भी 21 बार पृथ्वी को ब्राह्मणों से मुक्त कराया था। सभूम के पिता की मृत्यु परशुराम के हाथों हुई थी इस कारण सभूम को जितने भी ब्राह्मण मिले उसने सबका वध कर दिया।

सभूम के ससुर आर्त मेघनाद के वंश में बलि नामक राजा हुआ और उसी के वंश में आगे चलकर रावण हुआ। वसुदेव हिण्डी में इस प्रसंग में रामकथा कही गई है।

बलि के वंश में सहस्त्रग्रीव राजा हुआ। उसका पुत्र पंचशतग्रीव था। शतग्रीव, विशंतिग्रीव और फिर दसग्रीव हुआ। विशंतिग्रीव की चार पत्नियाँ थी। – देववर्णिनी, वक्ता, कैकेयी और पुष्पकूटा। देववर्णिनी के चार पुत्र थे सोम, वरुण, यम और वैश्रवण। कैकेयी के तीन पुत्र रावण, कुंभकर्ण और विभीषण तथा दो पुत्री त्रिजटा और शूर्पणखा हुईं। वसुदेव हिण्डी में मंदोदरी मग नामक विद्याधर की पुत्री है। रावण से उसका विवाह हुआ। मंदोदरी ने एक पुत्री को जन्म दिया उसे हल के अग्र भाग पर डालकर मिथिला में जनक के उद्यान में छोड़ दिया। जनक ने सीता को पाला और पश्चात स्वयंवर द्वारा राम से विवाह हुआ।

वसुदेव हिण्डी में राम के वनवास की अवधि बारह वर्ष बताई गई है। खर और दूषण को शूर्पणखा का पुत्र बताया गया है। सुग्रीव का निमंत्रण स्वीकार कर भरत की सेना युद्ध में भाग लेती है।

जटायु, बाली, सुग्रीव आदि को विद्याधर कहा गया है। हनुमान ने राम को अपना परिचय देते हुए यही कहा कि हम विद्याधर हैं और हमारे स्वामी सुग्रीव हैं। सीता की स्थिति की सूचना मिलने पर सुग्रीव ने राम की अनुमति से भरत के पास विद्याधर भेजे। भरत ने चतुरंग सेना भेजी। विद्याधरों द्वारा संचालित वह सेना समुद्र पर बनाए सेतु से होकर लंका गई। विभीषण को रावण द्वारा ठुकराए जाने पर वह राम की शरण में चला गया। उस समय उसके साथ चार मंत्री और भी थे। विभीषण के परिवार के विद्याधर भी राम की सेना में मिल गए। राम की सेना का बल बढ़ने पर रावण सब विद्याओं को नष्ट करने वाली ज्वालावती विद्या की साधना करने लगा। रावण को व्यस्त जानकर राम के योद्धा नगर में प्रविष्ठ होकर संहार करने लगे तब रावण कवच धारण कर युद्ध के लिए निकला और लक्ष्मण से युद्ध करने लगा। रावण ने एक चक्र लक्ष्मण की ओर चलाया किंतु वह चक्र लक्ष्मण के वक्षस्थल से टकराकर टेड़ा हो गया। वही चक्र लक्ष्मण ने रावण की ओर फेंका और रावण का कुण्डल और मुकुट सहित मस्तक काटकर वह चक्र पुन: लक्ष्मण के पास आ गया। इस प्रकार रावण की मृत्यु लक्ष्मण के हाथों हुई। तभी भविष्यवाणी हुई कि भारतवर्ष में यह आठवाँ वसुदेव उत्पन्न हुआ है। युद्ध समाप्ति पर विभीषण सीता को लाकर राम को सौंपते हैं। अरिंजयनगर में विभीषण और विद्याधर श्रेणी के नगर में सुग्रीव का अभिषेक राम लक्ष्मण ने किया।

विभीषण के वंश में विद्युद्वेग राजा हुआ जिसकी पत्नी विद्युत्प्रभा थी। उसके तीन पुत्र दधिमुख, दण्डवेग और चण्डवेग तथा एक पुत्री मदनवेगा हुई। मदनवेगा का विवाह कृष्ण के पिता वसुदेव के साथ हुआ।

3-पद्मपुराणम् (आचार्य रविषेण)

(हिन्दी अनुवाद तथा सम्पादन-डॉ. पन्नालाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 2008)

आचार्य रविषेण ने पद्मपुराणम् (पद्मचरित) की रचना वि. सं. 734 में संस्कृत में की है इसे पद्मचरित भी कहते हैं। जैन रामकथाओं में राम के लिए पद्म का प्रयोग किया गया है। अष्टम बलभद्र श्रीराम पद्म के नाम से प्रसिद्ध रहे हैं और लक्ष्मण तीन खण्ड भरत क्षेत्र के अधिपति अष्टम नारायण थे।

विद्याधरकाण्ड में राजा श्रेणिक गौतमस्वामी से रामकथा का यथार्थ जानने हेतु प्रार्थना करते हैं। इस काण्ड में विद्याधरलोक, राक्षसों और वानरों की वंशावली तथा रावण के वंश का वर्णन है।

राक्षसवंशी राजा रत्नश्रवा और कैकसी की चार संतान हैं–रावण, कुंभकर्ण, चन्द्रनखा और विभीषण। रावण अनेक विद्याओं का ज्ञाता है। वह युद्धविजयी है। मन्दोदरी सहित छ: हजार कन्याओं से वह विवाह करता है। नलकूबर की स्त्री का प्रेमप्रस्ताव ठुकराकर वह प्रतिज्ञा करता है कि किसी ऐसी परनारी का उपभोग वह नहीं करेगा जो उसे स्वयं न चाहती हो। इंद्र के घमण्ड को वह चूर–चूर करता है। बालि उससे पराजित होकर दिगम्बरी दीक्षा ले लेता है। रावण ही

सुग्रीव को राजा बनाता है। हनुमान रावण की ओर से वरुण से युद्धकर चन्द्रनखा की पुत्री अनंगकुसुमा से विवाह करते हैं।

दशरथ की तीन पत्नियाँ हैं–कौशल्या, सुमित्रा और सुप्रभा। जनक और दशरथ की संतानों से अपनी मृत्यु की बात सुनकर रावण विभीषण को इन दोनों की हत्या के लिए भेजता है। किंतु षड्यंत्र की जानकारी होते ही अपने स्थान पर पुतला रखकर वे बच जाते हैं। विभीषण उन पुतलों का सिर काटकर समुद्र में फेंककर निश्चिंत हो जाता है।

कैकेयी स्वयंवर में दशरथ की विजय होती है किंतु सभी राजा शत्रु होकर दशरथ से युद्ध करते हैं। ऐसे में कैकेयी दशरथ का रथ चलाकर उनकी प्राणरक्षा करती है। दशरथ कैकेयी को मनचाहा वर देते हैं। दशरथ के चार पुत्र होते हैं–कौशल्या के राम (पद्म), सुमित्रा से लक्ष्मण, कैकेयी से भरत और सुप्रभा के शत्रुघन। जनक की पुत्री सीता और पुत्र भामण्डल होते हैं। राम स्वयंवर में विजयी होकर सीता से विवाह करते हैं। कैकेयी भरत के लिए राज्य की माँग करती है तो रामलक्ष्मण और सीता दक्षिण की ओर निकल जाते हैं। वे अनेक युद्ध करते हैं। कहीं वज्रकर्ण को सिंहोदर के चन्द्र से बचाते हैं तो बालखिल्य को मलेच्छ राजा के कारागार से मुक्त कराते हैं। लक्ष्मण के अनेक विवाह होते हैं। दण्डक वन में रहकर वे जटायु से सम्पर्क करते हैं।

रावण की बहन चन्द्रनखा से खरदूषण का विवाह होता है उनका पुत्र शम्बूक सूर्यहास खड्ग की सिद्धि के लिए बारह वर्षों तक बॉस के भिड़े में तपस्या करता है। लक्ष्मण वहाँ पहुँचकर उसका वध करते हैं। चन्द्रनखा के प्रेमप्रस्ताव को राम लक्ष्मण ठुकरा देते हैं तो वह खरदूषण को बताती है। खरदूषण और लक्ष्मण का युद्ध होता है। रावण भी वहाँ आता है। सीता पर मोहित होकर रावण सिंहनाद के संकेत से सीता का अपहरण कर लेता है। राम और सुग्रीव की मित्रता होती है। अनन्तवीर्य केवली ने कहा था जो व्यक्ति कोटिशिला को उठा देगा वही रावण का वध कर सकेगा। लक्ष्मण इस परीक्षा में सफल होते हैं। सब वानरवंशी विद्याधर के पक्ष में हो जाते हैं। हनुमान राम और सीता के बीच संवाददूत का कार्य करते हैं।

आकाशमार्ग से सेना लंका पहुँचती है। विभीषण राम के पक्ष में आ जाता है। मूर्छित लक्ष्मण विषल्य के जल स्नान से ठीक हो जाते हैं। रावण लक्ष्मण पर चक्र चलाता है किंतु वह चक्र प्रदक्षिणाकर लक्ष्मण के हाथों में आ जाता है। उसी चक्र से रावण का अंत होता है। राम लक्ष्मण और सीता अयोध्या लौटते हैं भरत विरत हो दीक्षा ले लेता है। गर्भवती सीता को लोकापवाद के कारण वन में भेज दिया जाता है जहाँ वज्रसंघ के आश्रम में सीता लवण और अंकुश को जन्म देती है। इनका राम लक्ष्मण से युद्ध होता है। सीता की अग्निपरीक्षा होती है। राम की झूठी मृत्यु का समाचार सुन लक्ष्मण प्राण त्याग देते हैं। छः मास तक राम उनका मृत शरीर लिए फिरते हैं। अन्त में विरक्त हो लक्ष्मण की अन्त्येष्टि कर तपश्चर्या में लीन होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

4-पउमचरिउ (783ई)

(स्वयंभू सम्पादक- डॉ. हीरालाल जैन प्रकाशक- अयोध्याप्रसाद गोयनील, मंत्री, भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी)

अपभ्रंश भाषा के श्रेष्ठ कवि स्वयंभू को महाकवि पुष्पदंत ने व्यास, भास और कालिदास की श्रेणी में परिगणित किया है। स्वयंभू ने पउमचरिउ (पऽचरित) में रामकथा का वर्णन किया है। इसमें 90 संधियाँ हैं जिसमें 83 सवयंभू द्वारा रचित तथा शेष 7 संधियाँ उनके पुत्र त्रिभुवन द्वारा लिखी गईं। ग्रंथ का आधार रविषेण का पऽपुराण है। इसमें सीता के दीक्षा लेने तक की कथा को ग्रहण किया गया है। राम इंद्र पद प्राप्तकर सीता को भी शक्ति प्रदान करते हैं।

पउमचरिउ में पाँच काण्ड हैं। विद्याधरकाण्ड में विभिन्न वंशों का परिचय है। अयोध्याकाण्ड में रामजन्म से लेकर विवाह, वनवास, सीताहरण विषय हैं। सुंदरकांड में हनुमान द्वारा सीता का पता लगाना तथा युद्धकाण्ड में रामरावण युद्ध का वर्णन है। उत्तरकाण्ड में रावण की मृत्यु, राम का अयोध्यागमन, अभिषेक, सीता निर्वासन, अग्निपरीक्षा, सीता की जिनदीक्षा का उल्लेख है। त्रिभुवन द्वारा रचित सात संधियों में शांति, वैराग्य एवं निर्वेद का कथन हुआ है। पउमचरिउ के अनुसार पद्म (राम)की माता का नाम अपराजिता था। वह अरुहस्थल के राजा सुकोशल तथा अमृतप्रभा की बेटी थी। कैकेयी का स्वयंवर 24 वें पर्व में मिलता है। कौतुकमंगल नगर के राजा शुभमति और उनकी पत्नी पृथ्वीश्री की पुत्री कैकेयी का स्वयंवर होता है। राजा दशरथ उस समय रावण के भय से गुप्तवेश में भ्रमण कर रहे थे। राजा दशरथ का चयन कैकेयी ने किया।

इसमें राक्षसों और वानरों को विद्याधरवंशी कहा गया है। यहाँ वानर पशु नहीं अपितु वानर चिह्नधारी राजा हैं। रावण के कण्ठहार में उसके मुख का प्रतिबिंब पढ़ने से उसके दशाननत्व की वैज्ञानिक व्याख्या भी यहाँ प्रस्तुत की गई है। बचपन में एक बार भण्डार में खेलते समय रावण को नवमणिजटित तोयदवाहन का हार मिल गया जिसके मणियों से बड़े नौ मुख थे। ये मानो नौ ग्रहों की कल्पना करके बनाए गए थे प्रत्येक मणि में पहनने वाले के मुख का प्रतिबिंब पड़ता था रावण ने जब हार उठाकर पहना तब उसके दसमुख दिखाई दिए। इसी कारण रावण का नाम दशानन पड़ गया।

परिहिउ णव मुहई समुटिठयई। णं गह- बिम्बई सु परिटिठई।।
पेख्खेप्पिणु ताई दहाणणई। थिर तारइ तरलइ लोयणई।।
तैं दहमुख दहसिरु जणेण किउ। पंचाणणु जेम पसिद्धि गउ।।

(पउमचरिउ- 1.9.6.9)

कुंभकर्ण कुरूप अथवा माँसभक्षी नहीं था। उसके सुंदर कपालों के कारण यहाँ उसका नाम भानुकर्ण है। कुंभपुर की कन्या से विवाह होने के कारण उसका नाम कुंभकर्ण हो गया।

5-पम्प रामायण (रामचंद्रचरित पुराणम)

(अभिनव पम्प नागचन्द्र, प्रकाशक-भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ , 1977)

कन्नडा साहित्य में सन 950 से 1150 तक का समय पम्पयुग कहलाता है। जैन कवि नागचन्द्र ने पंप भारत का अनुसरण करते हुए रामचंद्र चरितपुराणं (पम्प रामायण) की रचना की। 11 वीं शताब्दी के कवि नागचंद द्वारा रचित रामायण को कन्नडा भाषा की प्रथम रामायण होने का गौरव प्राप्त है।

नागचंद्र को सरस्वती कुडल वरमंपडेद (सरस्वती का कृपापात्र)कवि माना जाता है। पंप रामायण पर वाल्मीकि रामायण, विमलसूरि की पउमचरिउ और रविषेण की पदमपुराण का प्रभाव है। राम लक्ष्मण स्वयंवर में नहीं जनक के आग्रह पर भीलों को दण्डित करने जाते हैं। सीता के भाई का नाम प्रभामण्डल है।

इसमें दशरथ की पत्नियों के नाम अपराजिता, सौमित्रा तथा सुप्रभा हैं। लक्ष्मण द्वारा चन्द्रनखी (शूर्पणखा) के पुत्र शम्भु का सिर काटना, सीता और राम को अलग करने के लिए वैकुर्वण की शक्ति से अवलोकिनी नामक विद्या देवता से बनाया गया सिंहनाद सुनकर लक्ष्मण की रक्षा हेतु राम का जाना। सीता की रक्षा के लिए राम का जटायु को नियुक्त करना। सेतुबंधन नहीं है। सेना आकाश के मार्ग लंका जाती है। सुग्रीव की छोटी बहन का विवाह रावण से हुआ है। रावण की बहन चन्द्रनखी (शूर्पणखा) की पुत्री अनंगपुष्पा से हनुमान का विवाह हुआ है। लक्ष्मण द्वारा रावण का वध। राम द्वारा लोकभावना के कारण सीता को जिन मंदिर की पूजा के बहाने जंगल ले जाकर छोड़ना। लक्ष्मण की मृत्यु के बाद राम द्वारा छ: माह तक उसके मृत शरीर को उठाए रखना। राम द्वारा जैन दीक्षा लेना आदि रोचक एवं विशेष घटनाएँ हैं। राम विष्णु का अवतार नहीं बल्कि आठवें बलदेव हैं। वासुदेव लक्ष्मण हैं और प्रतिवासुदेव रावण हैं। सीता का अपहरण और रावण का हृदयपरिवर्तन पंप रामायण के महत्त्वपूर्ण प्रसंग हैं। इसमें मंथरा, उर्मिला, परशुराम, विश्वामित्र का उल्लेख नहीं है।

6-जैन रामायण (बारहवीं शताब्दी)

(त्रिषष्ठिषलाका पुरुष चरित्र का अनुवाद जैन रामायण नाम से कृष्णलाल वर्मा प्रेम ने किया)

(प्रकाशक-ग्रंथ भंडार, माटूँगा, मुम्बई, 1920, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर)

जैन कवि हेमचन्द्राचार्य ने त्रिषष्ठिषलाका पुरुषचरित की रचना बारहवीं शताब्दी में की। इसकी भाषा संस्कृत है। इसके सप्तम पर्व में तेरह सर्ग हैं जिसमें से दस सर्ग राम, लक्ष्मण और रावण के चरित्र को लेकर हैं। इन्हीं दस सर्गों को स्वतंत्र अध्ययन जैन रामायण के रूप में किया जाता है। इस सप्तम सर्ग का जैन रामायण से हिन्दी अनुवाद श्रीकृष्णलाल वर्मा ने प्रस्तुत किया है।

इस रामायण में वानर पशु नहीं वरन विद्याधर थे। वानर एक वंश का नाम था। इसी तरह रावण आदि राक्षस अथवा दैत्य नहीं बल्कि एक वंश का नाम था। प्रथम सर्ग में राक्षस वंश तथा वानर वंश की उत्पत्ति का विवरण है फिर रावण की दिग्विजय, हनुमान की उत्पत्ति, राम लक्ष्मण का जन्म, विवाह और वनवास की कथा है। सीताहरण, रावणवध, सीतात्याग तथा राम के निर्वाण की कथा जैन परम्परा के अनुसार विकसित है।

राक्षसवंश और वानरवंश की उत्पत्ति से कथा का आरंभ होता है। लंका में राक्षसों का आदि पुरुष घनवाहन राजा के होने की प्रथम सूचना इसी रामायण से मिलती है। शूर्पणखा का विवाह खर के साथ होता है। सीता स्वयंवर में दो धनुष होने का प्रसंग भी इस रामायण की मौलिकता है। राजा जनक सीता और राम के विवाह का निश्चय कर चुके थे तभी राजा चंद्रगति के पुत्र भामण्डल की दृष्टि सीता पर पड़ी और उसके पिता ने भामण्डल और सीता के विवाह के लिए जनक को बुला लिया। जनक द्वारा सीता का विवाह निश्चित हो चुका बताने पर चंद्रगति ने विचित्र शर्त रखी। कहा–मेरे पास दो धनुष वज्रावर्त और अर्णवावर्त हैं जिसकी रक्षा एक हजार देवता करते हैं। इनका प्रयोग भविष्य में बलदेव और वासुदेव करने वाले हैं। इसे अपने साथ ले जाओ। यदि राम इनमें से एक भी धनुष चढ़ा दें तो राम का विवाह सीता से करदेना अन्यथा भामण्डल और सीता का विवाह होगा।

स्वयंवर में राम ने वज्रावर्त और लक्ष्मण ने अर्णवावर्त धनुष को चढ़ा दिया। राम का विवाह सीता से हुआ और विद्याधरों ने अपनी 18 कन्याएँ लक्ष्मण को दीं। जनक के भाई कनक और सुप्रभा की पुत्री भद्रा से भरत का विवाह हुआ। कुभकर्ण का विवाह कुंभपुत्र के राजा महोदर की पुत्री दिनमाला से तथा विभीषण का विवाह ज्योतिषपुर के राजा वीर की पुत्री पंकजश्री से हुआ। रावण के दो पुत्र हुए–इंद्रजीत और मेघवदन।

7-कुमुदेन्दु रामायण

कुमुदेन्दु (1230 ई.)

पम्प रामायण के पष्चात कन्नडा रामकाव्य परम्परा में कुमुदेन्दु रामायण का स्थान महत्त्वपूर्ण है। यह वर्णिककाव्य चार प्रकार की शटपदियों में लिखा गया ग्रंथ है। इन्होंने जैन रामायण की परम्परा को आगे बढ़ाया है। कुमुदेन्दु रामायण की कथा का विस्तार रावणयुद्ध से लेकर अयोध्या के राज्य तक है। इक्ष्वाकु वंश की दीर्घ परम्परा में अयोध्या के राजा अनरण्य के दो पुत्र हुए-अनन्तरथ और दशरथ। दशरथ की चार पत्नियों के नाम अपराजिता, सुमित्रा, सुप्रभा और कैकेयी था। कैकेयी का विवाह सबसे अंत में हुआ। शत्रुघन की माता का नाम सुप्रभा था।

जनकराज की पत्नी वैदेही के जुड़वा बच्चों में से एक को गंधर्व उठाकर ले गया जो खेचेश्वर बना। दूसरी पुत्री सीता का विवाह राम से होने को था कि किरात ने जनक पर आक्रमण कर दिया। राम के धनुष के पास पहुँचते ही वहाँ के सर्प पीछे हट गए। राम ने सीता का वरण किया। लक्ष्मण ने जनक के मित्र चन्द्रप्रभ की अठारह राजकुमारियों का वरण किया। कनक की बेटी उर्मिला और कनकप्रभा का वरण भरत ने किया।

दशरथ द्वारा जिनदीक्षा लेने की इच्छा सुनकर भरत भी प्रेरित हुए जिससे बचने के लिए कैकेयी वर माँगकर भरत के लिए चौदह वर्ष का राज्य माँग लेती है। राम लक्ष्मण और सीता वन में चले जाते हैं।

आमति देश का राजकुमार सिंहोदर दशपुर का राजा बनता है। सिंहोदर द्वारा वर्जकर्ण पर आक्रमण होता है। रामलक्ष्मण वर्जकर्ण का साथ देकर सिंहोदर को पराजित कर देते हैं। वर्जकर्ण अपनी आठ बेटियों का विवाह लक्ष्मण के साथ करते हैं। बाकी राजाओं की तीन सौ कुमारियों का विवाह भी लक्ष्मण के साथ होता है। वर्जमुख नामक राजा का वध हनुमान करते हैं और उसकी पुत्री लंकासुंदरी से विवाह करते हैं।

कन्नडा में रचित इस रामायण में उल्लेख है कि भरत कैकयदेश ननिहाल से आने लगे तो उन्होंने बड़े बलवान बहुत से कुत्ते और तेज दौड़ने वाले गदहों (खच्चरों)के पथ पर बिदा किया। फिर वे सिंध और पंजाब होते हुए इक्षुमति को पार कर अयोध्या आए।

कुमुदेन्दु रामायण में मेघनाद की माँ का नाम दुरदुम्बा बताया गया है।

8-शुक्लजैन रामायण

(जैन मुनि श्री पं. शुक्लचन्द्र जी महाराज प्रकाशक-भीमसेन शाह रावलपिंडी वाले, सदर बाजार, देहली, 2000 ई.)

शुक्लजैन रामायण के अनुसार भगवान ऋषभदेव तीसरे आरे के अंत में हुए। इनके सौ पुत्रों में भरत महाराज प्रथम चक्रवर्ती राजा हुए। उनके बड़े पुत्र सूर्यकुमार के वंश में रामचन्द्र का जन्म हुआ। 9 वें चक्रवर्ती महापद्म के बाद के काल में अयोध्या में राजा दशरथ की पत्नी अपराजिता ने आठवें बलदेव रामचन्द्र को जन्म दिया। दूसरी रानी सुमित्रा का वास्तविक नाम कैकेयी था किंतु जब राजा दशरथ ने तीसरा विवाह किया तो उसका नाम भी कैकेयी होने से नाम सुमित्रा कर दिया। इस कैकेयी का भरत पुत्र हुआ और सुमित्रा के पुत्र आठवें वसुदेव लक्ष्मण जी हुए। चौथी रानी सुप्रभा के पुत्र का नाम शत्रुघ्न था। लंका में राजा रत्नश्रवा पिता और कैकसी माता से दशकन्धर राजा प्रतिवासुदेव रावण का जन्म हुआ। रावण का वध लक्ष्मण ने किया।

शिष्यों के द्वारा प्रश्नों के समाधान के क्रम में जैन तीर्थंकरों, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, अवतारों आदि की चर्चा के पश्चात् बालि, इंद्र और रावण के वंश का उल्लेख किया गया है। बालि रावण का विग्रह, हनुमान की उत्पत्ति, जनक का परिचय, कैकेयी स्वयंवर, रामजन्म को प्रथम खंड का विषय बनाया गया है। द्वितीय खंड में भामंडल का अपहरण, सीता स्वयंवर, दशरथ का वैराग्य, वनवास, भरत का राज्य, राज्याभिषेक, दण्डकारण्य, शम्बूक तथा सीता हरण के प्रकरण हैं।

चन्द्रगति विद्याधर द्वारा जनक के पुत्र भामंडल का अपहरण प्रसंग विस्तार से है। राम के वनवास जाने के पश्चात् दशरथ भरत को राज्य ग्रहण करने हेतु मनाते हैं-यह इस रामायण का मौलिक प्रसंग है।

लाल मेरे बेटा धारो सिर पे यह ताज

मानो वचन हमारा कर्त्तव्य पहला तुम्हारा

कैकेयी दशरथ को कहती है कि आप राम को राज्य देकर मुनिव्रत ले लीजिए। राम को मनाने आए हुए भरत का राज्याभिषेक वन में ही राम और सीता मिलकर करते हैं। पाताल लोक के राजा खर की पत्नी अत्यंत सुंदर रूपवती शूर्पणखा थी। उसके दो पुत्र शम्बूक और सुनन्दन थे। लक्ष्मण द्वारा भ्रमवश शम्बूक की हत्या हो गई। शुक्लजैन रामायण में दौड़ नामक एक नया छंद मिलता है।

शीस जब तक धड़ पर है, राम को कौन फिकर है

चरण जहाँ-जहाँ धरेंगे, बड़े-बड़े भूपति मात चरणों में आ गिरेंगे।

निदेशक, रामायण केन्द्र, भोपाल
मुख्य कार्यपालन अधिकारी,
तीर्थस्थान एवं मेला प्राधिकरण
म.प्र. शासन भोपाल 462003-(म.प्र.)
मो.-7974004023

अयोध्या त्रेता से भविष्य तक

– विवेक रंजन श्रीवास्तव

जन्म – 28 जुलाई 1959।
जन्मस्थान – मंडला (म.प्र.)।
शिक्षा – बी. ई।
रचनाएँ – दस पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – म.प्र. शासन का प्रथम नाटक सम्मान सहित अनेक सम्मान।

भारतीय मनीषा में मान्यता है कि देवों के देव महादेव अनादि हैं। उन्हीं भगवान् सदाशिव को वेद, पुराण और उपनिषद् ईश्वर तथा सर्वलोक महेश्वर कहते हैं। भगवान् शिव के मन में सृष्टि रचने की इच्छा हुई। उन्होंने सोचा कि मैं एक से अनेक हो जाऊँ। यह विचार आते ही सबसे पहले शिव ने अपनी परा शक्ति अम्बिका को प्रकट किया तथा उनसे कहा कि हमें सृष्टि के लिए किसी दूसरे पुरुष का सृजन करना चाहिए, जिसे सृष्टि संचालन का भार सौंपा जा सके। ऐसा निश्चय करके शक्ति अम्बिका और परमेश्वर शिव ने अपने वाम अंग के दसवें भाग पर अमृत स्पर्श कर एक दिव्य पुरुष का प्रादुर्भाव किया।

पीताम्बर से शोभित चार हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित उस दिव्य शक्ति पुरुष ने भगवान् शिव को प्रणाम किया। भगवान् शिव ने उनसे कहा–'हे वत्स! व्यापक होने के कारण तुम्हारा नाम विष्णु होगा। सृष्टि का पालन करना तुम्हारा कार्य होगा। भगवान् शिव की इच्छानुसार श्री विष्णु कठोर तप में निमग्न हो गए। उस तपस्या के श्रम से उनके अंगों से जल धाराएँ निकलने लगीं, जिससे सूना आकाश भर गया। अंतत: उन्होंने उसी जल में शयन किया। जल अर्थात् 'नार' में शयन करने के कारण ही श्री विष्णु का एक नाम 'नारायण' हुआ। तदनन्तर नारायण की नाभि से एक उत्तम कमल प्रकट हुआ। भगवान् शिव ने अपने दाहिने अंग से चतुर्मुख ब्रह्मा को प्रकट करके उस कमल पर उन्हें स्थापित कर दिया। महेश्वर की माया से मोहित ब्रह्मा जी कमल नाल में भ्रमण करते रहे, पर उन्हें अपने उत्पत्तिकर्ता का पता नहीं लग रहा था। आकाशवाणी द्वारा तप का आदेश मिलने पर ब्रह्मा जी ने बारह वर्षों तक कठोर तपस्या की। आदि शिव ने प्रकट हो भगवान विष्णु और भगवान ब्रह्मा जी से कहा–'हे सुर श्रेष्ठ! आप पर जगत् की सृष्टि का भार रहेगा तथा हे प्रभु विष्णु! आप इस चराचर जगत् के पालन व्यवस्था हेतु सारे विधान करें। इस प्रकार भगवान विष्णु सृष्टि के पालनहार की भूमिका के निर्वाह में कर्ताधर्ता हैं। भागवत के अनुसार भगवान विष्णु को जग की व्यवस्था बनाए रखने के लिए दशावतार की पौराणिक मान्यता है। भगवान विष्णु अपने सातवें अवतार में त्रेता युग में स्वयं मर्यादा पुरोषत्तम श्री राम के रूप में इस धरती पर मनुष्य रूप में आए। इसके उपरांत द्वापर में श्री कृष्ण के और फिर बुद्ध के रूप में भगवान का अवतरण हो चुका है। ग्रंथों के अनुसार कलयुग में भगवान विष्णु अपने दसवें अवतार में कल्कि रूप में अवतार लेंगे। कल्कि अवतार कलियुग व सतयुग का पुन: संधिकाल होगा। कल्कि देवदत्त नामक घोड़े पर सवार होकर संसार से पापियों का विनाश करेंगे और धर्म की पुन:स्थापना करेंगे। सृष्टि का यह अनंत क्रम निरंतर क्रमबद्ध चलते रहने की अवधारणा भारतीय मनीषा में की गई है।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम अवतारी परमेश्वर थे पर उन्होंने सामान्य बच्चे की तरह माता के गर्भ से जन्म लिया। श्रीराम का जन्म चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की नवमी को माना जाता है। महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण के बाल काण्ड में श्री राम के जन्म का उल्लेख इस तरह किया गया है। जन्म सर्ग 18 वें श्लोक 18–8–10 में महर्षि वाल्मीक जी ने उल्लेख किया है कि श्री राम जी का जन्म चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को अभिजीत मुहूर्त में हुआ। आधुनिक वैज्ञानिक युग में कंप्यूटर द्वारा गणना करने पर यह तिथि 21 फरवरी, 5115 ईस्वी पूर्व निकलती है।

गोस्वामी तुलसीदास की रामचरित मानस के बाल काण्ड के 190 वें दोहे के बाद पहली चौपाई में तुलसीदास ने भी इसी तिथि और ग्रह नक्षत्रों का वर्णन किया है। वाल्मीकि रामायण की पुष्टि दिल्ली स्थित संस्था इंस्टीट्यूट ऑफ साइंटिफिक रिसर्च ऑन वेदा ने भी की है। वेदा ने खगौलीय स्थितियों की गणना के आधार पर ये थ्योरी बनाई है। महर्षि वाल्मीकि के अनुसार जिस समय राम का जन्म हुआ उस समय पाँच ग्रह अपनी उच्चतम स्थिति में थे। यूनीक एग्जीबिशन ऑन कल्चरल कॉन्टिन्यूटी फ्रॉम ऋग्वेद टू रोबॉटिक्स नाम की एग्जीबिशन में प्रस्तुत रिसर्च रिपोर्ट के अनुसार भगवान राम का जन्म 10 जनवरी, 5114 ईसा पूर्व सुबह बारह बजकर पाँच मिनट पर हुआ (12:05 ए.एम.) पर हुआ था। यह तिथि इतनी अर्वाचीन है कि उसकी गणना में छोटी सी भी मानवीय त्रुटि बड़ा परिवर्तन कर सकती है अत: इस सबके ज्ञान मार्गी तर्क से परे भगवान राम के जन्म के रसमय भक्ति मार्गी आनन्द का अवगाहन ही सर्वथा उपयुक्त है।

संस्कृत के अमर ग्रंथ महाकवि कालिदास ने रघुवंश की कथा को 19 सर्गों में बाँटा है जिनमें अयोध्या के सूर्यवंश के राजा दिलीप, रघु, अज, दशरथ, राम, लव, कुश, अतिथि तथा बाद के 29 रघुवंशी राजाओं की कथा कही गई है। रामायण के अनुसार अयोध्या के सूर्यवंशी राजा दशरथ को चौथेपन तक संतान प्राप्ति नहीं हुई, '**एक बार दशरथ मन माहीं, भई गलानि मोरे सुत नाहीं।**' ईश्वरीय शक्तियों के मानवीकरण का इससे सहज उदाहरण और क्या हो सकता है? राजा दशरथ और माता कौशल्या पुत्र कामना से अयोध्या के राजभवन में यज्ञ करते हैं। फिर राजा दशरथ को माता कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयी रानियों से राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न पुत्रों का जन्म होता है। अयोध्या में खुशहाली छा जाती है।

भगवान राम सारी बाल लीलाए करते हैं '**ठुमक चलत रामचंद्र, बाजत पैंजनियाँ।**' **गुरु गृह गए पढ़न रघुराई, अल्प काल विद्या सब पाई!** फिर दुष्टों के संहार के जिस मूल प्रयोजन से भगवान ने अवतार लिया था, उसके लिए भगवान श्री राम अनुकूल स्थितियाँ रचते जाते हैं पर मानवीय स्वरूप और क्षमताओं में स्वयं को बाँधकर ही मर्यादा पुरुषोत्तम बनकर दुष्ट राक्षसों का अंत कर समाज में आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पुरुष, आदर्श राजा के चरित्रों की स्थापना करते हैं। राम कथा से भारत ही नहीं दुनिया भर सुपरिचित है। विभिन्न देशों, अनेक भाषाओ में राम लीलाओं में निरंतर रामकथा कही, सुनी जाती है और जन मानस आनंद के भाव सागर में डूबता उतराता, राम सिया हनुमान की भक्ति से अपनी कठिनाइयों से मुक्ति के मार्ग बनाता जीवन दृष्टि पा रहा है।

स्वाभाविक है कि अयोध्या में भगवान श्रीराम के जन्म स्थल पर एक भव्य मंदिर सदियों से विद्यमान था। जब मुगल आक्रांताओं ने भारत में आधिपत्य के लिये आक्रमण किए तब सांस्कृतिक हमले के लिए 1528 में राम जन्म भूमि के मंदिर को तोड़कर वहाँ पर मस्जिद बनाई गई। हिन्दुओं को अस्तित्व के लिये बड़े संघर्ष का सामना करना पड़ा। ऐसे दुष्कर समय में साहित्य ही सहारा बना और भक्ति कालीन कवियों ने हिंदुत्व को पीढ़ियों में जीवंत बनाए रखा। महाकवि गोस्वामी तुलसीदास कृत अवधी भाषा में लिखी गई राम चरित मानस हिन्दुओं की प्राण वायु बनी। गिरमिटिया मजदूर के रूप में विदेशों में ले जाए गए हिन्दुओं के साथ उनके मन भाव में मानस और राम कथा अनेक देशों तक जा पहुँची और रामकथा का वैश्विक विस्तार होता चला गया।

1853 में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच इस राम जन्म भूमि को लेकर संघर्ष हुआ। 1859 में अंग्रेजों ने विवाद को ध्यान में रखते हुए पूजा व नमाज के लिए मुसलमानों को अन्दर का हिस्सा और हिन्दुओं को बाहर का हिस्सा उपयोग में लाने को कहा। देश की अंग्रेजों से आजादी के बाद 1949 में अन्दर के हिस्से में भगवान राम की मूर्ति रखी गई। तनाव को बढ़ता देख सरकार ने इसके गेट में ताला लगा दिया। सन् 1986 में जिला न्यायाधीश ने विवादित स्थल को हिंदुओं की पूजा के लिए खोलने का आदेश दिया। मुस्लिम समुदाय ने इसके विरोध में बाबरी मस्जिद एक्शन कमेटी गठित की।

सन् 1989 में विश्व हिन्दू परिषद ने विवादित स्थल से सटी जमीन पर राम मंदिर की मुहिम शुरू की। 6 दिसम्बर 1992 को अयोध्या में कथित अतिक्रमित बाबरी मस्जिद ढहा दी गई। आस्था के सतत् सैलाब से कालांतर में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार वर्तमान स्वरूप विकसित हो सका और अब वह शुभ समय आ पहुँचा है जब पाँच सौ वर्षों के बाद राम लला पुन: भव्य स्वरूप में जन्म स्थल पर सुशोभित हो रहे हैं।

अयोध्या का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल है, विश्व में भारतीय संस्कृति की स्वीकार्यता बढ़ रही है। भारत महाशक्ति के रूप में स्वीकार किया जाने लगा है। '**दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज नहीं काहुहिं व्यापा**' की अवधारणा राम राज्य की आधारभूत संकल्पना है और अयोध्या इसकी प्रेरणा के स्वरूप में विकसित की जा रही है। वर्तमान समय आर्थिक समृद्धि का समय है, जैसे सरोवर को पता ही नहीं चलता और उससे वाष्पीकृत होकर जल बादलों के रूप में संचित हो जाता है प्रकृति वर्षा करके पुन: सबको बराबरी से अभिसिंचित कर देती है, राम राज्य में कर प्रणाली इसी तरह की थी कि टैक्स देने वाले को देने का कष्ट नहीं होता था। वर्तमान सरकार से ऐसी ही कर प्रणाली की अपेक्षा जनमानस कर रहा है, अयोध्या का राम जन्म भूमि मंदिर ऐसे शासन की याद दिलाने की प्रेरणा बने।

अयोध्या जिसे पहले साकेत नगर के रूप में भी जाना जाता था सरयू नदी के तट पर बसी एक धार्मिक एवं ऐतिहासिक नगरी है। यह उत्तर प्रदेश राज्य में है तथा अयोध्या नगर निगम के अंतर्गत इस जनपद का नगरीय क्षेत्र समाहित है। यह प्रभु श्री राम की पावन जन्मस्थली के रूप में हिन्दू धर्मावलम्बियों के आस्था का केंद्र है। अयोध्या प्राचीन समय में कोसल राज्य की राजधानी एवं प्रसिद्ध महाकाव्य रामायण की पृष्ठभूमि का केंद्र थी। प्रभु श्री राम की जन्मस्थली होने के कारण अयोध्या को मोक्षदायिनी एवं हिन्दुओं की प्रमुख तीर्थस्थली के रूप में माना जाता है। राम जन्म स्थल पर नए मंदिर के निर्माण के बाद अब अयोध्या वैश्विक पर्यटन मानचित्र पर अंकित हो चली है और यहाँ जो विश्वस्तरीय जन सुविधा विकसित हो रही है उससे यह हिन्दुओं की आस्था का सुविकसित केंद्र बनकर सदा-सदा हमें नई ऊर्जा प्रदान करती रहेगी।

ए -233, ओल्ड मिनाल रेजीडेंसी,
भोपाल-462023 (म.प्र.)
मो.-7000375798

राम अमित विस्तार

- सुनील देवधर

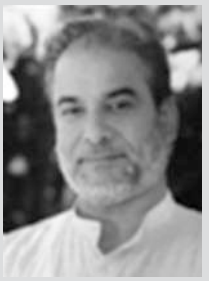

शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी., बी.सी.जे.।

रचनाएँ – नौ पुस्तकें प्रकाशित।

कहा गया है,

यावत् स्थास्यन्ति गिरियः, सरितश्च महितले,

तावत रामायण कथा, लोकेषु प्रचिरष्यति।

अर्थात् जब तक इसी पृथ्वीतल पर पर्वत और सरिताएँ प्रवाहित हैं तब तक इस लोक में, लोगों के बीच राम की कथा गाई जाएगी, दुहराई जाएगी, प्रचारित रहेगी।

इसी बात को प्रकारांतर से गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं–

हरि अनन्त, हरि कथा अनंता/ कहहिं सुनहिं बहुविधि सब संता

रामचन्द्र के चरित सुहाए / कलप कोटि लगी जाहिं न गाए।

आशय यह कि श्री हरि अनन्त हैं उनका कोई पार नहीं पा सकता और उनकी कथा भी अपरम्पार अनन्त है, सब संत लोग उसे कई प्रकार से कहते, सुनते और सुनाते हैं। श्री राम का सुन्दर चरित्र करोड़ों कल्पों में भी गाया नहीं जा सकता।

तब प्रश्न उठता है कि ऐसा क्या है इस राम के चरित्र में? क्यों उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया? वे आदर्श क्यों हैं? वे क्या सही अर्थों में श्रुतिपथ पालक धर्म धुरंधर हैं? क्या उनका सारा जीवन लोक चेतना का उत्तम चरितार्थ है? जगत में संभव और अनुकरणीय है? उनका निर्मोही मन और संघर्ष भरा जीवन किस ओर संकेत करता है? कहना होता है कि राम के जीवन प्रवाह में अनेक प्रसंग और घटनाएँ जुड़ती जाती हैं और उनके व्यक्तित्व का विस्तार और विराटत्व हमारे सामने आता है। एक ओर जहाँ ये प्रश्न हैं वहीं दूसरी ओर अनेक ऐसे प्रश्न भी उपस्थित होते हैं जिनका उत्तर है तो, लेकिन उसे समझना या मान्य करना हर एक के लिए सहज, सरल नहीं है।

सीता का परित्याग, शंबूक वध, छुपकर बालि वध ये तीन कथित रूप से बड़े प्रश्न उठाए जाते हैं लेकिन यदि रामकथा को सिर्फ कथा ही माने तो उसे पूरे परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास नहीं होता, ऐसा जान पड़ता है।

राम को यदि सत्ता का लोभ होता तो पहला ही अवसर था जब अपने राज्याभिषेक को स्वीकार कर पिता के आदेश को अमान्य कर सकते थे, जबकि स्पष्ट है कि वास्तव में राजा दशरथ मन से यह आदेश न तो देना चाहते थे और न ही ये चाहते थे कि उसका पालन हो। लेकिन राम ने सहज, सहर्ष वनगमन को स्वीकार किया। दूसरा अवसर था जब भरत उन्हें वापस लाने पहुँचे और विनय की, वापस लौटने के लिए, तब भी वे लौट सकते थे। लेकिन वे कहते हैं–

लौट भरत घर जाव, खुसी आनन्द से रहियो।

पा लागे परनाम मात, तीनों से कहियो॥

एक तीसरा अवसर था जब बालिवध के बाद किष्किन्धा का राज्य अपने हाथ में लेते और सुग्रीव को वहाँ अपना सेनापति, क्षत्रप मात्र नियुक्त कर सकते थे। चौथा प्रसंग तो सर्वथा विचारणीय है, जब सत्ता के लिए सीता त्याग की क्षुद्र बात कही जाती है, लंका विजय के बाद राम के लिए यह सहज संभव था कि वे विभिषण को लंका का राज्य न सौंपते हुए उन्हें मात्र, क्षेत्रपाल या मंत्री बना देते और स्वर्णमयी लंका का राज्य स्वयम् अपने हाथ में लेते लेकिन वे कहते हैं –

'अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।'

अर्थात्, हे लक्ष्मण यद्यपि यह लंका सोने की है लेकिन इसमें मेरी कोई रुचि नहीं है क्योंकि जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि 'स्वर्गादपि गरीयसी' श्लोक का यह अंतिम वाक्य–नेपाल देश का राष्ट्रीय ध्येय वाक्य भी है। इतना ही नहीं एक जगह और भी यह व्यक्त होता है जिसमें भारद्वाज मुनि ने राम से कहा है –

'मित्राणि धन धान्यानि प्रजानां सम्मतानिष,

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

यानी मित्र, धन, धान्य आदि का संसार में बहुत महत्व है लेकिन माता और मातृभूमि का स्थान सर्वोपरी है। कहना होता है कि राम को राज्याभिषेक अथवा राज्य और दूसरी ओर वनवास की कल्पना से सुख और दुख की जरा भी अनुभूति नहीं होती। राम ने व्यक्तिगत सुख सुविधा को हमेशा अनदेखा किया है और लोकहित और लोक परम्परा व रंजन की उपासना की है। सत्ता उनके लिए उपभोग के लिए कभी नही रहीं न ही वे उसे भोग का साधन मानते हैं। सत्ता उनके लिए लोकसेवा है, लोककल्याण के भाव से ही वे कहते हैं–

भूयो भूयो भाविनो भूमिपालः नत्वा नत्वा याचते रामचन्द्रः।
सामान्योयम् धर्म सेतुर्णानाम काले काले पालिनियो द्भभिः॥

अर्थात् हे भविष्य में होने वाले भूमिपालो ये रामचन्द्र अत्यन्त विनम्रता पूर्वक प्रणाम कर ये याचना करता है कि आप भविष्य में भी इस धर्म सेतू की रक्षा करते रहें श्रीराम का यह कथन इस ओर संकेत करता है कि समाज में जब सब लोग स्वनियंत्रित रहकर अपने ही अनुशासन से धर्म का आचरण करेंगे तो एक सुखी और अपेक्षित सम्पन्न समाज का निर्माण होगा। प्रभुता या राजपद का उन्हें रंच मात्र भी गर्व नहीं, वे जनमत का आदर करते हैं और उनकी इस भावना को तुलसी व्यक्त करते हुए कहते हैं –

सुनहुँ सकल पुरजन मम बानी / कहहु न कछु ममता उर आनी
नहिं अनीति कछु नहि कुछु प्रभुताई / सुनहुं करहुं जो तुमहि सुहाई
जो अनीति कछु भाखो भाई / तो मोहि बरजहु भय बिसराई।

उनके कथन की सरलता और उनकी विनम्रता इन पंक्तियों में स्पष्ट होती है। हम कह सकते हैं कि संस्कृत श्लोक का ही भाव यहाँ तुलसी ने व्यक्ति किया है। आज के सत्ताधिकार और कर्तव्यबोध, सत्ता की लालसा और उसके लिए किए गए प्रयासों पर राम का जीवन क्या विचारणीय नहीं है? उन्होंने अपने जीवन में श्लोक में कहे गए मत को स्वीकार किया है, जिसमें कहा गया है –

'त्यजेदेकं कुलस्वार्थे, ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत
ग्रामंजन पदस्यार्थे, आत्मार्थे पृथ्वी त्यजेत।'

आशय यह है कि कुल के हितार्थ किसी एक का, गाँव की भलाई के लिए कुल का त्याग, देश की भलाई के लिए गाँव का और आत्मार्थ यानी मोक्ष के लिए पृथ्वी (यानी संसार का) त्याग करना चाहिए। लोक जीवन अकेला नहीं सामुदायिक होता है, और किसी भी समाज में चरित्र–हीन जीवन वंदनीय और व्यावहारिक तो हो ही नहीं सकता इसके अलावा ऐसा जीवन इतने दिनों तक लोक व्यवहार में, समाज और साहित्य में, संस्कृति और कलाओं में स्थान नहीं पा सकता। मात्र कल्पना के आधार पर कोई कथा इतनी यशस्वी और विस्तारित नहीं हो सकती। साथ ही न केवल परम्परा बल्कि परम्परा से बाहर अन्य भाषाई समाजों में भी वह अपने–अपने स्तर पर रूपान्तरित और भाषांतरित होती है। अगर हम साहित्य की बात करें तो संस्कृत साहित्य से आरंभ हुई ये कथा विश्व–साहित्य में उपलब्ध है–कारण यही की सदियों से यह कथा मानवीय सत्य, सौन्दर्य, शील और शक्ति, संघर्ष और पराक्रम का प्रतीक बनकर मानव–चेतना को जागृत करती रही है।

वाल्मीकि रामायण के बाद रामकथा ने विस्तार ग्रहण किया और लोगों ने यह स्वीकार किया कि वह काव्य ही नहीं जिसमें रामकथा नहीं, वह इतिहास नहीं वह संहिता नहीं, जिसमें रामकथा नहीं।

'न तदिह काव्यं नहि यत्र रामः न तत् पुराणं नहि यत्र रामः न चेतिहासः नहि यत्र रामः न यत्र रामः नहि संहितासामं।

इस भावभूमि पर संस्कृत में अनेक राम काव्य, नाटक रचे गए। प्रचलित नामों में अध्यात्म रामायण, आनन्द रामायण, अद्भुत रामायण, भुशुंडी रामायण की रचना हुई। महाकवि भास ने प्रतिभा और अभिषेक नाटकों की रचना की। कालिदास ने रघुवंशम्, जयदेव ने प्रसन्न राघव, भवभूति ने उत्तर रामचरितम, राजशेखर ने बालरामायण, इसके अलावा माघ, भारवि, प्रवरसेन, सोमदेव, क्षेमेन्द्र भट्टि आदि ने भी रामकथा पर आधारित नाटक और काव्य लिखे। इसके अलावा प्राकृत और अपभ्रंश ग्रन्थों में भी रामकथा उपलब्ध है। अन्य भारतीय भाषाओं में कृतिवास कृत बंगला रामायण, माधव कन्दली की असमिया रामायण, बालरामदास की उड़िया रामायण, मलयाली के महाकवि तुन्यन्तु रामानुजन एषुत्तुच्छन की रामायणम्, कंबन की तमिल रामायण, तेलगू की रंगनाथ रामायण और चम्पूशैली में लिखी गोपीनाथ रामायण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मराठी के संत एकनाथ ने भावार्थ रामायण, मोरोपंत कृत रामकाव्य और गदिमाडगूळकर रचित गीतरामायण यहाँ विशेष लोकप्रिय हैं। इसके अलावा राजस्थानी, सिंधी, गुरुमुखी, कश्मीरी, हरियाणवी आदि लगभग सभी भारतीय भाषाओं में रामकथा को काव्य और अन्य रूपों में लिखा गया है। उर्दू में मुंशी जगन्नाथ खुश्तर लिखित रामायण 'खुश्तर' है। इसके अलावा रामायण बहार और रामायण मन्जूम ग्रंथ भी हैं।

फारसी में अलबदायूनी ने वाल्मीकि रामायण का पद्यानुवाद किया। मुल्ला मसीह ने 'रामायण फैजी' लिखी। हिन्दी में रामचरितमानस के अलावा, केशव की 'रामचन्द्रिका' और मैथिलीशरण गुप्त का 'साकेत' लोकप्रिय है।

मात्र साहित्य ही नहीं बल्कि रामकथा से कई प्रभावित देशों में राम चरित को विविध रूपों में दर्शाया जाता है। इन्डोनेशिया में रामलीला होती है। थाई देश में राम की लीला 'रामकियन' यानी रामकीर्ति के अर्थ में प्रसिद्ध है। इसके अलावा फीजी, मॉरिशस, जावा, कम्बोडिया, गयाना, त्रिनिदाद, टुवेको, बर्मा (म्यानमार), लाओस आदि देशों में, यह रामकथा चित्र, काव्य, नृत्य रामलीला मंचन आदि रूपों में प्रचलित है।

भारत में रामलीला विविध रूपों में की जाती है। बनारस, अयोध्या, मथुरा, वृंदावन और दिल्ली की रामलीलाएँ विशेष चर्चित हैं। कई लोक शैलियों और जनजातियों में रामलीला का महत्व है।

हम कह सकते हैं कि मानव जीवन के सभी पक्षों का इस रामकथा में समावेश है। यही कारण है कि यह कथा और महाकाव्य, एक ऐसा महानाट्य है जिस पर न केवल भारत बल्कि समूचे मानव जगत की दृष्टि है और तुलसी की रामचरितमानस ने लोकजीवन के महाकाव्य के रूप में इसे जन-जन तक पहुँचाया है। तुलसी भक्त कवि तो हैं लेकिन उनकी भक्ति में रामकथा की माध्यम से राजनीति, समाजनीति, धर्मनीति आदि के भी संकेत है।

वर्तमान सन्दर्भ में राजनीतिक चिंतक राममनोहर लोहिया के शब्द याद आते हैं-तुलसी की कविता से निकली अनगिनत उक्तियाँ और कहावतें रोज ही आदमी को टिकाती हैं, सहारा देती हैं और सीधे रखती हैं। मैं अपनी निजी राय बता दूँ, जिसे मानना जरूरी नहीं है, तुलसी एक रक्षक कवि थे, जब चारों तरफ से अझेल हमले हों तब बचाना, ढाढस देना, टेक देना, शायद ही तुलसी से बढ़कर कोई कर सकता है।

आज संविधान की बहुत बात की जाती है इसलिए कहना होता है, 'संविधान में वर्णित रूप के कारण राम केवल मिथक नहीं रह गए हैं बल्कि उनका संवैधानिक अस्तित्व भी है, और वे भारतीय संस्कृति की अंतर्निहित वास्तविकता है।'

इकबाल कादरी के शब्द हैं –

'रा' का मतलब है, चलें सब लोग सीधी राह पर
'म' का मंशा है कि मंजिल से कभी गाफिल न हों।

ए-101 कुणाल बेलेजा,
एल. एम. डी. चौक,
बावधन, पुणे - 411021 (महा.)
मो.- 9823546592

विशेष अनुरोध

सम्मानित सदस्यों से विनम्र अनुरोध है कि सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, आर.टी.जी.एस / एन.ई.एफ.टी, आदि ई-बैंकिंग माध्यमों से भेजने के पश्चात् एक पोस्ट-कार्ड पर अपना पूरा नाम-पता, पिन कोड नम्बर सहित लिखकर 'अक्षरा' कार्यालय को अवश्य सूचित करें। ताकि पत्रिका प्रेषित करने / मिलने में होने वाली असुविधा से बचा जा सके।

बैंक, खाता संख्या निम्नवत् है-

Ac/ No. 50413818696, IFSC- IDIB000T610

इंडियन बैंक, हिन्दी भवन शाखा, भोपाल

रणनीति में मनोवैज्ञानिक दबाव लंका कांड

– संध्या सिलावट

जन्मस्थान – इंदौर (म.प्र.)।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

महाकवि तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस के लंकाकांड में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि शत्रु पर आक्रमण करने से पूर्व उस पर तथा उसके लोगों पर किस प्रकार से मनोवैज्ञानिक दबाव बनाया जाता है ताकि युद्ध में विजय प्राप्त हो सके। सर्वविदित है कि राक्षसराज रावण अत्यंत शक्तिशाली तथा साधन संपन्न था। उसने दिक्पालों, देवताओं, दानवों और मनुष्यों पर विजय प्राप्त की हुई थी। उसे अपनी शक्ति पर बहुत विश्वास था। उसकी ताकत से सभी डरते थे।

ऐसे शक्तिशाली और साधन संपन्न रावण पर राम को आक्रमण करना था, उससे अपनी सीता को मुक्त कराना था। साधन सीमित थे, सेना के नाम पर वानरों एवं भालुओं का साथ था। केवल अपने बाहुओं और आत्मबल का संबल था। विभीषण उनसे पूछते हैं –

नाथ न रथ नहि तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवान।।

हे नाथ! आपके पास न रथ है, न तन की रक्षा करने वाला कवच है और न जूते ही हैं। शक्तिशाली रावण किस प्रकार जीता जा सकेगा? राम उत्तर देते हैं–

सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।।

मेरे रथ के पहिए शौर्य और धैर्य हैं। उसकी मजबूत ध्वजा और पताका सत्य और शील (सदाचार) का पालन है। मेरे रथ में बल, विवेक, दम (इंद्रियों का वश में होना) और परोपकार के चार घोड़े जुते हैं, जिन्हें क्षमा, दया और समता रूपी डोरी से रथ में बाँधा गया है।

ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।

इस रथ को साधने हेतु ईश्वर की आराधना योग्य सारथी बनाती है। वैराग्य कवच है एवं संतोष तलवार है। बुद्धि की शक्ति से आप प्रचण्ड विपदा पर विजय पा सकते हो। दान रूपी फरसा है। श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है।

अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।

पापरहित और स्थिरमन तरकस है। जिसमें मन का वश में होना (शम), अहिंसादि (यम) और शौचादि नियमों के बहुत से बाण हैं। विद्वानों और गुरु का सम्मान अभेद्य कवच है। इसके समान विजय का दूसरा उपाय नहीं है।

जो ऐसे धर्म का पालन करता है, जो सद्गुणों से युक्त जीवन जीता है उसे कोई शत्रु जीत ही नहीं सकता। वह वीर संसार (जन्म-मृत्यु) रूपी महान् दुर्जय शत्रु को भी जीत सकता है। रावण की तो बात ही क्या है? व्यक्ति के सद्गुण उसे विषम परिस्थितियों और दुर्जेय शत्रुओं पर विजय का पथ दिखाते हैं, उसका आत्मबल उसे मजबूत बनाए रखता है।

राम साधनहीन होते हुए भी अपने मनोबल से असंभव कार्य कर देते हैं। वह समुद्र पर सेतु बनाते हैं। यह उनके शत्रुओं पर मानसिक दबाव बनाता है। इस प्रकार का मानसिक दबाव शत्रुओं पर बनाना युद्ध की रणनीति का एक अभिन्न अंग होता है, जिसका वर्णन हम लंका कांड में पुनः-पुनः पाते हैं। दोनों पक्ष एक-दूसरे की कमियाँ गिनाकर विरोधी पक्ष का मनोबल तोड़ना चाहते हैं।

श्रीराम सेतु बंध बाँधने के बाद अपनी सेना समेत लंका में सुबेल पर्वत पर पहुँच जाते हैं। वहाँ वानर और भालू अपना पेट भरने के लिए वृक्षों से फल आदि तोड़कर खाते हैं ऐसे में उन्हें कोई राक्षस मिल जाता है तो सब उसे घेरकर नाच नचाते हैं और दाँतों से उसके नाक-कान काटकर, राम की उससे प्रशंसा करवाते हैं, तत्पश्चात् उसे जाने देते हैं। जिन राक्षसों का भालू-वानरों ने बुरा हाल किया था, वे रावण से जाकर अपनी पीड़ा कहते हैं। रावण समुद्र पर सेतु बाँधे जाने की बात से व्याकुल हो जाता है, इस असंभव कार्य का हो जाना उसे घबराहट के साथ चौंका देता है। उसके दसों मुखों से निकल पड़ता है-

बाँध्यो बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस।

सत्य तोयनिधि कंपति उदधि पयोधि नदीस।।

वननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिंधु, वारीश, तोयनिधि, कंपति, उदधि, पयोधि व नदीस को क्या सच में बाँध लिया है!

रावण अपनी व्याकुलता एवं भय को छिपाकर मंदोदरी के पास जाता है। मंदोदरी राम की शक्ति को भाँप कर रावण को भाँति-भाँति से समझाती है कि उसे सीता राम को आदरपूर्वक लौटाकर राम की शरण में जाना चाहिए। रावण दरबार में जाकर अपने मंत्रियों से परामर्श करता है कि शत्रु से किस प्रकार युद्ध करना चाहिए? मंत्री उसे कहते हैं कि वानर-भालू तो हमारा भोजन हैं। हमें उनसे कैसा भय?

रावण का पुत्र प्रहस्त उसे कहता है कि ये मंत्री मुँह देखी बात कर रहे हैं, जब अकेला वानर (हनुमान) समुद्र लाँघ कर आया, लंका में आग लगाई, तब किसी राक्षस ने उसे पकड़कर नहीं खाया। आपसे निवेदन है कि आप राम को सीता लौटाकर मित्रता कर लीजिए।

रावण प्रहस्त को कुलकलंक कहता है। उसकी बात पर ध्यान नहीं देता। उधर श्रीराम प्रातः अपने मंत्रियों से परामर्श करके जामवंत की राय अनुसार बालिपुत्र अंगद को दूत बना कर रावण के पास भेजते हैं। लंका में प्रवेश करते ही, अंगद की रावण के पुत्र से भेंट हो गई और दोनों युवकों में झगड़ा हो गया।

तेहिं अंगद कहुँ लात उठाई। गहि पद पटकेउ भूमि भवाँई।।

निसिचर निकर देखि भट भारी। जहँ तहँ चले न सकहिं पुकारी।।

रावण पुत्र ने अंगद पर लात उठा दी। अंगद ने उसे घुमाकर भूमि पर पटक दिया। राक्षसों के भारी योद्धा यह देखकर भाग निकले, डर के मारे चिल्लाए भी नहीं।

एक-एक सन मरमु न कहहीं। समुझि तासु बध चुप करि रहहीं।।

भयउ कोलाहल नगर मझारी। आवा कपि लंका जेहिं जारी।।

अंगद द्वारा रावण के पुत्र का मारा जाना समझ कर सब चुप्पी साध लेते हैं, एक-दूसरे से बात नहीं करते। पूरे नगर में दहशत फैल जाती है कि जिस वानर ने लंका जलाई थी, वह पुनः आ गया है।

अब धौं कहा करिहि करतारा। अति सभीत सब करहिं बिचारा।।

बिनु पूछें मगु देहिं दिखाई। जेहि बिलोक सोइ जाइ सुखाई।।

नगरवासी भयभीत होकर सोचने लगते हैं कि ईश्वर ही जाने अब क्या होगा? जैसे ही अंगद किसी की ओर देखते हैं, वह डर के मारे सूख जाता है। वह अंगद के पूछे बगैर ही उन्हें रावण के दरबार का रास्ता बता देते हैं।

दरबार के बाहर पहुँचकर अंगद अपने आने का संदेश, रावण को भिजवाते हैं। रावण हँसकर कहता है-बुला लाओ, देखें कहाँ का बंदर है? बलशाली अंगद आत्मविश्वास से रावण के दरबार में पहुँचते हैं, उन्हें देखकर सभासद उठ खड़े होते हैं, यह देखकर रावण क्रोधित होता है। वह निर्भीक हो सभा में बैठते हैं।

कह दसकंठ कवन तैं बंदर। मैं रघुबीर दूत दसकंधर।।

मम जनकहि तोहि रही मिताई। तव हित कारन आयउँ भाई।।

रावण अंगद से पूछता है कि बंदर तू कौन है? वह उत्तर देते हैं कि मैं राम का दूत हूँ। मेरे पिता से तुम्हारी मित्रता थी, इसलिए तुम्हारा हित करने आया हूँ। तुम उत्तम कुल के पुलस्त्य ऋषि के पौत्र हो तथा शिवभक्त हो। लोकपालों तथा राजाओं पर तुमने विजय पाई है। राजमद से तुम जगज्जननी सीताजी को हर लाए हो। तुम मेरा हितकारी परामर्श सुनो, राम तुम्हारे सभी अपराध क्षमा कर देंगे। अंगद राम की शक्ति का रावण से बखान करते हैं ताकि उसका मनोबल कमजोर हो जाए।

दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजन सहित संग निज नारी।।

सादर जनकसुता करि आगे। एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे।।

हे रावण दाँतों में तिनका दबाओ (दीन भाव से प्रार्थना करो), गले में

कुल्हाड़ी डालो तथा परिवार सहित अपनी स्त्रियों को साथ लेकर, सम्मान सहित सीताजी को आगे करके, सब भय छोड़कर राम की शरण में जाओ। तुम्हारी प्रार्थना सुनते ही राम तुम्हें निर्भय कर देंगे।

रावण अंगद से कहता है कि तू मुझे जानता नहीं है। मुझसे तो देवता भी डरते हैं। अपने पिता का नाम कह, किस नाते से मुझे मित्र मानता है?

अंगद कहता है कि मैं बालि का पुत्र हूँ तुम्हारी बालि से कभी भेंट हुई थी। बालि का नाम सुनते ही रावण कुछ सकुचा जाता है और कहता है, हाँ, बालि नाम के एक वानर को जानता था। रावण पूछता है कि बालि कहाँ है? अंगद हँसकर बालि को कहता है कि दस दिन बाद वहीं जाकर पता कर लेना जहाँ बालि है। वहीं उसे हृदय से लगा लेना। (बालि का वध राम द्वारा किया जा चुका है)

रावण विभिन्न प्रकार से अपने शौर्य की प्रशंसा करता है और अंगद से पूछता है कि बता तेरी सेना में ऐसा कौन सा योद्धा है जो मुझसे लड़ सकेगा?

तुम्हरे कटक माझ सुनु अंगद। मो सन भिरिहि कवन जोधा बद।।
तब प्रभु नारि बिरहँ बलहीना। अनुज तासु दुख दुखी मलीना।।

तेरा राम तो पत्नी के वियोग में बलहीन हो रहा है और उसका छोटा भाई अपने बड़े भाई राम के दु:ख से दु:खी और उदास है, शेष तुम सब लड़ने योग्य नहीं हो। नल-नील केवल शिल्प कर्म ज्ञाता हैं।

सिल्पि कर्म जानहिं नल नीला। है कपि एक महा बलसीला।।
आवा प्रथम नगरु जेहिं जारा। सुनत बचन कह बालिकुमारा।।

एक वानर अवश्य ही बलशाली है जो तुमसे पहले आया था और जिसने लंका जलाई थी। यह सुनते ही बालिपुत्र ने कहा –

सत्य बचन कहु निसिचर नाहा। साँचेहुँ कीस कीन्ह पुर दाहा।।
रावण नगर अल्प कपि दहई। सुनि अस बचन सत्य को कहई।।

जब रावण हनुमान की प्रशंसा करता है, अंगद रावण को ताना देता है। सच में राक्षसराज तुम जैसे बलशाली जगत् विजेता की लंका उस जैसा छोटा तुच्छ वानर जला सकता है, इस बात पर कौन विश्वास करेगा? रावण तुम जिसे बलशाली योद्धा कह कर प्रशंसा कर रहे हो, वह तो सुग्रीव का एक तुच्छ दौड़कर चलने वाला हरकारा है।

जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीव केर लघु धावन।।
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

वह बहुत चलता है, वीर नहीं है उसे तो केवल संदेश लेने के लिए भेजा गया था। अंगद रावण को जताना चाहता है कि हनुमान तो कुछ भी नहीं है, उससे भी बलशाली योद्धा है, राम की सेना में। उस वानर ने राम की आज्ञा के बिना ही तुम्हारा नगर जला डाला था।

सत्य नगरु कपि जारेउ बिनु प्रभु आयसु पाइ।
फिरि न गयउ सुग्रीव पहिं तेहिं भय रहा लुकाइ।।

संभवतया इसी डर से वह लौटकर सुग्रीव के पास नहीं गया और कहीं छिपा रहा। राम बिना आज्ञा दिए, किए गए कृत्य के लिए उससे क्रोधित होंगे।

सत्य कहहि दसकंठ सब मोहि न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमारें कटक अस तो सन लरत जो सोह॥

अंगद उलाहना देते हैं कि रावण तुमने सत्य ही कहा कोई भी हमारी सेना में ऐसा नहीं है जो तुमसे लड़ने में शोभा पाए। हमारे पक्ष के योद्धा तुमसे अधिक योग्य हैं।

प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहइ कोउ ताहि।।

प्रेम और शत्रुता बराबर वालों से करनी चाहिए यदि सिंह मेंढक जैसे तुच्छ जीवों को मारे तो सिंह की प्रशंसा कौन करेगा। अंगद निरंतर रावण का मनोबल गिराने का प्रयास कर रहे हैं।

बालि बिमल जस भाजन जानी। हतउँ न तोहि अधम अभिमानी।।
कहु रावन रावन जग केते। मैं निज श्रवन सुने सुनु जेते।।

रावण क्रोधित होकर कहता है कि मैं बालि के यश के कारण तुम्हें जान से नहीं मार रहा हूँ। अंगद उसका मनोबल गिराने के लिए कहता है कि रावण कितना बलशाली है मुझसे सुनो।

राजा बलि को जीतने रावण पाताल लोक गया था जहाँ बच्चों ने उसे घुड़साल में बाँध दिया, बच्चे उसे खेल-खेल में मारते थे, तब राजा बलि ने दयावश उसे छुड़ा दिया।

सहस्त्रबाहु ने उसे विचित्र जंतु समझकर पकड़ लिया और तमाशे के लिए अपने घर ले गया, तब पुलस्त्य मुनि ने उसे छुड़ाया।

बालि ने उसे बहुत दिनों तक अपनी काँख में दबा कर रखा था। बताओ तुम कितने शक्तिशाली हो?

रावण क्रोधित हो उठता है, कहता है कि मेरे चलने से पृथ्वी छोटी नाव के समान काँपती है, तू उस तुच्छ मनुष्य की प्रशंसा कर रहा है। अंगद कहता है कि महाबलशाली परशुराम उनका गर्व राम के सामने नहीं ठहर सका, वह हनुमान तेरे पुत्र को मारकर, लंका जला कर लौट गए। तू उनका कुछ न बिगाड़ सका। डींग मत हाँक। राम जी से बैर करेगा तो उनके बाण लगते ही तेरे सिरों से वानर चौगान खेलेंगे इसलिए राम को भज।

रावण अपने शौर्य का वर्णन करते हुए कहता है कि उसने दिक्पालों तक से जल भरवाया है। रावण राम को नीचा दिखाने के लिए कहता है कि –

सठ साखामृग जोरि सहाई। बाँधा सिंधु इहइ प्रभुताई।।

नाघहिं खग अनेक बारीसा। सूर न होहिं ते सुनु सब कीसा।।

वानरों की सहायता से राम ने समुद्र बाँध लिया तो बस यही उसकी प्रभुता है। समुद्र को तो अनेक पक्षी भी लाँघ जाते हैं तो क्या वे शूरवीर हो जाते हैं। तेरा राम दूत किसलिए भेजता है। शत्रु से संधि करते उसे लज्जा नहीं आती। मेरी भुजाओं ने कैलाश पर्वत का मंथन किया है। पहले मेरी ताकत देख वानर, बाद में अपने राम की प्रशंसा करना।

अंगद भी कहाँ हार मानने वाले थे वह रावण को जबरदस्त ताना देते हैं।

सिर अरु सैल कथा चित रही। ताते बार बीस तैं कहीं।।

सो भुजबल राखेहु उर घाली। जीतेहु सहसबाहु बलि बाली।।

सिर काटने और कैलाश उठाने की कथा तेरे मस्तिष्क में बैठी हुई है, इसलिए तू बार–बार कहता है। सहस्त्रबाहु, राजा बलि तथा बालि की कथा को छिपा कर रखता है। अंगद कहता है कि सिर काटने से कोई शूरवीर नहीं हो जाता, इंद्रजाल रचने वाले को वीर नहीं कहा जाता, पतंगे मोहवश आग में जल मरते हैं, गधों के झुंड बोझ लादकर चलते हैं, वे इस कारण शूरवीर नहीं कहला सकते।

बार-बार अस कहइ कृपाला। नहिं गजारि जसु बंधे सृकाला।।

मन महुँ समुझि बचन प्रभु केरे। सहेउँ कठोर बचन सठ तेरे।।

राम बार–बार कहते हैं सियार को मारने से सिंह को यश नहीं मिलता, इस कारण मैंने तेरे कठोर वचन सहे हैं। तू सीता को सूने में चुरा लाया यही तेरी वीरता है। यदि मुझे श्रीराम का लिहाज नहीं होता तो तुझे जमीन पर पटक कर सेना का संहार कर युवतियों सहित सीता को ले जाता।

अब रावण सीधे–सीधे राम के गुणों को ही उनके अवगुण बनाने लगता है। उनका आदर्श पुत्र का रूप पिता की आज्ञा पालन हेतु वनागमन को वह उनकी कमी बताने लगता है। जैसे एक दुष्ट व्यक्ति अपने स्वार्थ हेतु किसी भी सद्गुण पालक को अपने स्वार्थी दृष्टिकोण से संसार का सबसे बड़ा अवगुणी (दोषी) प्रमाणित करने में समय नहीं लगाता। वही इस समय रावण कर रहा है। संसार राम को सद्गुणी मान रहा है, परंतु रावण उसे अपने स्वार्थ अनुसार परिभाषित कर रहा है।

अगुन अमान जानि तेहि दीन्ह पिता बनबास।

सो दुख अरु जुबती बिरह पुनि निसि दिन मम त्रास।।

उसे गुणहीन और मानहीन समझकर ही तो पिता दशरथ ने वनवास दे दिया। उसे एक तो वह (उसका) दुःख, उस पर युवती स्त्री का विरह और फिर रात–दिन मेरा डर बना रहता है।

इसलिए तो कहा जाता है कि जब आप कभी दुविधा की स्थिति में हो तो रामचरित मानस पढ़ो, आपकी दुविधा का निराकरण आप उसमें स्वयं पा लेंगे। रावण के समान सोच रखने वाले लोग इस संसार में भरे पड़े हैं। व्यक्ति को निराशा में डुबने की बजाए आत्मबल को साधना चाहिए, जब सत्य की राह पर चलने वाले मर्यादा को पालने वाले राम पर अँगुली उठाई जा सकती है तो मैं क्या हूँ?

इस प्रकार हम देखते हैं कि दोनों ही पक्ष एक–दूसरे को मनोवैज्ञानिक दबाव बनाकर हराना चाहते हैं। आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व यही होता था। वर्तमान में भी पूरे संसार में यही स्थिति है। इसलिए तो कहा जाता है 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत'।

51, मनीष बाग,
सपना-संगीता के पीछे
इंदौर, 452001 (म. प्र.)
मो. 9425956771

अवतार की अवधारणा और रामावतार

– प्रभु शंकर शुक्ल

जन्म – 20 सितंबर 1940।
जन्मस्थान – शिवली, कानपुर (उ.प्र.)।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – सात पुस्तकें प्रकाशित।

सृष्टि चालक भगवान इस सृष्टि में पधारते हैं, यह कल्पना प्रत्येक धर्म में है। ईश-शक्ति किसी विशिष्ट कार्य के लिए सृष्टि में अवतरित होती है, यह कल्पना अवतारवाद के मूल में है। यह सभी को मान्य है। पांडुरंग बैजनाथ आठवले शास्त्री जी ने अपने प्रवचन-ग्रंथ दशावतार में अवतार की शास्त्रीय मीमांशा करते हुए लिखा है कि 'ईश्वरीय चैतन्य भिन्न-भिन्न प्रकारों से पदार्पण करता है। ट्रान्समायग्रेशन, पजेशन और इमेनेशन ट्रन्समायग्रेशन में पुनर्जन्म द्वारा देह प्राप्ति मानी जाती है। कोई एकाध जीव देव होता है और दैवी विचारों का चिन्तन करता रहता है परंतु इसमें पूर्ण अवतार की कल्पना नहीं है। पजेशन में देहान्तर प्राप्ति की कल्पना है अर्थात् जीव में देवता का संचार होता है। तत्कालीन किसी एक जीव में भगवान का संचार कुछ समय के लिए होता है। परंतु वह अल्प समय के लिए होने के कारण उसको भगवान माना जाए या नहीं, यह एक प्रश्न है। शिवाजी में भवानी का संचार होता था, यह आज भी हम मानते हैं। इमेनेशन यानी ईश्वरी शक्ति का किसी एकाध जीव में अवतीर्ण होना अंशावतर, इसमें ईश शक्ति की उत्पत्ति तो है, परंतु वह दिव्य जीव दैवी शक्ति है, स्वयं ईश्वर की नहीं। अवतार और आवेश में अंतर हैं। अवतार यानी नीचे आना, जो निरूपाधिक है, उसका सोपाधिक होना। आवेश का अर्थ है-आ+विश अंदर प्रवेश करना। आवेश में ईश शक्ति ने प्रवेश किया, इसको आवेश कहा जाता है। जीव तो था ही, उसमें चैतन्य शक्ति ने प्रवेश किया, इसको आवेश कहा जाता है। आवेश में ईश शक्ति उत्तम मानव में अपनी शक्ति संक्रमित करती है, जबकि अवतार में वह ईश शक्ति की स्वयं स्वतंत्र रीति से लिंग देह में आविर्भूत होती हैं।

इससे स्पष्ट है कि अन्य धर्मों-महायान, जैन, इस्लाम या ईसाई में स्वयं परमात्मा ने मनुष्य देह धारण नहीं की। हमारे यहाँ स्थिति सर्वथा भिन्न हैं। यहाँ चौबीस अवतारों का उल्लेख है –

जय जय मीन बराह कमठ नरहरि बलि-बावन।
परसुराम रघुवीर कृष्ण कीरति जग पावन।।
बुद्ध कलक्की ब्यास पृथू हरि हँस मन्वंतर।
जग्य रिषभ हयग्रीव ध्रुरूव बरदैन धन्वंतर।।
बद्रीपतिदत कपिलदेव सनकादिक करुनाकरौ।
चौबीसरूप लीलारुचिर (श्री) अग्रदास पद धरौ।।

मंगलमय मीन, वाराह, कच्छप, नरसिंह तथा वामन आदि भगवान के चौबीस अवतारों की जय हो, जय हो, इनका मंगल हो, हम इन्हें नमस्कार करते हैं। परशुराम, रघुवीर, श्रीराम एवं श्रीकृष्ण आदि सभी अवतारों की पवित्र कीर्ति संसार को पवित्र करने वाली है। बुद्ध, कल्कि, व्यास, प्रथु, हरि, हंस, मन्वंतर, यज्ञ, ऋषभ, हयग्रीव, ध्रुववरदायी श्रीहरि, धन्वन्तरि, नर-नारायण, दत्तात्रेय, कापिलदेव तथा सनक-सनन्दन सनातन-सनत्कुमार सभी मुझ दास पर कृपा करें। चौबीसों अवतारों के समेत गुरुदेव श्री अग्रदास जी महाराज मेरे हृदय में अपने श्री चरण स्थापित करें। **(भक्तमाल सन 2013 पृ. 43)**

यहाँ ध्यान देने योग्य यह है कि भगवान मनुष्य रूप में ही नहीं जलचर मत्स्य, कच्छप, थलचर, वाराह के रूप में अवतरित होते हैं। यही नहीं आधा शरीर सिंह और घोड़े की गर्दन धारण कर भी जन्म लेते हैं। बौनों का भी मान रहे, अत: वामनावतार भी होता है। नर रूप में ही नहीं नारी रूप में देवताओं और शंकर को सुरक्षित करते हैं। भगवान बहुरूपिये हैं। इसीलिए द्वार आए किसी भी व्यक्ति का अनादर नहीं करना चाहिए। पता नहीं, वह किस रूप में अनुग्रहीत करने पहुँच जाए। तुलसी ने सही ही कहा है –

केसव कहि न जाय का कहिए।
देखत तवरचना विचित्र समझु मनहिंमन रहिए।।

यही नहीं, उनके स्वरूप अनन्त हैं। इसी से तो कहा गया कि हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता। तेईस अवतार हो चुके। चौबीसवाँ कल्कि अवतार बाकी है। कलियुग के तो अभी अनेक चरण बाकी हैं। अवतार कब होगा यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु वेद व्यास ने सतर्क अवश्य किया है। उन्होंने कहा है-'संघे शक्ति कलौयुगे' अर्थात् संगठन में ही कलियुग में शक्ति है। सज्जन शक्ति का संगठित होना आवश्यक है। अब अवतार की प्रतीक्षा निरर्थक है, पर यहीं तो समस्या है। दुर्जन तो संगठित हैं किन्तु सज्जन संगठित किए जा रहे हैं। परिणाम भी उपलब्ध हो रहे हैं। आज विश्व में हमारा मान इसी

संगठित वृत्ति के कारण बड़ा हैं। पर हमको तो त्रिलोक के सबसे बड़े सज्जन की चर्चा अपेक्षित है। चौबीस अवतारों में दशावतार की अधिक चर्चा है। वे हैं–मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। हमारी भारतीय संस्कृति में तीन राम प्रसिद्ध हैं–परशुराम, श्रीराम और बलराम। एक भार्गववंशी ब्राह्मण, दूसरा रघुवंशी क्षत्रिय और तीसरा यदुवंशी कृष्णाग्रज। एक ने इक्कीस बार क्षत्रियों का विनाश किया, दूसरे ने वानरों को संगठित कर मदोन्मत असुरों को सबक सिखाया और तीसरे ने अपने ही कुल के पथभ्रष्टों को श्रीहीन और समाप्त करने में सहयोग दिया। वैसे तो सारे ही अवतारों की महती महत्ता हैं किन्तु विश्व में सर्वाधिक स्वीकार भाव जिसे प्राप्त है वह रामावतार के राम को प्राप्त है। सभी ने इन्हें मान दिया है। यही कारण है कि अनेक ग्रंथ, अनेक भाषाओं में इनकी जीवन गाथा पर लिखे गए। इनमें सर्वाधिक जो लोक जीवन में जिसे जाना और माना गया, वह लोक भाषा अवधी में रचित तुलसीदास का श्रीरामचरितमानस है। इसमें स्वयं शंकर ने पार्वती को इनके अवतरित होने की कथा कही है –

जनम एक दुइ कहउँ बखानी। सावधान सुनु सुमति भवानी।।
द्वारपाल हरि केप्रिय दोऊ। जय अरू विजयजान सब कोऊ।।
विप्र श्रापतेंदूनउ भाई। तामस असुर देह तिन्ह पाई।।
कनकसिपुअरूहाटकलोचन। जगत बिदितसुरपति मद मोचन।।
बिजई समर बीर बिख्याता। धरि बराहबपुएक विपाता।।
होई नरहरि दूसर पुनि मारा। जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा।।
भए निसाचर जाइ तेई महाबीर बलवान।
कुंभकरन रावन सुभट सुर बिजई जग जान।।
सुकृत न भए हते भगवाना। तीनि जनम द्विजबचनप्रवाना।।
एक बार तिन्ह के हित लागी। धरेउसरीरभगतअनुरागी।।
कस्यप अदिति तहाँ पितु माता। दसरथकौसल्याबिख्याता।।
एक कलप एहि विधि अवतारा। चरित्रपवित्रकिएसंसारा।।
एक कलप सुर देखि दुखारे। समर जलंधरसनसब हारे।।
छल करि तारेउ तस व्रत प्रभु सुर कारण कीन्ह।
जबतेहि जानेउ मरम तब श्राप कोप कर दीन्ह।।
नारद श्राप दीन्ह एक बारा। कलप एक तेहिलागे अवतारा।।

(बालकांड तुलसीदास श्रीरामचरितमानस : पृ. 135, 136, 137)

भगवान विष्णु का ही दायित्व है–सृष्टि का पालन पोषण, ब्रह्मा तो सृष्टि कर्ता हैं। शंकर शिवरूप में कल्याण करते हैं और रुद्ररूप में विनाष। अभिमानी असुर जब विनयी सुरों या सुर संतानों को कष्ट देते हैं तो विष्णु अवतार लेते हैं। रामावतार के अनेक कारण हैं। उनमें से मुख्य है–जय विजय की मुक्ति। तीन जन्मों तक ये अभिशप्त हैं। हिरणाक्ष्य और हिरण्याकश्यप रूप में बाराह और नृसिंह अवतार धारण कर उस योनी से मुक्ति दिलाई। अभी दो जन्म और शेष थे। अत: रामावतार में रावण और कुंभकरण का उद्धार किया।

कृष्ण जन्म में शिशुपाल और दैतवक्त मुक्त होकर फिर द्वारपाल जय–विजय बने। यह प्रसंग अपनों के प्रति आसक्ति का अनुपम उदाहरण है। जय–विजय तो अपने कर्तव्य का निर्वहन कर रहे थे। सनकादिचारों नंग–धड़ंग, यद्यपि बालरूप में थे, प्रोटोकाल का उल्लंघन करने लगे। शिष्टाचार की रक्षा में जय–विजय शापित हुए। स्वामिभक्ति का यह आदर्श है। ऐसे भक्तों का उद्धार आवश्यक था।

दूसरा जन्म कश्यप और अदिति जो बाद में मनु–शतरूपा हुए, फिर दशरथ–कौशल्या की इच्छा पूर्ति हेतु अवतरित हुए। नारद के अहं को समाप्त करने के लिए आभिशप्त हुए। सीता वियोग सहा। ब्रह्मा, विष्णु और शंकर दत्तात्रेय के रूप में हुए। राम सर्वशक्तिमान थे। बैकुंठ से कुंठाहीन करने की सामर्थ्य थी। संसार को, मनुष्य को भी तो उसकी शक्ति का बोध कराना था। कहते है कि चौरासी लाख योनियों में सर्वश्रेष्ठ योनि मनुष्य है। यही मनुष्य परिस्थितियों का दास बनकर पराजय का मुख क्यों देखता है? राम ने मनुष्य को उसकी महत्ता का बोध कराया है। नरेन्द्र कोहली ने यह कार्य गद्य (उपन्यासों) के माध्यम से किया है। परमात्मा न जाने कब से कह रहे हैं कि 'एको अहम् बहुस्याम:' अर्थात् मैं एक अनेक में व्याप्त हूँ। और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं–'सर्व खल्वदिम् ब्रह्मम' अर्थात् सब कुछ ब्रह्ममय है। पर मनुष्य को न जाने क्यों अपनी महानता का बोध ही नहीं होता। इसका मुख्य कारण अपना अपरिचय है। पाँच प्रश्नों का उत्तर या तो उसे ज्ञात नहीं या जानना नहीं चाहता। पहला–मैं कौन हूँ?, दूसरा–मैं किसका हूँ?, तीसरा–कहाँ से आया हूँ?, चौथा–आने का हेतु क्या हैं?, पाँचवाँ– जाना कहाँ हैं? इन प्रश्नों के उत्तर हैं। प्रथम–मैं अंशी का अंश हूँ। दूसरा मेरा पिता परमपिता परमात्मा है। तीसरा जैसे अग्नि से चिनगारी, जल से लहर का अस्तित्व अलग हो जाता है। वैसे ही मैं भी उस अंशी से विलग अंश हूँ। चौथा–जो इसका कार्य है–विप्र, धेनु, सुर, संत हित वही मेरा भी कार्य है अर्थात् जियो और जीने दो। पाँचवा–वहीं जाना है, जहाँ से आया है। बूँद में समुद्र समाया हुआ है। यह आश्चर्य मैं किससे कहूँ?

रामावतार सर्वाधिक आकर्षक और ग्राह्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने तीन प्रकार की श्रद्धा का उल्लेख किया है–प्रतिभा, साधन सम्पत्ति और शील। पहली दो न भी हों तो कोई क्षति नहीं। शील से ही समाज का गौरव और रक्षा है। राम शील के आदर्श हैं। कुछ लोग कहते है कि राम यूटोपिया (काल्पनिक) है। इन्हीं यूटोपियाई भक्तों ने सुप्रीम कोर्ट तक में इनके अस्तित्व को अस्वीकारा था। पर अब स्वीकार रहे हैं। कहा भी है–**सो जानहिं जेहि देहि जनाई। जानति तुम्हहिं, तुम्हहिं होई जाई।**

आज राम और रामराज्य के प्रति बढ़ता आकर्षण रामावतार को फिर सार्थकता प्रदान कर रहा है। यह मानव विजय के शुभ लक्षण और संकेत के प्रमाण हैं।

शुक्लाज, वीनस 43, मीनाक्षी प्लेनेट सिटी,
भोपाल-462043 (म.प्र.)
मो.-9575922811

सिय पिय की पाती

– राजरानी शर्मा

जन्म – 12 मई 1955।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – तीन पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – शिक्षा समिति द्वारा साहित्य भूषण सम्मान।

विराट के वैभव को वाक् के वातायन से निहारने के आनंद का नाम ही महाकाव्य 'मानस' है। महाचिति की ललित लीला में यों तो अनेकानेक प्रसंग हैं जो मन की धरा को आँसुओं से तरबतर कर जाते हैं किन्तु वियोग श्रृंगार का करुणललित वर्णन है सिय पिय की पाती, जिसे पढ़कर तो मानो भावों की अथाह जलराशि गहरे में उतरने का सहज आग्रह लिए प्रकट होती है। यों तो काव्योत्कर्ष का चरम वैभव है मानस जहाँ हर दोहा चौपाई मार्मिक प्रसंगों की भाव समाधि की विधि बन जाती है। नवरस के रसज्ञ चितेरे तुलसी ने मानस में रसराज श्रृंगार का सत्कार बालकाण्ड के पुष्प वाटिका में राम सीता के परस्पर प्रथम दर्शन से किया है और सुंदरकाण्ड में पाती से संदेश से रसराज को पुष्ट किया है विप्रलंभ के मनुहार से मनाया है। 'कंकण किंकिणि नूपुर' की ध्वनि से झंकृत राम के हिय की भावराशि समर्पण की सौगंध को सिय के सीमन्त पर सजा कर प्रेम के नव्यतम उत्कर्ष तक ले जाती है। लीला प्रसंगों के इसी क्रम में पंचवटी के राम सिय से अरण्य के एकान्त में आश्वस्त सा आग्रह करते हैं और सहज भाव से करते हैं।

'सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करब ललित नर लीला॥
तुम पावक मँह करहु निवासा। जौं लगि करहुँ निसाचर नासा॥'

इसी ललित नर लीला के क्रम में सिय और सियपिय के बीच विरह की अनंत जलराशि सा सागर आ जाता है। सीता सागर पार लंका में अशोक का शोक बनी बैठी हैं। सागर की महा जलराशि मानो सीता के कोमल करुण मन के आर्त् भाव, अश्रुबिन्दुओं में ढल-ढल कर सागर को अधिक दुस्तर बना रहे हों; मानो सागर का सारा खारापन सीता के आँसुओं की कहानी बन गया है अनबूझ सी है ये ललित लीला! अशोक वाटिका अरण्य सी लगती है और विरह का ये अरण्यरोदन आकाश-पाताल को, दिग्दिगन्त को रुला देने को पर्याप्त है।

इसी विरह सागर में अकूल डूबती-उतराती सीता को अचानक पिय की पाती लिए 'अजर, अमर, गुननिधि सुत' हनुमान मिल जाते हैं। सीता कह उठती हैं।

'श्रवनामृत जेहि कथा सुहाई। कही सो प्रकट होत किन भाई॥'

विशेष परिचय जान कर विशेषत-'सत्य सपथ करुनानिधान की' सुनकर हनुमान के प्रति प्रीति बढ़ जाती है, तब सीता विरह जड़ित मन से कह उठती हैं –

'बूड़त विरह जलधि हनुमाना। भयउ तात मो कहँ जलजाना॥'

वियोग श्रृंगार की सघन लताओं से घिरी व्याकुल सीता अशोक वाटिका में मूर्तिमंत शोक 'कृसतनु सीस जटा एक बेनी जपत हृदय रघुपति गुन श्रेनी' सी बैठी हैं। तुलसी लिखते हैं।

'निज पद नयन दिये मन, राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत, देखि जानकी दीन॥'

सीता माँ के ऐसे दर्शन कर, भाव-विह्वल हो गये हनुमंत, नर-वानर की मिलन कथा वर्णन करके हनुमान एक बार पुनः सीता जी के आर्त् मन की वेदना को सहन नहीं कर पाते हैं और सिय पिय की पाती सुनाना प्रारंभ कर देते हैं।

'रघुपति कर संदेस' सुनाते कपि गद्गद हो जाते हैं और नयन नीर भर लाते हैं। मानो 'मम गुन गावत पुलक सरीरा। गद्गद गिरा नयन बह नीरा' के साक्षात् निदर्शन बन जाते हैं। तभी तो सीता जी की प्रीति और प्रतीति हनुमान जी में बढ़ जाती है। तुलसी लिखते हैं 'हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी' विश्वास की पीठिका पर संदेस का बीज-मंत्र साधना के फल सा फलीभूत हो उठता है। सिय पिय की इस दिव्य पाती ने प्रेम की उस दशा को साकार कर दिया जहाँ न स्याही की

आवश्यकता है न पत्र की, ये पाती तो केवल और केवल 'प्रतीति-संप्रेष्य' अनलिखी है पर अनकही या अनसुनी नहीं है। पहली पाती है पर हिय की बाती है जो हिय से हिय की वर्तिका को जला पाती है। नैराश्य सिंधु में आस की ज्योति सी पाती सिय ने सुनी तो मानो जीने की कंपायमान लौ की झिलमिली सी जग गई!

'कहेहु राम वियोग तव सीता। मो कहँ सकल भये विपरीता॥

विचारणीय बिन्दु यह है कि सिय पिय जो तेरह बरसों से प्रकृति के क्रोड़ में प्रिया के साथ वनवास कर रहे थे उन्हें प्रकृति के उपादानों से अधिक मन की बात कहने का और कोई माध्यम न मिला। 'सकल ' में सिय पिय का वह पवित्र अवलोकन है जो विरहाश्रु विगलित नयनों से प्रकृति के कण-कण में दिखाई देता है और यही सकल दृश्य जो विरह बिजड़ित मन से अनुभव किए जाते हैं, मन की पीड़ा मानव की तरह मानव बन कर राम भोगते भी हैं और उसे उपमा रूपकों में ढाल कर सिया जू तक पहुँचाना भी चाहते हैं -

'नव तरु किसलय मनहुँ कृसानु। काल निसा सम निसि ससि भानु॥
कुवलय बिपिन कुंत बन सरिसा। बारिद तपत तेल जनु बरसा॥'

अर्थात् विरहजड़ित मन से भी राम के मन की लय 'किसलय' से मिलती हैं किन्तु उन किसलय (नवजात पात) की अरुणिमा राम के मन को अग्नि सदृश लगती है। रात्रि, काल रात्रि सी, चंद्र, सूर्य जैसा लगता है। 'उरग स्वाँस सम त्रिविध समीरा' त्रिविध पवन तो सर्प की फुँकार सी लगती है। संदेश की सच्चाई को प्रमाणित करते सिय पिय जब स्वयं के असहाय से पाते हैं तो अकिंचन सादगी से कह उठते हैं-

'कहेउ ते कछु दुख घट होई। काह कहौं यह जान न कोई॥

और आगे अपनी ही बात को स्वयं ही नकारते हुए कह उठते हैं 'नहीं नहीं मैं तो जानता हूँ।'

'तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एक मन मोरा॥
सो मन सदा रहत तोहि पाहीं। जान प्रीत रस इतनेहि माहीं॥'

अर्थात् प्रेम के गूढ़ तत्व के प्रकट करने के विविध प्रयोजन पाती में हैं। ललित नर लीला में सिय पावक में निवास कर रही हैं; सो छाया सीता को विरह उसी प्रकार सता रहा है जैसे एक सामान्य नारी को सताता है। इस विरह ज्वाल की शांति भी पाती के जल से हो सकेगी। केवल मुंदरी से प्रयोजन सिद्ध न हुआ तो पुष्प वाटिका की सुधि दिलाते हुए राम 'नव तरु किसलय' की चर्चा करते हैं। इसी प्रसंग में त्रिजटा के कहने पर कि 'निसि न अनल मिलि सुन सुकुमारी' ये सुनकर सीता जी आर्त भाव से पुकार उठती हैं।

'सुनहु विनय मम विटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका॥
'नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगन जनि करहु निदाना॥'

अशोक से अपनी आर्त पुकार में सीता भी 'किसलय' की बात करती हैं; राम के संदेश में भी 'नवतरू किसलय मनहु कृसानु' कहकर किसलय की चर्चा की गई है। सिय का और सिय के पिय का नव तरु किसलय सा मन किस लय में रहता है वह पुष्प वाटिका की लय है, सुधियों की लय है, लीन कर लेने वाली लय है सो जाने-अनजाने वही शब्द-शब्द होकर चेतना के प्रवाहों में बह उठती है। इसीलिए मानस के विरह-प्रसंग में राम सीता दोनों ने अपने-अपने प्रकार से 'किसलयों' की चर्चा की है। श्रीराम अपने संदेश में कुमुदवनों की भी चर्चा करते हैं, उन कुमुदवनों की जो वनवास अवधि में सुधियों की रात्रि में राम सीता दोनों ने ही साथ-साथ वन भ्रमण करते हुये देखे। उन कुमुदवनों की स्मृतियों को साझा करने कि लिये कदाचित् राम अपने संदेश में उल्लेख करते हैं। सिय पिय अपनी प्राण प्रिया से कह उठते हैं कि तुम्हारे वियोग में वे कुमुदवन अब कुंतवन अर्थात् भाले के समूह से लगते हैं। राम जब विरह में खग-मृग और मधुकर श्रेणी को पुकार उठते हैं तो यह सहज अनुमान से कहते हैं कि सीता भी निपट अकेली अपने विरही मन से क्या-क्या न सोचती होंगी? किस-किस को न पुकारती होंगी? यहाँ तक कि राक्षसी त्रिजटा को भी 'मातु विपत संगिनि तू मोरी' कह उठती हैं। अब ये सब प्रभु अन्तर्यामी से छिपा है क्या? इसलिए राम के संदेश का भाव है तत्व

'प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एक मन मोरा।
सो मन सदा रहत तोहि पाहीं। जानि प्रीति रस एतनेहि माँहीं॥'

(कहियत भिन्न न भिन्न) ये कह कर मन के और वन के सभी व्यक्त -अव्यक्त तथ्य और तत्वों को प्रकट कर देते हैं। मानो भाव-विह्वल राम, येन-केन-प्रकारेण प्रिया को अपनी विरह विगलित मनोदशा की प्रतीति करा देना चाहते हैं। यह सब हनुमंत ने राम के संदेश 'बल विरह सुनायहु' के फलितार्थ में कहा है।

भावुक भक्त, करुणाद्रवित हनुमान जी संवेदना की मूरत बने से टुकुर -टुकुर देखते हैं कि सीता जी की प्रभु का ये संदेश सुनते समय क्या दशा है? तुलसी लिखते हैं।

'प्रभु संदेस सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहीं तेही॥'

'मूर्च्छा' विरह की ही एक दशा है। प्रभु का संदेश सुनकर जानकी जी

भाव मूर्च्छा में हैं।

विचारणीय बिन्दु है कि ललित नर लीला को सजगता से निर्वाह करते हुए प्रभु राम विरह की सभी अन्तर्दशाओं को भी जी लेना चाहते हैं, जिससे लोक को ये प्रतीति हो कि धीरोदात्त नायक राम लोकरक्षक ही नहीं लोकरंजक भी हैं। लोकरंजक का यहाँ तात्पर्य है कि सामान्य जन की भावदशा का अनुभव और सहज अभिव्यक्ति करना राम का अभिप्रेत है। परात्पर ब्रह्म सच्चिदानंद घन श्री राम ललित नर लीला करें तो वह लीला मानव जाति के लिए संजीवनी बन जाए। लीला जिजीविषा का अचूक मंत्र बन जाए इसी का सारा उपक्रम है। श्रीराम रावणारि हैं रावण को मारने से पूर्व समस्त राक्षस जाति का संहार कर देते हैं ये बड़ी बात नहीं है; वे सर्वसमर्थ हैं सब कर सकते हैं। बड़ी बात है, जो हृदय को मथ देती है, वह यह है कि राम साधारण मनुज की तरह विप्रलंभ का अनुभव करते हैं, विलाप करते हैं, खग मृग से सीते का पता पूछते हैं। अकेले में डरते हैं और ये बात अनुज लक्ष्मण से साझा भी करते हैं –

'घन घमंड गरजहिं नभ घोरा। प्रियाहीन डरपत मन मोरा॥'

ऐसी ललित नर लीला करते हैं और संपूर्ण लीला अवधि में एक बार भी ऐश्वर्य की भनक तक नहीं लगने देते। प्रतिबद्ध हैं राम कि जो भी विप्र सदृश ज्ञानी, संतोषी, त्यागी और अनुसंधित्सु हैं, जो भी सुर के समान पवित्र, परोपकारी और पुण्यात्मा हैं, जो भी संत के समान सात्विक, सहज, विनम्र और तेजस्वी हैं, और जो भी गौ के समान सीधे, सरल, पवित्र और परहित निरत हैं उन सभी का हितरक्षण करते रहें, जिसके लिये प्रभु अवतारी बने हैं। अनेक निदर्शनों में से रुचिरव्रती और सुशीला प्रिया को पाती भेजकर ढाढस बँधा लेने का मंतव्य यह भी है कि लोक को स्पष्ट करना कि दाम्पत्य में, प्रेमाभिव्यक्ति और संप्रेषणीयता मूल्यवान भी है और अनिवार्य भी है। प्रकारान्तर से राम कहना चाहते हैं मैं 'हे सीते! विप्र धेनु सुर संत हित 'मैं जो ये मनुज अवतार लेकर लीला कर रहा हूँ इसके निहितार्थ ही तुम्हारा ये विरह है, इसलिये ऋणी हूँ तुम्हारा, मेरी अवलंब हो तुम! तुम्हारे इस योगदान के बिना मैं अपने लक्ष्य तक न पहुँच पाता सीते!'

पाती में सदैव ही बहुत कुछ अनकहा रहता ही आया है न। जैसे न तो श्रीकृष्ण की पूरी पाती उद्धव गोपिकाओं तक पहुँचा पाए न गोपिकाओं के मन का मर्म श्री कृष्ण से कह पाए। श्री कृष्ण स्वयं इस विवशता को प्रकट करते हुए रत्नाकर के 'उद्धव शतक' में कह उठते हैं।

'गहबरि आयौ गरौ भभरि अचानक त्यौं,
प्रेम परयौ चपल चुचाइ पुतरीनि सौं।
नैंकु कही बैननि, अनेक कही नैननि सौं,
रही-सही सोऊ कहि दीनी हिचकीनिं सौं॥'

इसी तरह मन वचन कर्म के अनेक संकेतों से प्रिया तक अपनी बात पहुँचाने के लिये त्रेता युग का ये अद्भुत प्रेम पत्र अनोखी आश्वस्ति है, विराट विश्वास है और परस्पर प्रतीति का दमकता दर्पण है। जिसके साक्षी पाती ले जाने वाले हनुमान जी स्वयं प्रभु की ओर से भोला सा विश्वास दिला देते हैं।

'जो रघुबीर होत सुधि पाई। करते नहिं बिलंब रघुराई॥'

मर्मस्पर्शी विप्रलंभ शृंगार का आधार, सिय पिय की यह पाती, युगों –युगों तक दाम्पत्य का अवलंब बन मन के गवाक्ष की सुखद बयार सी पढ़ी और गाई जाती रहेगी। रत्नाकर के आर–पार परिस्थितियों की कसौटी पर दाम्पत्य के कंचन को कस कर कुंदन बनाने वाली पाती है सिय पिय की पाती। पातिव्रत्य की शुचिता को संबल बना लेने का अमोघ मंत्र है, ये राम की पाती सिया के नाम; जो जीवन के कठिनतम क्षणों में भी प्रिया के मन में , समर्पण के सौन्दर्य को अजेय शक्ति में बदल देने की सामर्थ्य भर देती है। प्रश्न यह है कि जब किष्किन्धाकाण्ड में श्री राम, सुग्रीव द्वारा वानर सेना को सीता जी की खोज में जाते देख रहे थे तब पीछे जाने वाले हनुमान जी से श्रीराम ने ये कहा –

'पाछे पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा॥
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्ह जन जानी॥'

यहाँ 'कर मुद्रिका दीन्ह जन जानी' कह कर तुलसी बहुत संकेतात्मक गूढ़ बात कह गए। जिसे राम ने चुना वह अमोघ बाण की तरह जाएगा ही। राम के कर कमल जिसके सीस पर हों उसको कुछ भी असंभव, अगम, अप्राप्य नहीं रहता। जिसके हाथ में राम की मुद्रिका हो वह सप्त द्वीप नव खंड में सहज ही जा कर असाध्य को साध कर आ सकता है। इसीलिए मानस में जितना कहा गया है, उससे मूल्यवान अनकहा है!

पाती के रूप में सिय पिय श्रीराम ने जो कहा वह भी बड़ा ही सूत्रात्मक है–हनुमान जी से राम क्या कहते हैं इस पर तुलसी लिखते हैं।

'बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु। कहि बल विरह बेगि तुम्ह आएहु॥'

देखा जाए तो केवल यही अर्द्धाली ही सिय पिय की जादुई 'पाती' है। किन्तु सूक्ष्मानुवीक्षण से देखा जाए तो यह सूत्रात्मक पाती तुलसी की सायास अग्रप्रस्तुति है। सीता को समझाने में अनंत वार्ता समाहित हैं जो बुद्धि-विज्ञानविभु हनुमान जी स्वयं सीता जी को समझा लेंगे, ऐसा राम जी का विश्वास है। दो बातें कहीं प्रभु ने 'कहि बल विरह' यानी सीता को मेरा बल बताना और मेरे विरह का वर्णन करके शीघ्र आने को कहा! ये पाती प्रभु के भक्त हनुमंत की सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि , संवेदना शक्ति और कल्पनाप्रवणता का ही परिणाम है। वैसे भी विज्ञ और निष्ठावान जन, सूत्रात्मक भाषा में ही समझ जाते हैं। हनुमान जी को विश्वास रहा कि राम ने कहा है मुद्रिका देना है, संदेश सुनाना है और शीघ्र आना है। तभी तो सीता जी से कहते हैं '**अबहि मातु मैं जाऊँ लबाई। प्रभु आयसु नहिं राम दुहाई॥**'

सिया जी को राम की पाती समर्थ संजीवनी की तरह, शेष दिनों के अवलंब की तरह, और राम की अजेय शक्ति के दृढ़ विश्वास की तरह मिली।

हनुमान जी जिस प्रकार सिय पिय की पाती के रचनाकार व सूत्र व्याख्याता बने उसी प्रकार सीता जी ने भी प्रिय की पाती के उत्तर में कुछ सूत्रों में ही जो बातें कहीं और जो-जो हनुमान जी ने सीता जी की दशा का अवलोकन किया उसको पुन: राम जी के पास पाती की तरह मर्म-संवेद्य भाषा में सचित्र वर्णन कर दिया।

'नाथ जुगल लोचन भरि बारी। वचन कहे कछु जनककुमारी॥
अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीनबंधु प्रनतारति हरना॥
प्रणाम में भी सायास विशेषण प्रयोग है। 'प्रनतारति हरना और दीन बंधु' से द्रवित मन राम सीता को मन की आँखों से देख ही लेंगे!

हनुमान जी ने कहा आगे पूछती हैं सीता –

'मन क्रम वचन चरन अनुरागी। केहि अपराध नाथ हौं त्यागी॥
फिर सीता स्वयं अपना अपराध ही मान कर उत्तर दे लेती हैं -
अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना॥
फिर आगे स्पष्टीकरण भी देती हैं कि नयन कैसे बाधा बन गये -
नाथ सो नयनन्ह कौ अपराधा। बिछुरत प्रान करहिं हठ बाधा॥
विरह अगिन तन तूल समीरा। स्वास जरइ छन माँहि सरीरा॥
नयन स्त्रवहिं जल निज हित लागी। ज़रै न पाव देह विरहागी॥'

दु:ख की पराकाष्ठा के रूप में संत मन हनुमंत रुँधे कंठ से कह उठते हैं –

'सीता कै अति बिपति बिसाला। बिनहि कहें भल दीनदयाला॥'

राम जी के 'बल और विरह' के सूत्रों को विस्तारित करके, गहन अर्थ प्रदान कर के हनुमान जी ने सीता जी को सुनाया। पाती के प्रत्युत्तर में आँखों देखा वर्णन कर श्रीराम के सामने प्रामाणिक प्रस्तुति दी-

'निमिष निमिष करुणानिधि। जाहिं कलप सम बीति॥

बेगि चलिअ प्रभु आनइ, भुज बल खल दल जीति॥'
निष्कर्ष यह कि कोई ऐसा रंग, कोई ऐसा भाव जो जीवन में महत्व रखता है और महाकाव्य और वह भी रामचरितमानस जैसा महाकाव्य में न हो ऐसा संभव नहीं। काम को पुरुषार्थ मानने वाली हमारी भारतीय मनीषा, शृंगार को रसराज मानती है और उसमें भी विप्रलंभ शृंगार तो मर्म का दर्पण है मन का प्रतिबिंब है और प्रेम का पाथेय है। विप्रलंभ शृंगार प्रेम की जिस उदात्त मनोदशा का प्रतिफलन है वह किसी साधनावस्था से कम नहीं। तुलसी ने सटीक स्थान पर वियोग शृंगार का चित्रण किया! अपने कालजयी महाकाव्य के अनेक लोकमंगलकारी प्रयोजनों के कारण जो तुलसी उर्मिला के विरह को मानस में रेखांकित न कर पाये वे सिय पिय के विरह का वाक् - प्रसाद देकर महाकाव्य को महाचिति का चैतन्यामृत बना अमर कर गए। महाभाव सृष्टि के साथ सिय पिय की ये पाती माधुर्य भक्ति का अनुपमेय उदाहरण है। जीवन रस है। जन मन , प्रभु प्रेम के प्रसाद की सतत तृषा लिए है। इन सत्वोद्रेक युक्त हृत्संवेद्य प्रसंगों से ये तृषा शांत होती है। ऐसे ही अमृत पान के लिए तुलसी लिखते हैं –

'रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनहि राम गुनग्रामहि॥'

सिय पिय की पाती के आदान-प्रदान के फलितार्थ ही हम करुणानिधान के राजीव नयनों में विरह की झाँकी देख मन को सत्वोद्रेक से पावन-पावन अनुभव कर पाते हैं –

सुन सीता दु:ख प्रभु सुख अयना। भरि आये दोऊ राजीव नयना॥

करणानिधान के ये करुणाकलित नय न हमारे मन की आँखों में सतत् बसे रहें इसलिए मानस सुंदरकाण्ड के अनुष्ठान का विधान है।

के -67, पटेलनगर, सिटी सेंटर
ग्वालियर 474011 (म.प्र.)
मो. -9425339771

डॉ. परशुराम के बाल-काव्य में जीवन मूल्य

- अनीता श्रीवास्तव

जन्म - 6 जनवरी 1967।
जन्मस्थान - जबलपुर (म.प्र.)
शिक्षा - स्नातकोत्तर।
सम्मान - क्षेत्रीय सम्मान।

बाल साहित्य नाम से ही स्पष्ट है बच्चों का साहित्य अर्थात् जो साहित्य बच्चों के मन व मनोभावों को परखकर लिखा जाता है, उसे हम बाल साहित्य की संज्ञा दे सकते हैं। बालमन व मनोभावों को परखकर बाल साहित्य की रचना करना कठिन कार्य है। वास्तव में बच्चों के लिए लिखने में लेखक या कवि को स्वयं बच्चा बनना पड़ता है। बाल मनोवैज्ञानिक, बाल अनुभूतियों, बाल अभिरुचियों, बाल कल्पनाओं एवं बाल चेष्टाओं का अध्ययन किए बिना कोई भी साहित्यकार सुरुचिपूर्ण, मनोरंजक, ज्ञानवर्धक एवं शिक्षाप्रद साहित्य का सृजन नहीं कर सकता है। स्वस्थ बाल साहित्य लिखने के लिए बच्चों के मन की गहराई में उतरने की आवश्यकता होती है। बाल साहित्य के अंतर्गत वह समस्त साहित्य आता है, जो बच्चों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर लिखा गया हो। बाल साहित्य के अंतर्गत रोचक कविताएँ व कहानियाँ प्रमुख हैं।

बाल साहित्य का उद्देश्य बाल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं अपितु उन्हें आज के जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराना है। आज के बालक भावी भारत के सच्चे नागरिक होंगे, उन्हीं के अनुरूप उनका चरित्र निर्माण होगा। जिससे बच्चे जीवन में संघर्षों का सामना कर सकेंगे। इन बच्चों को शिक्षित होकर अपना भविष्य बनाना है, चंद्रमा एवं अन्य ग्रहों पर जाना है एवं अंतरिक्ष की यात्राएँ करनी हैं।
बाल साहित्य का प्रमुख उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास करने की प्रेरणा प्रदान करना है। इसके लिए बाल साहित्यकार नैतिक व चारित्रिक गुणों के विकास का मार्ग प्रशस्त कराने वाली बाल कृतियों का सृजन करें, जिसमें बालकों के व्यक्तित्व का विकास कराने वाले प्रसंगों का समावेश हो।

डॉ. परशुराम शुक्ल बाल साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। श्री शुक्ल की साहित्य साधना वरेण्य है। आपने बाल साहित्य की प्रत्येक विधा पर अधिकार पूर्वक लेखनी चलाकर बाल साहित्य जगत को आलोकित किया है। आपके लेखन की क्षमता अद्भुत है। श्री शुक्ल ने मनोविज्ञान का गहराई से अध्ययन किया है। बाल मनोभावों के सागर में डुबकी लगाकर मोतियों को तलाशा है। अर्थात् बाल मनोभावों के प्रत्येक क्षेत्र को रेखांकित किया है।

बाल साहित्य के पुरोधा श्री शुक्ल ने साहित्य सृजन में जीवन-मूल्यों का प्रतिपादन किया है। ये जीवन-मूल्य कौन-कौन से हैं? उन्हें जानने से पहले हम यह जानेंगे कि जीवन-मूल्य का अर्थ क्या है?
'मूल्य कोई वस्तु या मूर्त विषय नहीं है वह मानव चेतना में व्याप्त एक अमूर्त अवबोध है। जीवन मूल्य एक अवधारणा है, एक अनुभव है, जिसे इंद्रियों के माध्यम से नहीं अपितु आत्मचेतना के धरातल पर अनुभूत किया जा सकता है। जीवन मूल्य का संबंध किसी वस्तु के अस्तित्व से नहीं है अपितु वस्तु के प्रति मनुष्य के दृष्टिकोण से है। चूकि वस्तु विशेष के प्रति सबका दृष्टिकोण एक समान नहीं हो सकता। अत: मानव के जीवन मूल्य एक जैसे नहीं होते।'

जीवन मूल्यों के निर्माण और नियमन में अनेक कारकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यथा-मनुष्य की इच्छा, आकांक्षा प्रवृत्ति, अभिवृत्ति, अभिरुचि, शिक्षा-संस्कार, परिवेश, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, दार्शनिक-आध्यात्मिक आदर्श, संगीत, कलात्मक अभिवृत्ति आदि। इन सब में मानव आध्यात्मिक चेतना से अभिप्रेरित होकर मानव मनमूल्यों की खोज करता है।
वुड्स के अनुसार मूल्य—'मूल्य दैनिक जीवन में व्यवहार को नियंत्रित करने के सामान्य सिद्धांत हैं।'

जीवन-मूल्य केवल मानव-व्यवहार की दिशा निर्धारित नहीं करते बल्कि अपने आप में आदर्श और उद्देश्य भी होते हैं। जीवन मूल्य मात्र बाह्य कारकों पर ही आश्रित नहीं होते अपितु उनका संबंध मनुष्य के भाव जगत से भी होता है। मनुष्य की प्रेम, परोपकार, त्याग, सेवा, समर्पण आदि भावनाएँ मानव के मूल्य जगत को प्राय: आंदोलित करती रहतीं हैं। यही भावनाएँ कभी-कभी ऐसा अंतर्द्वन्द्व। उपस्थित करती हैं कि मनुष्य के लिए सम्यक मूल्य निर्णय कठिन हो जाता है। मनुष्य एक भाव प्रणव प्राणी है। उसके जीवन के विविध क्रियाकलाप भाव प्रेरित होते हैं। अत: हम कह

सकते हैं कि जीवन–मूल्य न तो पूर्णत: व्यक्तिनिष्ठ होते हैं न ही पूर्णत: वस्तुनिष्ठ।

मूल्य दो प्रकार के होते हैं–

1. शाश्वत मूल्य–इन मूल्यों में किसी भी कारण या परिस्थिति अनुरूप परिवर्तन नहीं होता है। जिसमें सौन्दर्यात्मक मूल्य जैसे–सत्यम् शिवम् सुंदरम् का स्थान है। नैतिक मूल्य त्याग, अहिंसा, सेवा, न्याय आदि।

2. बदलते मूल्य–भौतिक समृद्धि के साथ–साथ इन मूल्यों में बदलाव आते हैं। यथा–जैविक मूल्य जिसमें आर्थिक मूल्य या फिर अति जैविक मूल्य–सामाजिक, आध्यात्मिक आदि मूल्यों का समावेश हम कर सकते हैं।

परशुराम शुक्ल के बाल साहित्य में जीवन मूल्यों की लंबी सूची है, लेकिन हम यहाँ शुक्ल जी के बाल काव्य में कुछ जीवन–मूल्यों को उद्घाटित करने का प्रयास करेंगे।

डॉ. शुक्ल के बाल साहित्य में सैद्धांतिक मूल्य इस प्रकार हैं—सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय, प्रेम, शांति और क्षमा।

व्यावहारिक जीवन मूल्य हैं—(व्यष्टिपरक)–आस्था और विश्वास, आध्यात्मिकता, आत्मविश्वास, उदारता, धर्मनिष्ठा, दूरदर्शिता, विनयशीलता, सरलता, सहजता, स्वाभाविकता, नियमबद्धता, नैतिकता, आत्मगौरव, शालीनता, सदाचार, सृजनात्मकता, वीरता, निडरता, त्याग और सौंदर्य बोध।

समष्टि परक मूल्य हैं—परोपकार, सेवाभाव, कर्तव्य–परायणता, सहिष्णुता, संवेदनशीलता प्रियभाषिता, व्यवहार–कुशलता, करुणा, सौहाद, सहानुभूति, सामन्जस्य, प्रकृति प्रेम, राष्ट्रीय प्रेम और विश्वबंधुत्व।

अब हम यहाँ कुछ जीवन–मूल्यों पर दृष्टिपात करेंगे।

1 सत्य– सत्य का शाब्दिक अर्थ होता है–'सते हितम् ' यानि सभी का कल्याण। कल्याण की यही भावना मनुष्य को सत्यवादी व्यक्ति बनाती है। कल्याण की भावना को आत्मसात कर व्यक्ति सत्य बोलता है। सत्य एक गहरा व व्यापक जीवन मूल्य है।

गाँधी जी के अनुसार सत्य से आशय केवल सच बोलने से नहीं अपितु सत्य विचार, सत्य आचरण एवं सत्य भाषण से है। गाँधी जी ने सत्य, अहिंसा के बल पर स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी। स्वामी विवेकानंद सत्य और सेवा को जीवन के आधारभूत मूल्य मानते हैं। हिंदू धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म सत्य के आधारभूत सिद्धांतों पर चलने की प्रेरणा देते हैं।

'सत्यमेव जयते' भारतीय संविधान का राष्ट्रीय नारा एवं भारत का राष्ट्रीय आदर्श वाक्य है। जिसका अर्थ है—सत्य की ही जीत होती है।

इसी प्रकार 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' भारतीय संस्कृति का आदर्श है। सत्य का अर्थ–बौद्धिक, शिवम् का अर्थ–नैतिक एवं सुंदरम् का अर्थ कलात्मक होता है। सत्य में समस्त मानवीय गुणों की समग्रता होती है।

डॉ. परशुराम शुक्ल ने बाल पाठकों में बचपन से ही सत्य का मार्ग अपनाने की प्रेरणा अपनी बाल कविताओं के माध्यम से देने का सफल प्रयास किया है। 'तिरंगा' नैतिक मूल्यों पर आधारित डॉ. शुक्ल की बाल काव्य कृति है। शुक्ल जी बालकों को सत्य के मार्ग पर चलकर किस प्रकार बड़े–बड़े कार्य पूरे किए जा सकते हैं, 'बापू' कविता में बताते हुए कहते हैं–

'अंग्रेजी निर्मम शासन से, / तुमने हमें बचाया।
सत्य, अहिंसा और धर्म का, / हमको पाठ पढ़ाया।।' (डॉ. परशुराम शुक्ल, तिरंगा, पृ. 37)

बच्चे देश के भावी कर्णधार हैं। बाल्यावस्था में ही बच्चों में नैतिक मूल्य विकसित करना हमारा कर्तव्य है। मूल्य कभी पढ़ाए नहीं जाते अधिग्रहीत किए जाते हैं। बच्चों को कविता व कहानी के माध्यम से नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिए।

डॉ. शुक्लकृत 'चारों खाने चित्त' बाल काव्य संग्रह नैतिक मूल्यों पर आधारित है। इन बाल कविताओं में सत्य, अहिंसा के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। 'गौरवशाली देश' बाल कविता में उच्च आदर्शो पर चलकर देश का मान बढ़ता है। कविता सरल भाषा में प्रस्तुत है –

'सत्य अहिंसा के महत्व को, / खुद समझें जग को समझाएँ।
ऊँचे आदर्शों पर चलकर, / गौरवशाली देश बनाएँ।।'
(डॉ. परशुराम शुक्ल, चारों खाने चित्त, संस्कृति साहित्य, पृ.35)

प्रेम—प्रेमसबसे बड़ा जीवन मूल्य है। संसार की उत्पत्ति एवं संपूर्ण सृष्टि का आधार प्रेम है। सामाजिक संबंधों को बनाए रखने का आधार प्रेम ही है, प्रेम ईश्वर है, प्रेम दुनिया का सबसे महान ग्रंथ है। प्रेम के कारण ही परिवार, समाज राष्ट्र व विश्व एक सूत्र में बँधे हैं। प्रेम ऐसा मूल्य है जिसमें सभी जीवन–मूल्य समाहित हैं। प्रेम समभाव की अंतर्दृष्टि की भाव भूमि है, प्रेम अमरता का प्रतीक है।

डॉ. परशुराम शुक्ल ने बाल साहित्य में प्रेम के विस्तारित रूप का सृजन किया है। आपसी प्रेम, प्रकृति प्रेम, राष्ट्रीय प्रेम, वन्य जीवों के प्रति प्रेम को श्री शुक्ल ने अपनी बाल कविताओं में यथोचित स्थान दिया है। शुक्ल जी बच्चों में वन्य, प्राणियों के परस्पर प्रेम को इन पंक्तियों में प्रकट करते हुए कहते हैं–

'शेर, लोमड़ी, भालू, / बंदर, काला मोटा हाथी।
सभी प्रेम से रहते, / नंदनवन के साथी।।' (डॉ. परशुराम शुक्ल, नंदनवन, पृ.68)

आस्था और विश्वास–आस्था ही अटल विश्वास है, जो हमारे भावों को दृढ़ बनाती है। आस्था आत्मकेंद्रित एवं वास्तविक होती है, विश्वास प्रमाण एवं सत्यापन अपेक्षित होते हैं। यह हृदय से अधिक मस्तिष्क से संबंधित होते हैं। विश्वास से ही हमारा अस्तित्व व मूल्य तय होते हैं।

डॉ. शुक्ल ने आस्था और विश्वास को अपने बाल साहित्य में सर्वोच्च स्थान दिया है। अपने बच्चों में आस्था और विश्वास के भाव जागृत करने

के लिए बाल कविताओं में ईश वंदना, देव स्तुति एवं मातृ वंदना को प्रमुख स्थान दिया है। शुक्ल जी की समस्त बाल काव्य कृतियों की पहली रचना या बाल गीत, प्रार्थना, कामना, स्तुति एवं विनती से प्रारंभ हुई हैं। आपने बालकों को ईश्वर के प्रति विनम्र भाव जागृत करते हुए राष्ट्र कल्याण हेतु प्रार्थना का भाव चित्रित किया है। 'प्रार्थना' बालगीत की पंक्तियों में बच्चे ईश्वर से वरदान माँग रहे हैं, मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्य न्यौछावर करने को तैयार हैं –

'हे! ईश्वर तुम बड़े महान, / मैं बालक छोटा नादान।
आज माँगता यह वरदान, / पढ़ लिखकर मैं बनूँ महान।
मातृभूमि से प्रेम करूँ मैं, / मातृभूमि के लिए जिऊँ मैं।
मातृभूमि पर हो बलिदान, / भारत माँ का रखूँ ध्यान।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल, मंगल ग्रह जायेंगे, पृ.11)

इन पंक्तियों में प्रेम, आस्था और सम्मान के भाव निहित हैं।

परोपकार– परउपकार यानी दूसरों का हित करना। परोपकार सबसे बड़ा धर्म है। भगवान सबसे बड़ा परोपकारी है जिसने मानव जाति के कल्याण के लिए सृष्टि का निर्माण किया। प्रकृति का प्रत्येक अंश या घटक परोपकारी है। सूर्य, चन्द्रमा, नदियाँ, पेड़-पौधे एवं जीव-जंतु जो हमें प्रकाश, शीतलता, पीने का जल, खाने का अन्न, फल एवं दूध देते हैं। डॉ. शुक्ल की बाल कविता 'सूरज नया सवेरा लाता' में सूरज के परोपकार को दर्शाते हुए कवि कहते हैं—

'आता बड़े सवेरे सूरज, / अंधकार को दूर भगाता।
बच्चों बिस्तर छोड़ो अपना, / पहला यह संदेश सुनाता।
दिनभर चलता आसमान में, / शाम ढले थक कर सो जाता।
और दूसरे दिन फिर बच्चों, / सूरज नया सवेरा लाता।।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल, नंदनवन, पृ.11)

कर्तव्यपरायणता– कर्तव्य का अर्थ है दायित्व एवं परायण का अर्थ है– प्रवृत्त या लगा हुआ। अर्थात् कर्तव्य परायण व्यक्ति सदैव अपने कर्तव्य का पालन करता है। व्यक्ति को अंत:करण से अपने कर्तव्यों का बोध का होता है और वह अपने कर्तव्यों का पालन नैतिक दायित्व समझकर करता है, यही कर्तव्य परायणता कहलाती है।

'चिड़िया नीड़ बनाती' डॉ. परशुराम शुक्ल का नवीनतम बाल काव्य संग्रह है। इसकी अधिकांश कविताओं में मनोरंजन और नैतिक शिक्षा है। कुछ बाल कविताओं में प्रकृति चित्रण है।

डॉ. शुक्ल चिड़िया की कर्तव्य परायणता का वर्णन, बाल कविता के माध्यम से बच्चों को अपने कर्तव्यों का बोध कराते हैं। जिस प्रकार एक चिड़िया अपने बच्चों के लिए क्या-क्या जतन करती है, उसी प्रकार हमें भी हमारे कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए।
कविता दृष्टव्य है –

'तिनका-तिनका बीन-बीन कर, / चिड़िया नीड़ बनाती।
पेड़ों पर झाड़ी के अंदर, / पानी में उभरे टीलों पर।
बीन-बीन कर टहनी तिनके, / अपना नीड़ सजाती।
नीड़ मध्य यह अंडे देती, / इसके बाद बैठकर सेती।
बच्चे होने पर उनको, / दाने रोज खिलाती।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल, चिड़िया नीड़ बनाती, पृ.41)

इसी प्रकार 'शिक्षा' बाल कविता में कवि बच्चों को शिक्षा का महत्व बतलाते हैं कि बच्चों शिक्षा ही वह माध्यम है जो हमें हमारे अधिकारों व कर्तव्यों का ज्ञान कराती है–

'कर्तव्यों का बोध कराती, / अधिकारों का ज्ञान।
शिक्षा से ही मिल सकता है, / सर्वोपरि सम्मान।।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल1, मंगल ग्रह जायेंगे, पृ.18)

सहानुभूति–दूसरों की भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता व्यक्त कर उचित व्यवहार भेंट करना सहानुभूति कहलाती है। सहानुभूति मनुष्य का वह गुण है, जिससे उसके संवेग–दया, प्रेम व करुणा के भाव हृदय में रहते हैं। इन्हीं के कारण मनुष्य की संवेदनाएँ जागृत होती हैं। सहानुभूति एक हृदयवान व्यक्ति के अंदर तरंगित होने वाला एक कोमल अनुभव है। यह आत्मा की नि:शब्द भाषा है, जिसे प्रत्येक प्राणी सहज ही समझ लेता है।

डॉ. शुक्ल बालकों के मन में सहानुभूति की भावना प्रकट करते हुए कहते हैं कि उन्हें दूसरों के दु:ख को दूर करने एवं दीन-दुखियों के कष्ट दूर करने में सहभागी होना चाहिए। श्री शुक्ल नैतिक शिक्षा के द्वारा बच्चों में अपने आस-पास के लोगों का दुख दूर करने की भावना एवं सुख की कामना करने के गुण विकसित करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं–

'हे! ईश्वर दो मुझको शक्ति, / विश्वास और श्रद्धा भक्ति।
दीन-दुखियों के कष्ट हरूँ, / हो सभी सुखी कामना करूँ।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल, आओ बच्चों, गाओ बच्चों, पृ.12)

नैतिकता–नैतिकता का संबंध मानवीय अभिव्यक्ति से है, इसलिए शिक्षा से भी इसका अटूट संबंध है एवं शिक्षा इसका महत्त्वपूर्ण अंग है। डॉ. परशुराम शुक्ल ऐसे बालमन के पारखी बाल साहित्यकार हैं, जिन्होंने बाल मनोभावों के प्रत्येक क्षेत्र को रेखांकित किया है एवं प्रत्येक विधा में नैतिक मूल्यों की स्थापना की है। श्री शुक्ल का मानना है कि बच्चों को नैतिकता की शिक्षा मनोरंजन की चासनी में लपेट कर देना चाहिए।

'बाल सतसई 'परशुराम शुक्ल की सुप्रसिद्ध अनुपम बाल कृति है। यह कृति दोहा छंद शैली में वर्णित है। नैतिकता समाज और संस्कृति की सापेक्ष होती है। शाश्वत मूल्य तो विश्वव्यापी होते हैं, किन्तु नैतिकता की परिभाषा समय, समाज और संस्कृति के आधार पर की जाती है। भारतीय संस्कृति में नैतिकता एक जीवन मूल्य है, इसलिए इसका बहुत महत्व है। बच्चों में नैतिक मूल्यों का बीजारोपण बचपन से ही होना

चाहिए। 'बाल सतसई' बच्चों पर केंद्रित नीतिपरक दोहा संग्रह है। 'बच्चे और नैतिक शिक्षा' शीर्षक बाल रचना में नीतिपरक दोहों के माध्यम से कवि बच्चों में नैतिक मूल्य विकसित करते हुए लिखते हैं–

'नैतिक शिक्षा के समय, रखिये इसका ध्यान।
बच्चे भी अनुभव करें, मान और सम्मान।।
नैतिक शिक्षा दीजिए, उद्धरणों के साथ।
असर पड़ेगा बाल पर, कुछ आयेगा हाथ।।
नैतिक शिक्षा कटु बड़ी, नहीं सुनेंगे बाल।
सुगर कोट कर दीजिए, फिर देखिए कमाल।।
बच्चों में विकसित करें, सकारात्मक सोच।
खेल भावना भी करें, ज्यो क्रिकेट का कोच।।
बाल सभी नैतिक बनें, यह नैतिक दायित्व।
नैतिकता पूरा करें, बच्चों का दायित्व।।
भोजन पानी जिस तरह, लेते नियमित नित्य।
नैतिक शिक्षा के लिए, आवश्यक साहित्य।।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल1, बाल सतसई, पृ.72/73)

राष्ट्रभक्ति–राष्ट्रीयता और राष्ट्रभक्ति सर्वोपरि जीवन मूल्य हैं। अपने राष्ट्र के प्रति अटूट प्रेम की भावना एवं सदैव राष्ट्र कल्याण की भावना राष्ट्रभक्ति कहलाती है। मानव का पहला धर्म राष्ट्र धर्म है। राष्ट्र सेवा ही हमारी सच्ची पूजा है।

डॉ. परशुराम की अधिकांश बाल कृतियाँ राष्ट्रीय प्रेम की भावना से ओतप्रोत हैं। आपने अपनी बाल रचनाओं में राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रभक्ति के प्रेरक प्रसंगों का समावेश करते हुए अनेक बाल कविताओं का सृजन किया है। जैसे—'नव वर्ष गीत, हिंदी भारत भाषा है, भारत–भूमि, कामना, आजादी की रक्षा, तिरंगा' आदि। 'देश बनाएँ' बाल कविता में कवि बच्चों में ज्ञान प्रकाश आलोकित कर नया विश्वास जागृत कर मानव में आदर्श मूल्यों को आत्मसात कर आपसी भेदभाव भुलाकर एक नवीन विकसित भारत का निर्माण करने की बात कहते हैं–

'ज्ञानदीप की ज्योति जला कर, / एक नया विश्वास जगाएँ।
मानव में फिर मानवता भर, / मानव को आदर्श बनाएँ।।
हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई, / सब भाई–भाई बन जाएँ।
अपने–अपने भेद भुला कर, / आओ मिलकर देश बनाएँ।।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल1, चारों खाने चित्त, संस्कृतिसाहित्य, शाहदरा, पृ.34)

बंधुता व विश्वबंधुत्व–बंधुता का अर्थ है सभी भारतीयों सर्व सामान्य भाईचारे की, सभी भारतीयों के एकत्व की भावना। एक ही भारत माता के सपूत होने की सर्व साक्षी भावना। बंधुता का एक अंतरराष्ट्रीय भी पक्ष है 'वसुधैव कुटुंबकम्' अर्थात् समूचा विश्व एक परिवार है। विश्व बंधुत्व की यही संकल्पना हमें भारतीय आदर्श की ओर ले जाती है।

डॉ. शुक्ल ने बाल काव्य में बंधुता की भावना बच्चों में जागृत करने का सफल प्रयास किया है। बच्चों से बंधुत्व के भाव सीखिए, बच्चों में भेदभाव की भावना बिल्कुल नहीं होती, वे कोमल हृदय ईश्वर तुल्य होते हैं–

'बच्चे रहते हैं सदा, जाति धर्म से दूर। / इसलिए इनमें दिखे, एक खुदाई नूर।।
गीता और कुरान में, समय गँवाते व्यर्थ। / बच्चों में पढ़ लीजिए, मानवता का अर्थ।।
/ राम मोहम्मद से कहे, सुनो हमारी बात।/ हम तुम ईसा रहेंगे, सारे जीवन साथ।।'

(डॉ. परशुराम शुक्ल, बाल सतसई, पृ.110)

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि डॉ. परशुराम शुक्ल ने अपनी बाल काव्य कृतियों में बाल रचनाओं का सृजन बच्चों के मनोरंजन के साथ–साथ उसमें नैतिक मूल्यों की शिक्षा देने के लिए एवं उनके व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए किया है।

वर्तमान युग में हमारे देश में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में मानवीय मूल्य का ह्रास हो रहा है। मूल्यों का ह्रास होना यानी समाज द्वारा स्वीकृत आदर्श मानंदडों को अपने अंत:करण में न उतारना एवं उनके अनुसार आचरण न करना है। आज के संदर्भ में हम हमारे पुराने मूल्य छोड़ते जा रहे हैं एवं नए मूल्य निश्चित नहीं कर पा रहे हैं। अत: आज मूल्य परक शिक्षा अति आवश्यक है।

आज हम सड़क पर कोई दुर्घटना को देखकर पीड़ितों की मदद करने के स्थान पर मोबाइल से वीडियो बनाने लगते हैं, हमारी संवेदनाएँ मर जाती हैं। हमारे मानवीय मूल्य गलत कार्य करने की इजाजत नहीं देते, फिर भी हम गलत क्यों करने लगते हैं? कहीं न कहीं हमारे जीवन मूल्य घटते जा रहे हैं।

इन्हीं मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए डॉ. परशुराम शुक्ल ने बाल साहित्य की प्रत्येक विधा– कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास, एकांकी, धारावाहिक में मूल्यों को उद्घाटित किया है। श्री शुक्ल ने बच्चों के सर्वांगीण विकास हेतु जीवन मूल्यों की स्थापना की है। बाल साहित्य को पढ़कर बच्चों में सत्य अहिंसा, अस्तेय, प्रेम, आस्था और विश्वास, उदारता, नैतिकता, सदाचार, परोपकार, सहानुभूति, सौहार्द, करुणा, त्याग, वीरता, विनयशीलता, आत्मगौरव, नियबद्धता, संवेदनशीलता, कर्तव्यपरायणता, प्रकृति प्रेम, राष्ट्र प्रेम, आत्मविश्वास एवं विश्वबंधुत्व के भाव जागृत होंगे। मूल्य आधारित शिक्षा प्राप्त कर बच्चे देश के कुशल नागरिक बनकर परिवार, समाज व राष्ट्र निर्माण में अपना उत्कृष्ट योगदान दे सकेंगे।

डॉ. परशुराम शुक्ल का सम्रग बाल साहित्य बालोपयोगी है, जो बालकों में नैतिक एवं चारित्रिक गुणों का विकास करने में सहायक सिद्ध होगा। मेरा यह मत है कि श्री शुक्ल के जीवन–मूल्यों पर आधारित बाल साहित्य को सरकारी व गैर सरकारी पाठ्यक्रमों में शामिल किया जाना चाहिए।

राज-19, सनसिटी कॉलोनी,
एयरपोर्ट रोड, लालघाटी,
भोपाल-462030 (म.प्र.)
मो.-9179725547

स्वामी विवेकानंद का दार्शनिक चिंतन और राष्ट्रवाद

– राहुल कुमार भारती, रितेश कुमार

जन्म – 7 अक्टूबर 1997।
जन्मस्थान – शिवरीमठिया (बिहार)।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

भारतीय संस्कृति और राष्ट्र निर्माण में स्वामी विवेकानन्द का महत्त्वपूर्ण योगदान हैं, उन्होंने अपने दार्शनिक चिंतन के माध्यम के जन जागरूकता प्रदान की, ब्रिटिश औपनिवेशिक कालीन भारत में जब भारतीय आम जनमानस सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक, अनेक समस्याओं के कारण अन्दर से टूट चुका था और उसमें प्रतिरोध करने की भी सामर्थ्य नहीं बची थी, ऐसी विपरीत परिस्थितियों में स्वामी विवेकानन्द ने अपने विचारों के माध्यम से लोगों के मध्य क्रांतिकारी विचारों का सूत्रपात किया तथा आम जनमानस को आत्मासम्मान से जीना और भारतीय संस्कृति और विचारों पर गर्व करना सिखाया, उन्होंने पश्चिम की अंधी आँधी में भारतीयता का बोध कराया और भारतीय मौलिकता और दर्शन का पूरी दुनिया में प्रचार-प्रसार किया।

राष्ट्र निर्माण के कार्य में स्वामी विवेकानन्द का योगदान अद्वितीय है, विवेकानन्द यथार्थवादी विचारक थे और उन्होंने अपने जीवन का एक बड़ा भाग दार्शनिक अन्वेषण में लगाया और इसके द्वारा अर्जित ज्ञान-चिंतन और आध्यात्मिक अनुभूतियों का प्रचार-प्रसार किया। विवेकानन्द आधुनिक भारत के ऐसे संन्यासी, दार्शनिक विचारक और प्रचारक थे, जिन्होंने स्वयं तो राजनीति में कभी भाग नहीं लिया परंतु अपनी प्रखर प्रतिभा से देश में राष्ट्रप्रेम की ज्योति जगा दी। इसके साथ ही उन्होंने राष्ट्रीय गौरव के प्रति चेतना जाग्रत की तथा पश्चिम में भारतीय संस्कृति की धाक जमा दी।

विवेकानन्द तत्कालीन देश और समाज की विसंगतियों और विषमताओं से परिचित थे, उन्होंने भविष्य के भारत की संभावित खतरनाक अवधारणाओं को भी अपनी दूर दृष्टि से देख लिया था, इसीलिए विवेकानन्द ने राजनीति को धर्म और धर्म को राष्ट्र से जोड़ा। विवेकानन्द का विचार था की संकीर्णता व्यक्ति को समाज और देश के लिए स्वच्छ प्राणवायु प्रदान करने से रोकती है।

आधुनिक भारतीय राजनीति में स्वामी विवेकानन्द का अतुलनीय योगदान रहा है। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय समाज को धार्मिक आडम्बरों से मुक्त करने का प्रयास किए तथा भारत में राष्ट्रवादी, सामाजिक एवं धार्मिक चेतना को जाग्रत किया व भारतीय समाज की कुरीतियों और अज्ञानता पर प्रहार करते हुए आधुनिक समाज को पुनर्जागरण हेतु प्रोत्साहित किया। स्वामी विवेकानन्द के प्रेरक विचारों एवं सन्देशों का देशवासियों पर गहरा प्रभाव पड़ा। भारत की निराशोन्मुख व हतोत्साहित जनता में आशा, उत्साह एवं साहस के भावों का जन्म हुआ। स्वामी विवेकानन्द के नैतिक विचारों का ही यह परिणाम है कि आधुनिक भारत का निर्माण संभव हुआ है।

स्वामी विवेकानन्द प्राचीन तथा आधुनिक भारत के मध्य एक सेतु के समान हैं। स्वामी विवेकानन्द की विचारधारा ने एक नई क्रांति का सूत्रपात किया। उन्होंने भारत के आर्थिक उत्थान, श्रमिक वर्ग के उत्थान, दलित वर्ग का उत्थान तथा स्त्री शिक्षा जैसे गंभीर सामाजिक मुद्दों के लिए बहुत प्रयत्न किए। स्वामी विवेकानन्द आधुनिक सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन में स्वामी दयानन्द सरस्वती के पश्चात् ऐसे द्वितीय महान विचारक है, जिन्होंने सक्रिय प्रतिरोध का मार्ग भारतीयों के लिए प्रशस्त किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस प्रतिरोध को सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अधिक प्रचारित किया, वहीं स्वामी विवेकानन्द ने राजनीतिक क्षेत्र में अपने प्रेरणादायी उपदेशों के माध्यम से एक क्रांति का सूत्रपात किया।

राष्ट्र निर्माण के लिए विवेकानन्द का नज़रिया यूरोपीय राष्ट्रों की सामग्री से काफी अलग है, जिसमें सांस्कृतिक परंपरा के महिमामंडन पर लिखित संविधान की माँग और लोकप्रिय प्रतिनिधित्व के आधार पर एक आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था और राजनीतिक संस्थानों के प्रणयन में विश्वास जैसे विविध तत्व शामिल थे। इन सभी तत्वों का भारतीय राष्ट्र में एक स्थान था, लेकिन विवेकानन्द ने उनमें एकता का एक आवेग जोड़ा जो भारतीय परंपरा में गहराई से निहित था और जिसका

आधार धर्म था। **(विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स, वाल्यूम-4, अद्वैत आश्रम कलकत्ता, 1966, पृ.-04)**

अब, जहाँ तक राष्ट्रनिर्माण व पुनर्निर्माण के प्रति भारत के दृष्टिकोण का संबंध है, राष्ट्रीयता एक व्यक्तिपरक मनोवैज्ञानिक भावना है। वी. डी. सावरकर का विचार है कि–'एक जैविक राष्ट्र के गठन के लिए आवश्यक शर्त लोगों की एक सजातीय राष्ट्रीय इकाई बनने की इच्छा है, उनमें मतभेद हो सकते हैं, लेकिन वे अन्य लोगों से राष्ट्रीय इकाई की तुलना में अधिक भिन्न होते हैं।' **(सावरकर, वी. डी., समग्र सावरकर वाङ्मय, वाल्यूम-6, हिन्दू राष्ट्र दर्शन, प्रमिलिक हिन्दू सभा, पूना, महाराष्ट्र, 1954, पृ.-317-20)**

1908 में प्रकाशित एक व्याख्यान में, श्री अरबिंदो का तर्क है कि–'राष्ट्रीयता एक ऐसा धर्म है जिसके द्वारा हम राष्ट्र में, अपने सभी देशवासियों में ईश्वर की उपस्थिति को पहचानने की कोशिश कर रहे हैं। हम अपने हितों के लिए जीने की कोशिश नहीं कर रहे हैं, बल्कि काम करने और दूसरों के लिए मरने की कोशिश कर रहे हैं।' **(घोष, श्री अरबिंदो, अरबिंदो घोष स्पीच-3, पांडिचेरी, 1952, पृ.-06)**

विवेकानन्द ने हिन्दू धर्म का जीर्ण शीर्ण किया। इस कारण वे पूर्व व पश्चिम के देशों में एक समान श्रद्धा एवं सम्मान की दृष्टि से देखे जाते हैं। **(तत्वविदानंद, स्वामी, विवेकानन्द एक जीवनी, अद्वैत आश्रम मायावती, चंपावत, उत्तराखंड, 2006, पृ.-11)** स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारतीय दार्शनिकों में प्रमख स्थान रखते हैं। इन्होंने वेदान्त दर्शन को व्यावहारिक बनाने के साथ ही उसे सामान्य मनुष्य तक पहुँचाने का प्रयास किया। इस दर्शन को पश्चिमी जगत के समक्ष रखने का प्रयास किया। वैदिक दर्शन के प्रति मिथ्या आरोपों को निर्मूल सिद्ध करने के लिए विवेकानन्द ने तार्किक विधि का भी उपयोग किया। 'उनका यह दृढ़ विश्वास था, कि वेदान्त दर्शन बुद्धि विकास का विषय नहीं है, वह एक सम्पूर्ण जीवन दर्शन है। यह दर्शन एक देश एवं काल के लिए नहीं है, इसके आधार पर एक सार्वभौमिक जीवन पद्धति का निर्माण किया जा सकता हैं, वेदांत सबसे उदात्त है और सभी दर्शनों की, और सभी धर्मों की सांत्वना है'। **(अभेदानन्द, स्वामी, एटीट्यूड ऑफ वेदांत टूवार्ड्स रिलिजन, रामकृष्ण वेदांत मठ, कलकत्ता, पृ.-13)**

विवेकानन्द के लिए ब्रह्मांड एक वास्तविक अभिव्यक्ति है। स्वामी विवेकानन्द का मानना है कि–'हम सोच भी नहीं सकते कि पदार्थ गुणों से अलग है; हम बदलाव के बारे में नहीं सोच सकते और न ही एक ही समय में परिवर्तन के बारे में। यह अपरिवर्तनशील है जो परिवर्तनशील के रूप में दिखाई दे रहा है। यहाँ यह देखा जाएगा कि न तो काल है, न स्थान है और न ही कार्य–कारण है। निरपेक्ष में और यह उन सबसे परे है। उनके पास कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है, फिर भी वे अस्तित्वहीन नहीं हैं, क्योंकि उन्हीं के द्वारा सब कुछ है। चीजें इस ब्रह्मांड के रूप में प्रकट हो रही हैं। इसके अलावा, वे कभी–कभी गायब हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, समुद्र पर एक लहर लें। लहर वैसी ही है जैसा सागर, और फिर भी हम जानते हैं कि यह एक लहर है, और इस तरह सागर से अलग है। जो इसे समुद्र से अलग करता है, वह इसका नाम और रूप है। यदि लहर थम जाती है, रूप एक क्षण में मिट जाता है, और फिर भी रूप भ्रम नहीं था। जब तक लहर का अस्तित्व था तब तक रूप था, और आप प्रारूप देखने के लिए बाध्य थे, यह माया है'। **(विवेकानन्द, स्वामी, ज्ञान योग, श्री रामकृष्ण मिशन, नागपुर, मध्य प्रदेश, पृ.-140-41)**

उनके विचार में धर्म वह विचार है जो पशु को मनुष्य की ओर बढ़ा रहा है, और मनुष्य को परमेश्वर की ओर। मनुष्य एक अनंत वृत्त है, जिसकी परिधि कहीं नहीं है, लेकिन केंद्र एकस्थान पर स्थित है, और ईश्वर अनंत वृत्त है जिसकी परिधि कहीं नहीं है, लेकिन जिसका केंद्र हर जगह है। **(विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स, वाल्यूम-2, अद्वैत आश्रम कलकत्ता, 1989, पृ.-33)**

विवेकानन्द भारतीय राजनीति में एक चिंतक के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने कोई राजनीतिक सिद्धांत नहीं दिया और न ही राज्य की उत्पत्ति के बारे में अपने विचार रखे लेकिन उन्होंने जितना बताया है वह एक राष्ट्र की राजनीतिक दशा सुधारने के लिए काफी है। उनके विचार प्राचीन भारतीय शास्त्रों से लिए गए हैं। अनेक पुस्तकें विवेकानन्द पर लिखी गईं, बहुत सारे शोध उन पर हुए, जिससे यह प्रतीत होता है कि वे चिंतक व युवाओं की प्रेरणा हैं। स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मनुष्य चिंतनशील होता है और वही चिंतन आगे दर्शन का रूप ले लेता है। 'अपनी प्रत्येक क्रिया का केन्द्र इस धर्म को ही बनाना होगा यदि तुम धर्म को फेंककर राजनीति, समाजनीति अथवा अन्य किसी दूसरी नीति को अपनी जीवन–शक्ति का केन्द्र बनाने में सफल हो जाओ, तो उसका फल यह होगा कि तुम्हारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। तुम्हारे स्नायुओं का प्रत्येक स्पन्दन तुम्हारे इस धर्मरूपी मेरुदण्ड के भीतर से होकर गुजरे, यदि तुम इससे बचना चाहते हो तो तुम्हें अपने जीवन–शक्ति रूपी सारे कार्य धर्म के भीतर ही करने होंगे'।

स्वामी विवेकानन्द की इस देश को जो एक महान् देन है, वह है राजनीतिक क्षेत्र में स्वतंत्रता की अवधारणा, जो किसी वर्ग, जाति या धर्म विशेष की बपौती नहीं। जहाँ जीवन है वहाँ स्वतंत्रता आवश्यक

है। व्यक्ति और समाज के आत्मिक और राजनीतिक जीवन के विकास में स्वतंत्रता अति आवश्यक वस्तु है। स्वामी जी का कथन था कि 'हमें ऐसे बंधनों को खत्म कर देना चाहिए जो हमारी स्वतंत्रता के मार्ग को अवरुद्ध करते हों। तथा हमें स्वतंत्रता में सहयोगी संस्थाओं का सहयोग करना चाहिए'। **(विवेकानन्द, स्वामी, शिक्षा, संस्कृति और समाज, श्री रामकृष्ण मिशन, नागपुर, मध्य प्रदेश, 1962, पृ.-95)**

एक बार किसी के पूछे जाने पर की कौनसा धर्म सबसे अच्छा है तो स्वामी जी ने कहा-'गुलाम के लिए कोई धर्म अच्छा नहीं है, जाओ पहले स्वतंत्र हो जाओ फिर किसी धर्म के बारे में बात करना'। **(साहित्य, विवेकानन्द, तृतीय खंड, अद्वैत आश्रम, मायावती, पिथौरागढ़, हिमालय, 1963, पृ.-105)**

इतनी कठोरता से उत्तर देने के भाव से ही उनकी ललक स्वतंत्रता के प्रति हमें देखने को मिलती है। 'विकास की पहली शर्त है स्वाधीनता, जिसे तुम बन्धन मुक्त नहीं करोगे, वह कभी आगे नहीं बढ़ सकता। अपने लिए शिक्षक की स्वाधीनता रखते हुए यदि कोई सोचे की वह दूसरों को उन्नत कर सकता है, तो यह अर्थहीन विचार है, एक भयानक मिथ्या बात है, जिसने संसार के लाखों मनुष्यों के विकास में बाधा डाली हैं, तोड़ डालो मानव के बंधन, उन्हें स्वाधीनता के प्रकाश में आने दो, बस यही विकास की एक मात्र शर्त है'। **(साहित्य, विवेकानन्द, द्वितीय खंड, अद्वैत आश्रम, मायावती, पिथौरागढ़, हिमालय, 1962, पृ.-186)**

विवेकानन्द अनावश्यक सामाजिक ताने-बाने के खिलाफ थे। उन्होंने उन लोगों का पक्ष नहीं लिया जो मानते हैं, 'यदि अज्ञानी और गरीबों को स्वतंत्रता दी जाती है, उनके शरीर, धन आदि पर पूर्ण अधिकार दिया जाता है और यदि उनके बच्चों को अपनी स्थिति को बेहतर बनाने का समान अवसर मिलता है तो वे जैसा कि कहा जाता, अमीर और उच्च पद पर आसीन होने पर वे विकृत हो जाते हैं'। **(विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स, वाल्यूम-5, अद्वैत आश्रम कलकत्ता, पृ.-152)**

यहाँ उन्होंने उनके दृष्टिकोण पर सवाल उठाते हुए पूछा-क्या वे समाज की भलाई के लिए ऐसा कहते हैं, या अपने स्वार्थ से अंधे हैं? **(वही, पृ.-205)**

विवेकानन्द मानते हैं कि ईश्वर-पुरुष, एक अंतिम उत्पाद नहीं है, बल्कि यह जीवन और पदार्थ की सबसे प्रारंभिक घटना हो सकती है, यहाँ तक कि जीवन और पदार्थ के निम्नतम रूप में भी। जीवन का उच्चतम रूप, उसके निम्नतम रूप में निहित होता है। जो इसमें शामिल था वह विकसित हो गया। विवेकानन्द ने कहा-'यदि हम पशुओं से विकसित हुए हैं तो पशु भी पतित मनुष्य हो सकते हैं। आप कैसे जानते हैं कि ऐसा नहीं है? आपने देखा है कि विकासवाद का प्रमाण बस इतना है, आप धीरे-धीरे बढ़ते हुए पैमाने में सबसे नीचे से लेकर सबसे ऊँचे तक शरीरों की एक शृंखला पाते हैं। लेकिन इससे आप कैसे आग्रह कर सकते हैं कि यह हमेशा नीचे से ऊपर की ओर होता है और कभी ऊपर से नीचे की ओर नहीं? मेरा मानना है कि शृंखला ऊपर और नीचे जाने में खुद को दोहरा रही है'। **(विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स, वाल्यूम-2, अद्वैत आश्रम कलकत्ता, 1989, पृ.-173-74)**

मनुष्य में पहले से ही मौजूद विद्या को विवेकानन्द ने वास्तविक ज्ञान कहा है। शिक्षा समाज को बेहतर जीवन स्तर प्रदान करती है। देश का सामाजिक जीवन सुधरेगा तो यह जीवन के लिए वरदान होगा। इसलिए भारतीय समाज की शुरुआत से ही अपनी मौलिक विशेषताएँ हैं, जिन्हें किसी भी कीमत पर बनाए रखा जाना चाहिए। हमें पश्चिम का अंधा नकल करने वाला नहीं होना चाहिए। हमारा अपना व्यक्तित्व और विशिष्टता हमें हर मोर्चे पर अग्रणी बनने में मदद करेगी। यहाँ स्वामी जी उस विद्या की बात करते हैं जिसका आधार धर्म हो, लौकिक और अलौकिक शिक्षा केवल धर्म पर आधारित होनी चाहिए और जिसमे भारतीय संस्कृति के तत्व समाहित हो।

शिक्षा का अभाव व समाज की कुछ कुप्रथाओं के कारण बाल विवाह की समस्या समाज को दीमक की तरह खा रही है, जिसपर बहुत सारे समाज सुधारकों ने अपने-अपने विचार रखे, उन्हीं में से एक स्वामी विवेकानन्द ने बाल विवाह की कटु भर्त्सना की और कहा कि-'बाल विवाह से असामयिक सन्तानोत्पत्ति होती है और अल्पायु में सन्तान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियाँ अल्पायु होती हैं, उनकी दुर्बल और रोगी सन्तानें देश में भिखारियों की संख्या बढ़ाने का कारण बनती हैं'। **(साहित्य, विवेकानन्द, खंड-8, अद्वैत आश्रम, मायावती, पिथौरागढ़, हिमालय, 1963, पृ.-167)**

नर सेवा, नारायण सेवा का विचार देते हुए स्वामी जी ने प्रत्येक मनुष्य से सेवा कार्य में जुट जाने का आह्वान किया। स्वामी जी ने कहा कि बिना दलितों के उद्धार के भारत का विकास सम्भव नहीं है। अपना सारा जीवन इन दलितों के उद्धार में लगा दो। इस प्रकार की सेवा वही व्यक्ति कर सकता है जो सब की अपेक्षा उत्तम रूप से कार्य

करता है। बिना लोभ के मनुष्य जब ऐसा करने में समर्थ हो जाएगा, तो वह भी एक बुद्ध बन जाएगा, और उसके भीतर से ऐसी शक्ति प्रकट होगी, जो संसार की अवस्था को सम्पूर्ण रूप से परिवर्तित कर सकती है। आडम्बरों को देखकर स्वामी जी ने कहा है कि–'जातियों को ऊँचा–नीचा करने, यथेच्छा आहार–विहार करने और क्षणिक सुख भोग से यह जातिभेद की समस्या हल नहीं होगी। इसकी मीमांसा तभी होगी, जब हममें से प्रत्येक मनुष्य वेदान्त धर्म का पालन करने लगेगा, जब हर कोई सत्याधार्मिक होने की चेष्टा करेगा, और प्रत्येक व्यक्ति प्रतिमान बन जाएगा। तुम आर्य हो या अनार्य, ऋषि सन्तान हो, ब्राह्मण हो या अत्यन्त नीच, सब तुम्हारे भाई हैं। आपसी भाई–चारे और आत्मीयता से ही सब का उत्थान संभव है। वेदान्त का यह दर्शन केवल भारतवर्ष के लिए ही नहीं, वरन् सारे संसार के लिए उपयुक्त है।' **(वही, पृ.–168)**

वेदांत दर्शन में से एक, भगवत गीता में बहुत स्पष्ट रूप से कहा गया है कि– 'वह कभी पैदा नहीं होता है, न ही वह कभी मरता है, और न ही (एक बार) आता है। क्या वह फिर से होना बंद कर देगा। वह अजन्मा, नित्य और आदि है। जब शरीर मारा जाता है तो वह नहीं मारा जाता'। **(सर्वपल्ली, डॉ. राधाकृष्णन, भगवद गीता, जार्ज एलन एवं उन्विन लिमिटेड, रस्किन हॉउस म्यूजियम स्ट्रीट, लन्दन, 1963, पृ.–107)**

इस तरह की वेदान्तिक पृष्ठभूमि ने विवेकानन्द के निष्कर्ष को आकार दिया है। विवेकानन्द मनुष्यों की छिपी या संभावित दिव्यता को मानते हैं। न्यूयॉर्क में दिए गए एक व्याख्यान, जिसका विषय था–'द रियल एंड द अपरेंट मैन' में उन्होंने बताया कि 'मनुष्य वेदांत दर्शन के अनुसार सबसे अच्छा प्राणी है। वह ब्रह्मांड में है और यह दुनिया इसमें सबसे अच्छी जगह है, क्योंकि केवल यहीं उसके लिए पूर्ण बनने का सबसे बड़ा और सबसे अच्छा मौका है। विवेकानन्द के अनुसार मानव शरीर संसार का सबसे बड़ा शरीर है, एक इंसान सबसे बड़ा प्राणी है। सभी जानवरों, प्राणियों, सभी स्वर्गदूतों में मानव शरीर सबसे ऊपर है। कोई भी मनुष्य से बड़ा नहीं है। 'पूर्णता' मानव जीवन का लक्ष्य है। पूर्णता पाने का एकमात्र रास्ता है इच्छा शक्ति का होना, इच्छा शक्ति के माध्यम से मनुष्य भगवान की बराबरी भी कर सकता है–'इच्छाशक्ति संसार में सब से अधिक बलवती है। उसके सामने दुनिया की कोई चीज नहीं ठहर सकती, क्योंकि वह भगवान् –साक्षात् भगवान् से आती है। विशुद्ध और दृढ़ इच्छाशक्ति सर्वशक्तिमान् है'। **(साहित्य, विवेकानन्द, खंड-5, अद्वैत आश्रम, मायावती, पिथौरागढ़, हिमालय, 1973, पृ.–102)**

इस प्रकार निष्कर्षत कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानंद ने अपने आप में एक महान संत और राष्ट्र निर्माता की भूमिका निभाई, उन्होंने भारतीय राष्ट्र को अतीत के गौरव के उच्च पद पर स्थापित किया, उन्होंने भारत के लाखों लोगों को बिना किसी भेद–भाव के गले लगाया। उन्होंने अपना जीवन राष्ट्रीय चेतना की जागृति के लिए समर्पित कर दिया। स्वामी विवेकानन्द का संपूर्ण दृष्टिकोण एक नई दुनिया के निर्माण के लिए अधिक समर्पित था, इसकी सबसे जटिल समस्याओं को दूर करने के लिए एक व्यावहारिक समाधान प्रदान करने के लिए था। वह अंतत: गरीबी, पिछड़ेपन के विशाल पैमाने के प्रति सचेत थे। इसलिए इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए व्यापक प्रयास किए। उन्होंने एक बार कहा था 'यह एक भूखे आदमी का अपमान है कि उसे तत्वमीमांसा सिखाई जाए'। 'हमें एक ऐसे धर्म की आवश्यकता है जो हमें अपने आप में विश्वास, एक राष्ट्रीय स्वाभिमान, और गरीबों को खिलाने और शिक्षित करने और चारों ओर के दुखों को दूर करने की शक्ति प्रदान करे।' राष्ट्र को उसका खोया व्यक्तित्व वापस देना है और जनता को ऊपर उठाना है'।

उन्होंने बार–बार इस बात पर जोर दिया कि जनता ही राष्ट्रीय जीवन का वास्तविक आधार है। विवेकानन्द ने समाज की जैविक सादृश्यता को स्वीकार किया लेकिन समाज की उनकी अवधारणा केवल एक दूसरे के संबंध में कार्य करने वाले एक दूसरे अंग तक ही सीमित नहीं थी। वास्तव में सामाजिक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए समाज की ऐसी जैविक अवधारणा को पश्चिम में अपनाया गया ताकि व्यक्तियों को राज्यों के प्रति सामाजिक रूप से जिम्मेदार होने का आदेश दिया जा सके। विवेकानन्द ने इस तरह के विचार के खोखलेपन को उजागर किया और पारंपरिक भारतीय विचार की लड़ाई में एक नई व्याख्या सामने रखी जो आज भी सर्वाधिक प्रासंगिक हैं।

राहुल कुमार भारती, शोध छात्र,
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
लखनऊ–226001 (उ.प्र.)
मो.–9128288235

रितेश कुमार, शोध छात्र,
ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज–271871 (उ.प्र.)
मो.–9918705461

कथाकार विजय जोशी की कहानियाँ

- हेमलता राठौड़, वीणा छंगाणी

जन्म - 1 मई 1975।
जन्मस्थान - अहमदाबाद (गुज.)
शिक्षा - एम.ए., एम.एड., पीएच.डी.।

राजस्थानी में हाड़ौती अंचल के कथाकारों में कथाकार विजय जोशी का विशेष स्थान है। इनकी कहानियों में सामाजिक सरोकार देखा जा सकता है। उन्होंने अपने आसपास के सामाजिक परिवेश में घटित होने वाले प्रसंगों को ही कहानी का स्वरूप प्रदान करते हुए, सामाजिक समस्याओं को कहानियों के माध्यम से उठाया है तथा उनके समाधान की ओर संकेत भी किया है।

प्रो. प्रेमचंद विजयवर्गीय के शब्दों में-'कथाकार विजय जोशी भारतीय संस्कृति के पक्षधर है, इसी कारण इनकी कथाओं में संस्कृति के बंदरवार सजे हुए मिलते हैं। वे अपने चारों ओर की घटनाओं, लोगों के दु:ख-दर्दों, समाज की विषमताओं, विद्रूपताओं और विडम्बनाओं के प्रति सजग, सचेत और संवेदनशील रहते हैं, इसी कारण इनकी कहानियों में व्यक्ति व समाज और राष्ट्र का वास्तविक चित्रांकन रहता है।'

मन्दर में एक दन (कहानी संग्रह)-कथाकार विजय जोशी का कथा संग्रह 'मन्दर में एक दन' नामक शीर्षक में ग्यारह कहानियों का संकलन किया गया है। जिसमें धार्मिक विडम्बना को व्यक्त किया गया है। भगवान गणेश जी के मन्दिर के बाहर जूते-चप्पल की रखवाली करने वाले बालक प्रसाद प्राप्त करने को लालयित रहते हैं उन बालकों का बड़ा हृदयस्पर्शी चित्र प्रस्तुत किया है। जूतों की रखवाली करने वाला गूँगा, सूर्य की धूप को पेट की आग से कम समझने वाला एक बालक प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया है।

पाकी ईंट - समाज में गरीब, लाचार लोगों की उपेक्षा ही नहीं होती बल्कि उनका शोषण भी हर तरह से किया जाता है। मजदूरी करने वाली लड़कियों का, 'किसन' जैसे ईंट भट्टे के ठेकेदार किस प्रकार छल-कपट करके देह-शोषण कर लेते हैं। इसका उजागर करती कहानी 'पाकी ईंट' है।

रामफुल्या- कभी-कभी दूसरे के घर की दु:खद, शर्मनाक घटना या कहानी को सुनने वाले पात्र के चरित्र में भी परिवर्तन ला देते हैं। इसी सत्य को प्रस्तुत करने वाली कहानी 'रामफुल्या' है। जिसमें अपने उस छात्र से यह जानकर कि उसके पिता ने शराब के नशे में उसकी माँ को जलती हुई लकड़ी से मारा और उसके हाथ पर जलती लकड़ी फेंकी। जिसमें छात्र की माँ का हाथ झुलस गया, अध्यापक 'गोपाल' को स्वयं शराब पीकर अपनी पत्नी को मारने की बात स्मरण हो आती और गोपाल शराब पीना छोड़ देता है जिससे उसके बच्चों को कोई 'दारूबाज का छोरा' नहीं कह सकें। मास्टर गोपाल को अपने द्वारा पढ़ाए पाठ 'चींटी और कुत्ता' से यह विचार भी आता है कि यदि मेरा हाल कुत्तों जैसा है और मेरे बच्चे भी वही करेंगे, शराब पिएँगे।

गोबर का कीड़ा - अमीर गरीब का भेद कमाने वाले, बड़ी उमर वाले लोगों में होता है, साथ पढ़ने वाले बच्चों में नहीं। इसी सत्य को कहानीकार ने 'गोबर का कीड़ा' नामक कहानी में दर्शाया है। बच्चे जाति-पाँति, वर्ग-भेद को भुला कर एक-दूसरे की सहायता करते हैं। यहाँ तक कि एक-दूसरे के प्राण की रक्षा भी करते हैं। जैसे कि बैंकट ने दीपक की, की थी। छोटे माने जाने वालों के दिल, बड़े कहलाने वाले लोगों के दिल से बड़े होते हैं।

सावण को आंधों- अमीरी के दुष्प्रभाव और दुष्परिणाम को दिखाने वाली कहानी है-'सावण को आंधों।' जिसमें साहूकार, जानकीलाल

का बेटा 'लोकेश' सम्पत्ति और कुसंगति के कारण क्रमश: सिगरेट, चिलम और स्मेक का आदि हो जाता है और रसोई गैस में हुई दुर्घटना में मारा जाता है। यह कहानी और भी दुखान्त हो जाती है जब मृतक को स्मैक की आदत डालने वाला उसका एक कुमित्र 'भैरन' दूसरे ग्राहक बनाने के लिए कहता है।

गाय चोर- संसार में सेवा करने वालों की आलोचना भी होती है, यदि कोई लावारिस, प्रसूता गाय को या अन्य लावारिस गायों को अपने बाड़े में लाकर रख ले। और उनकी सेवा करने लगे तो उसे गाय चोर कहने लगते हैं। 'गाय-चोर' कहानी में 'रामचन्दर' के साथ भी ऐसा ही हुआ, पर गायें उसे चोर नहीं अपना उपकारी मानती हैं। तभी तो रामचन्द्र के मरने पर उसके द्वारा पाली गई गायें रँभा-रँभा कर आँसू बहाती रहीं और उनमें से एक गाय के बछड़े से बना हुआ बैल तो अर्थी के आगे-आगे जबरन चलता रहा। जैसे एक धरम बेटा अपना धर्म पूरा कर रहा हो।

नीरी - नीरी भी एक 'चरित्र प्रधान' कहानी है। जिसमें एक और चरित्र है नीरी, के दोनों भाईयों और भाभियों का जिन्होंने अपनी माँ और अपनी सास को घर से निकाल दिया था, दूसरा चरित्र है नीरी का जिसने विवाह न कर अपनी माँ की सेवा की। नीरी के आत्मकथात्मक आलेख के रूप प्रस्तुत यह कहानी चरित्र और उनके प्रभाव के दो विपरीत ध्रुवों का उद्घाटित करती हुई 'नीरी' का चरित्र जीवन मूल्य की स्थापना करता है।

लखणा की बेटी- इस कहानी में विजय जोशी ने पढ़ाई-लिखाई के महत्व और उसकी आवश्यकता की पहल हो अभिव्यंजित करने का प्रयास किया है। 'लखणा' लड़कियों की शिक्षा का ही नहीं स्वयं की प्रौढ़ शिक्षा का भी विरोधी होता है। इसके विपरीत 'गोपाल्या' न केवल स्वयं पढ़-लिखकर नौकरी करने लगता है वरन् गाँव में रात्रि पाठशाला, विधवा बनी गोमती, संकटग्रस्त होकर अपने गाँव की रात्रि पाठशाला में पढ़ने लगती है और साथ ही सिलाई काम भी सीख लेती है दूसरी और लखणा की बेटी लक्ष्मी को अशिक्षित होने के कारण, दहेज के लालची, ससुराल वाले उसे निकाल देते हैं। लखणा का भाई लक्ष्मी को रात्रि पाठशाला में भर्ती करा देता है। शिक्षा प्राप्त करके लक्ष्मी गाँव में ही बच्चों के लिए एक शिक्षा केन्द्र खोल देती है। जहाँ बच्चे, विधवा महिलाएँ व ससुराल से निष्कासित महिलाओं आदि को शिक्षा प्रदान करके स्वावलंबी बनाने का प्रयास किया जाता है। इस कहानी में कथाकार विजय जोशी ने शिक्षा के महत्व पर बल दिया है।

भूली - अल्प शिक्षित नारी की अपमानजनक स्थिति को बताने वाली कथा 'भूली' है। भूली कहानी की पात्र भूली, जिस पर हैण्डपम्प से पानी भरकर लाने में देर होने का कारण, वहाँ पर पानी भरने वाली महिलाओं की भीड़ होना और यह बताए जाने पर भी, उसकी सास आरोप लगाती और झिड़कती है। बाद में सास के बार-बार भड़काने पर उसका पति भी उस पर संदेह करने लगता है और उसे डाँटता है। एक दिन तो शराब के नशे में उसका पति 'रामू' उसकी चोटी पकड़कर घसीटता है और प्रताड़ित करता है। उसके गर्भवती होने पर सास ने उस पर, पर-पुरुष से संसर्ग का लांछन लगा देती है, जिससे भूली वह घर छोड़कर चले जाने का मन में दृढ़ संकल्प कर लेती है।
एक वोर सीता - 'फ्लैशबैक' तकनीक में लिखी गई कहानी - 'एक वोर सीता' से तात्पर्य 'एक और सीता' है। यह ऐसी दु:खी नारी अनीता की कहानी है जो गौने के समय आठवीं तक पढ़ी होने के कारण डॉक्टरी की पढ़ाई करने जाने वाले पति को फूटी आँख नहीं सुहाती थी और उसे सास और ननद भी कोसती रहती थी। उसके पिता के बीमार हो जाने, यहाँ तक कि उनकी मृत्यु हो जाने के बाद भी, उसे पितागृह नहीं जाने दिया जाता। उसे जापे से उठे और पिताजी को मरे एक महीना भी नहीं हुआ था कि उसे खेत पर काम करने भेज दिया जाता है। जिससे अनीता की हालत और बिगड़ जाने पर भी उसे डॉक्टर को नहीं दिखाया जाता। एक दिन ननद ने उस पर चोरी का इल्जाम लगा दिया, जिससे उसके पति ने उसकी बहुत पिटाई की। जिससे अनिता का हाथ टूट गया। पड़ोस के किसन भाई और लक्ष्मी भाभी उससे मिलने चली गईं तो, उस पर संदेह कर उसे घर से निकाल दिया। किसन भाई का तबादला जयपुर होने पर वह उनके साथ जयपुर रहने लगी और एल.एल.बी. की पढ़ाई कर लेती है। अनीता अपना केस स्वयं लड़ने का संकल्प कर लेती है, वह यह दिखा देगी कि नारी कोई खिलौना नहीं है। वह सीता की तरह पति के घर से निष्कासित तो हुई पर उनकी तरह चुपचाप सहन नहीं करेगी। अनीता के निष्कासन पर विजय जोशी का हृदय वाल्मीकि के समान दु:खी तो हुआ होगा पर उन्होंने अनीता को अपने अधिकार के

लिए लड़ने वाली, आधुनिक सीता बना कर आज की नारी को वैसा करने की प्रेरणा दी है।

हूंकारयो- संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना से परे ऐसे भी मुसलमान इस देश में हैं जो आवश्यकता पड़ने पर हिन्दू को अपना खून प्रसन्नतापूर्वक नि:शुल्क दे देते हैं। 'हूंकारयो' कहानी का सलीम ऐसा ही एक मुसलमान है जो प्रसव का समय देख हूंकारयो की पत्नी माँगी को अपना एक बोतल खून दे देता है। जबकि सलमी दाई का, काम करने वाली जुबेदा चाची का दूर के रिश्ते का भांजा था। इधर माँगी भी पुत्र के जन्म पर अपने उस नवजात की बधाई देने वाली चाची को उसका ही बेटा बताती है। चाची ने भी पूरी रात जागते हुए माँगी की देखभाल की थी। जागीरी ठिकाने से बातपोशी की बातों पर हूंकार देकर घर लौटने पर देवा ने कृतज्ञता में चाची की बाथ भर कर गले लगा लिया और सुबक कर रोने लगा। इस पर चाची भी देबु की पीठ पर हाथ फेर कर सुबकने लगी। देबु सलमी से गले मिला और समय पर माँगी को सँभालने के लिए उसे धन्यवाद दिया। इस पर सलीम कहता है कि 'भाई जान यह तो मेरा फर्ज था।' यह सेवा और प्रेम कृतज्ञता का दो सम्प्रदायों का प्रेमपूर्ण मिलन था। माँगी ने यह निश्चय किया कि वह अपने इस पुत्र को हूंकारया नहीं बनने देगी, उसे पढ़ाएगी ताकि वह स्वतंत्रता, सुविधा और सम्मान का जीवन जी सके। यह बदलते समय की माँग भी है। इस प्रकार इस कहानी में 'साम्प्रदायिक एकता' और समय के अनुसार 'स्वयं को बदलने' का संदेश देने का प्रयास किया गया है।

कथाकार विजय जोशी की हाड़ौती भाषा का कहानी संग्रह 'मंदर में एक दन' की ग्यारह कहानियाँ सामाजिक व धार्मिक विडम्बना को प्रस्तुत करते हुए सामाजिक मूल्यों की स्थापना करने में सफल सिद्ध होती है। उन्होंने कहानियों के पात्रों का 'चरित्र चित्रण' करते हुए उनकी संवेदनाओं का मार्मिक चित्रण किया है। समाज में समरसता, आदर्शवादिता तथा सरसता का संदेश प्रस्तुत किया है। इनका कहानी संग्रह 'मन्दर में एक दन' हाड़ौती भाषा के कहानी साहित्य में एक मील का पत्थर सिद्ध होगा।

आसार (2004)

विजय जोशी जी के दूसरे राजस्थानी कथा संग्रह 'आसार' में दस कहानियाँ संग्रहित हैं। जिनमें अनेक कहानियों का परिवेश 'पारिवारिक' है और कुछ का ही 'ग्रामीण'। विजय जी ने पारिवारिक परिवेश से उन्हीं कथा वस्तुओं को कहानी का विषय बनाया है जिनका किसी न किसी रूप से सामाजिक सरोकार है, या फिर वो जीवन मूल्यों से सम्बन्धित है।

बैरूप्यो - इस संग्रह की प्रथम कहानी-'बैरूप्यो' एक श्रेष्ठ कहानी है। बैरूप्यो में नायक संवेदना के साथ बड़ा भावुक जीवन जीता है क्योंकि उसका मन सरल बालक सा है। उसके माता-पिता शैशव में गुजर गए, मामा के यहाँ पला, फिर वहाँ से भी निकाल दिया गया, जब होश सँभाला तो वे दूसरों के बालक-बालिकाओं के बीच में था और वहाँ उनके सुख-दुख का साथी भी बना।

जात्रा -'जात्रा' कहानी समाज और प्रशासन व्यवस्था की विडम्बना को प्रकट करती है। गाँव के जागीरदार का सुपुत्र एक युवक को केवल इसलिए पीटता है क्योंकि उसने उन्हें खेत की झोपड़ी में एक लड़की के साथ व्यभिचार करते देख लिया था। उसकी बहन पुलिस में गई तो भाई को छोड़ दिया गया और बहिन को पकड़ लिया गया। बहिन भागने लगी तो जागीरदार के बेटे ने उसे पकड़कर कुकर्म कर डाला। वह पिट-हार कर, लुट-लुटा कर घर पहुँची, पर इस व्यवस्था की कमी में वह कुछ न कर पाई। वह पागल-सी हो गई।

आसार-'आसार' कहानी वर्तमान पीढ़ी के पुत्रों की अपने माता-पिता के प्रति संवेदनशून्यता और व्यवहार को रेखांकित करती है। पुत्र स्वार्थ प्रेरित भाव से माता-पिता की उपेक्षा करते हैं। कहानी के पात्र सौभाग जी और दीनदयाल जी स्वयं इस उपेक्षा भाव से प्रताड़ित हैं। दीनदयाल के दो बेटे इस शहर में हैं, फिर भी कोई उनकी ओर झाँकता तक नहीं। मानो आसार के ये बादल बरसेंगे। सभी अपना-अपना दायित्व पूर्ण करेंगे। इस प्रकार 'आसार' विभिन्न दृष्टियों सक एक सार्थक कथा चिन्तन बन गया है।

भोजाइजी-'भोजाइजी' में सास बहू के चिरन्तन संघर्ष की कहानी है। जिसमें ननद सुनीता सदैव भाभी का पक्ष लेती है, माँ-पुत्री को पीट देती है और बेटा इस खींचतान से क्षुब्ध रहता है। सास ताने देने

में प्रवीण और लांछन लगाने में पटु है परन्तु बहु रुक्मिणि का रक्तदान ननद को नया जीवन देता है और सासू के हृदय में परिवर्तन के भाव उत्पन्न कर देता है। वह बहू से बेटी की जान बचाने का कृतज्ञ भाव प्रकट करती है।

माया से मीरा-'माया से मीरा' एक चरित्र प्रधान सौद्देश्य कहानी है, जो शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करने के अतिरिक्त पारिवारिक दायित्व का निर्वाह करती माया के त्याग को दर्शाती है। माता-पिता के निधन पश्चात् अविवाहित रहकर अपने छोटे भाई-बहिनों की सफल परवरिश कर अपने दायित्वों का निर्वहन करती है।

कसूम्बो-इस संग्रह की कहानी 'कसूम्बो' बालकों में नशे की प्रवृत्ति और उसे दुष्परिणाम से परिचय कराती है। साथ ही बच्चे को गोद लेने के पश्चात् स्वयं की गोद हरी हो जाने पर उसकी मानसिकता का मनोवैज्ञानिक चित्रण गहराई से करती है।

सुरजी-यह कहानी मजदूर स्त्री 'सुरजी' की है जो अपने पति के अत्याचारों से पीड़ित है। घर से निकाल दिए जाने पर जब वह मजदूर रूप में ठेकेदार के पास काम करती है तो वह भी उसके देह शोषण को आतुर नजर आता है। सुरजी उसे सबक सिखाती है ताकि वह किसी भी स्त्री को निर्बल न समझ सके। इस प्रकार सुरजी स्त्री के आत्मसम्मान और स्वाभिमान की कहानी है। जिसमें स्त्री को परम्परागत पैर की जूती वाली अवधारणा के विरुद्ध खड़ा बताया गया है। कहानीकार इस अवधारणा का पुरजोर विरोध करते हैं। कहानीकार का स्त्री के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण श्लाघनीय है।

हरबोल्यो- समाज के तथाकथित सभ्य सामाजिकों द्वारा दौल जी हरबोला के प्रति हुए दुर्व्यवहार यहाँ तक कि उनके पौत्र देवराज, जिसने बी.ए. पास कर लिया था, को भी ईर्ष्यावश बार-बार अनुत्तीर्ण रहने वाले भानु और उसके साथी बंशी, राजू और बसन्त द्वारा हँसी उड़ाए जाने का मार्मिक चित्रण किया गया है।

जब देवराज के पिता द्वारा अपने दादाजी के त्याग और बलिदान की कथा ज्ञात होती है तो उसका सिर गर्व से ऊँचा हो उठता है। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की सेनानी झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की वीरता के गीत गाने वाले हरबोलों के प्रति सम्मान का यह भाव, परोक्ष रूप से व्यक्त करना, कहानीकार की उस वीरांगना के प्रति भी श्रद्धाभाव व्यंजित करता है।

खुल्याहात-वैचारिक स्तर पर झकझोरने वाली यह कहानी आधुनिक परिवेश के युवक व युवतियों की आधुनिकताजन्य सोच व खुले हाथ से खर्च करने की प्रवृत्ति, उनके द्वारा उत्पनन सन्तान की उपेक्षा व पारिवारिक द्वन्द्व का कारण बनती है।

अबोलोपन -'अबोलोपन' कहानी में लेखक द्वारा मुकेश और उसकी पत्नी की किच-किच से पारिवारिक परिवेश में व्याप्त विवाद का चित्रण किया गया है। दो भाईयों के बीच माँ-बाप का दायित्व किसी एक की ही पत्नी क्यों ढोए? स्त्री भाव का सटीक विमर्श दर्शाता है कि परिवार के वृद्धों को बोझ समझने वाली पीढ़ी को भी भविष्य में ऐसी ही स्थिति का सामना करना पड़ेगा।

अन्ततः कहानीकार ने लड़के-लड़कियों के पलायन की ज्वलन्त समस्या को सामने रखते हुए उचित विमर्श प्रस्तुत किया है।

मकान नं. 502, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी,
कोटा 324009 (राज.)
मो.: 9461201071

डॉ. वीणा छंगाणी
मानविकी एवं कला संकाय,
अपेक्स विश्वविद्यालय, जयपुर

सूचना

अक्षरा के सम्माननीय पाठकों, सदस्यों से विनम्र आग्रह है कि पते के साथ अपना मोबाइल नंबर भी अवश्य भेजें। ताकि पत्रिका आपको पहुँचने में विलंब न हो।

भारतीय भक्ति आंदोलन में नामघोषा

– आलिया जेसमिना

जन्म – 10 दिसंबर 1994।
जन्मस्थान – बरपेटा (असम)।
शिक्षा – एम.ए., बी.ए.,बी.एच.।
रचनाएँ – पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

भारतीय भक्ति आंदोलन 7 वीं से 10वीं शताब्दी के आसपास उभर कर आए और पूरे मध्ययुगीन भारत के परिवर्तनकारी सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना का प्रतिनिधित्व किया है। वैदिक और उपनिषदिक परंपराओं में निहित भक्ति आंदोलन ने जाति की सीमाओं से परे व्यक्ति और परमात्मा के बीच अधिक घनिष्ठ और व्यक्तिगत संबंध की सफल स्थापना की। यह आंदोलन भारत के विविध सांस्कृतिक परिदृश्य में विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ, जिसकी अभिव्यक्ति संतों और मनीषियों के कविता, संगीत और सृजन प्रतिभा में व्यक्त हुई। कबीर, रैदास, मीराबाई और तुलसीदास जैसे प्रमुख भक्त संतों ने प्रांतीय भाषाओं में भक्ति छंदों की रचना की, जिससे आध्यात्मिकता आम लोगों के लिए सुलभ हो गई। उनकी रचनाएँ अक्सर सामाजिक पदानुक्रमों, कर्मकांडीय औपचारिकताओं की आलोचना करती थीं और धार्मिक सीमाओं से परे एक सार्वभौमिकता को स्वीकारती थीं। विशेष रूप से असम में 'महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव (1449)' और उनके शिष्य 'महापुरुष माधवदेव (1489)' द्वारा प्रचारित 'नव-वैष्णववाद' का उद्देश्य भक्ति साधना को सरल और जनमानस के मध्य सुलभ बनाना था।

इस आंदोलन ने जाति, पंथ या भाषा की परवाह किए बिना विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को भक्ति धर्म की व्योम में एकजुट करने का प्रयास किया। 'नव-वैष्णववाद' के संस्थापक 'महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव' ने कृष्ण की भक्ति पर जोर दिया और भगवद गीता पर आधारित भक्ति धर्म को अपनाया। शंकरदेव के शिष्य माधवदेव ने इस आंदोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई और 'नामघोषा'('घोषा' शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'पद')नामक एक भक्ति काव्य की रचना की है जो भक्ति की प्रकृति को दर्शाता है।

भारतीय भक्ति आंदोलन, भारतीय सामाजिक-धार्मिक परिदृश्य में भक्ति की कल्याणकारी शक्ति के प्रमाण के रूप में विकसित हुआ। मध्ययुग में जितने भी संत हुए, वे भक्ति आन्दोलन के प्रचार-प्रसार में सफल रहे। यह आंदोलन किसी धर्म तक ही सीमित नहीं था, इसकी गूँज अखिल भारतीय स्तर पर प्रतिध्वनित हुई।

भारत में भक्ति आंदोलन की विरासत पर प्रकाश डालते हुए इसके समावेशी सिद्धांत, नैतिक गतिमयता, सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों पर विचार करना महत्त्वपूर्ण है। प्राचीन काल की वैष्णवसाधना मुख्यत: मूर्तिपूजा, पूजा-उपासना से ओतप्रोत थी। विष्णु की पूजा का उल्लेख 'पंचरात्र संहिता' और 'वैखानस आगम' में विस्तार से किया गया है। तेरहवीं शताब्दी तक असम में प्रचलित वैष्णव धर्म 'पंचरात्र' के अनुसार भगवत धर्म था। पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में 'महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव' ने भगवद गीता पर आधारित भक्ति के नए रूपों का प्रचार करके सरल 'नव-वैष्णव भक्ति' धर्म की स्थापना की। भक्ति आंदोलन या नव वैष्णव भक्तिधर्म असम में 'शंकरदेव' और उनके शिष्य 'माधवदेव' के नेतृत्व में शुरू किया गया था।

आगे यह धार्मिक जागृति धार्मिक जगत तक ही सीमित नहीं रही बल्कि धीरे-धीरे असम के विभिन्न जातीय समुदायों को एकजुट किया और समाज, कला, संस्कृति, भाषा और साहित्य में अपना प्रभाव फैलाया और एक नई असमिया संस्कृति को जन्म दिया। भारत की विशालता और विविधता में एकता खोजने वाले शंकरदेव ने भगवद गीता के भक्ति धर्म के माध्यम से असम में रहने वाले विभिन्न जातीय समूहों के लोगों को एकजुट करने का भी प्रयास किया। भगवद गीता पर आधारित शंकरदेव का भक्ति धर्म 'एकशरण नामधर्म' है। शंकरदेव ने अपने द्वारा प्रवर्तित भक्ति धर्म में कृष्ण को मुख्य पात्र के रूप में अपनाया है। नव वैष्णव भक्ति धर्म या एकशरण भक्ति धर्म के संस्थापक शंकरदेव ने कृष्ण को विष्णु के पूर्ण अवतार के रूप में भगवान के सर्वोच्च व्यक्तित्व की मान्यता दी और अपने भक्तों को केवल विष्णु के प्रति समर्पण करने का सख्त निर्देश दिया।

असम के भक्ति आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य जाति, नस्ल या भाषा की परवाह किए बिना जीवन के सभी क्षेत्रों के लोगों को भक्ति धर्म की ओर आकर्षित करना था। पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में भगवद गीता के सन्देश 'कोचबिहार' से दक्षिणी असम तक पूरे क्षेत्र में फैलनी शुरू हुई। 'महापुरुष शंकरदेव' के द्वारा दिखाई गए पथ पर चलने वाले और उनके भक्ति भावना को लोगों तक पहुँचाने में उनके शिष्य 'माधवदेव' और उनके शिष्य 'दामोदरदेव' साथ ही 'दामोदरदेव' के शिष्य 'भट्टदेव' का नाम उल्लेखनीय है। शंकरदेव के 'कीर्तन' और 'दशम' और माधवदेव की 'भक्ति-रत्नावली' और 'नामघोषा' आदि 'भगवद पुराण' पर आधारित असम के वैष्णव भक्ति ग्रंथों में से उल्लेखनीय हैं। महापुरुष माधवदेव की भक्ति-काव्य रचनाओं में 'नामघोषा' सर्वश्रेष्ठ है। यह न केवल माधवदेव के प्रतिभा में, बल्कि पुराने असमिया साहित्य में भी सर्वोत्तम उपलब्धियों में से एक है। यह असमिया 'नव वैष्णववाद' की चार पुस्तकों में से एक माना जाता है। इस पुस्तक को 'हेजारी घोषा' भी कहा जाता है क्योंकि इसमें 'एक हजार घोषाएँ' अर्थात् 'एक हजार पद' हैं। 'नामघोषा' के सन्दर्भ में अलग-अलग विद्वानों ने अपना मत प्रकट की है। जैसे- आलोचक विद्वान् डॉ. सत्येन्द्र नाथ शर्मा इसे 'माधव के आध्यात्मिक-जीवन की पूर्ण-अभिव्यक्ति' कहा है तो डॉ. बानीकांत काकती के अनुसार, 'नामघोषा में आनंद के विशाल सागर की ओर भावनाओं की तीन मुख्य धाराएँ मिश्रित हैं-पुण्य श्लोक-शंकरस्मृति, माधव की आत्म-लघुता और कृष्ण भक्ति।' **(काकति बाणीकांत, पुरनि असमीया साहित्य (2018), असम प्रकाशन परिसद, गुवाहाटी, पृ.63)**। इसके अलावा डॉ. काकती ने नामघोषा को 'माधवदेव का महाप्रस्थानिक-गीत' घोषित किया है। क्योंकि उन्होंने 'कोचबिहार' में अपने जीवन के अंतिम दिनों में 'नामघोषा' की रचना की थी।

'नामघोषा' के अतिरिक्त असमिया समाज के लिए माधवदेव का एक ओर अभिनव योगदान 'चरित तोला' की प्रथा का आविष्कार करके बनाया गया 'गुरु चरित' और 'चरित साहित्य' है। ये 'गुरु चरित' या 'चरित साहित्य' उस समय के असम के सामाजिक धरोहर रही है और यही से असमिया 'जीवनी साहित्य' का अंकुरण हुआ। गुरु शंकरदेव की तरह, माधवदेव को भी अलग-अलग परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न स्थानों पर समय बिताना पड़ा और तद्नुसार साहित्य की रचना की है। इससे यह भी पता चलता है कि माधवदेव ने कुछ पुस्तकें गुरु की उपस्थिति में लिखे और बाकी गुरु की मृत्यु के पश्चात् लिखे हैं। अपने जीवनकाल के दौरान, माधवदेव ने एक नाटक की रचना की, जिसमें बरगीत, गुरु भटीमा जैसे जय गुरु शंकर सर्व गुणाकर, प्रातस समये यशोदा जननी, भटीमा, राजसूय काव्य, रामायण के आदिकांड और जन्म रहस्य जैसे अधिकांश शामिल थे। 'नामघोषा' माधवदेव के साहित्यिक और आध्यात्मिक जीवन का एक स्मारक है। 'नामघोषा' उनके साहित्यिक जीवन और संभवत: उस काल के आध्यात्मिक जीवन की महान कृति है। गुरु शंकरदेव के आदेश परमाधवदेव ने कम उम्र में अपने गुरु से प्राप्त ज्ञान, विभिन्न ग्रंथों के अध्ययन से प्राप्त ज्ञान और अपने सभी ज्ञान और आदर्शों के सामंजस्य के आधार पर 'नामघोषा' की रचना की। यह उनके विद्वता, काव्यत्व, आध्यात्मिक आदर्शों के ज्ञान का पूर्ण विकास है। इस संदर्भ में, यह भी महत्त्वपूर्ण है कि माधवदेव ने अपने शिष्यों को सलाह दी कि वे अक्सर 'नामघोषा' को अपने साथ रखें और वे उसे 'नामघोषा' के बीच में पाएँगे। 'नामघोषा' नव वैष्णववाद के मूल सूत्रों और दार्शनिक आधार का पूर्ण संकेत है।

यद्धपि 'नामघोषा' के रचयिता के रूप में हम 'माधवदेव' को ही जानते हैं, परन्तु इस सन्दर्भ में अनेक मत देखने को मिलती है। इसका कई कारण हो सकते हैं, उनमें से एक कारण यह है कि, इसमें 1,000 घोषाओं (पदों) में से केवल चार सौ (400)ही उनके स्व सृजित है, बाकी मुख्यत: भगवद गीता, बृहन्नारदीय पुराण, बामन पुराण, मत्स पुराण, पद्म पुराण, ब्रह्म पुराण और ब्रह्म पुराण पुराणों, विष्णु पुराणों आदि से ली गई है। इसके अलावा, प्रत्येक घोषा(पद) में भक्ति रत्नाकर का एक श्लोक, विष्णुपुरी भिक्षुओं की भक्ति रत्नावली और शंकराचार्य की मोह मुद्रा शामिल है।

'नामघोषा' में कृष्ण की महिमा, भक्ति की श्रेष्ठता, दास्य भक्ति का स्वर, सत्संग की महिमा, सद्गुरु की प्रासंगिकता और 'नाम-कीर्तन' का महत्व प्रतिपादित किया गया है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर 'नामघोषा' को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहला भाग 'नाम' और 'धर्म' के विशिष्ट सिद्धांत को स्थापित करता है। 'नाम-धर्म' सरल सार्वभौम धर्म है, यह धर्म सभी को स्वीकार्य है। यह एकेश्वरवाद सिद्धांत को प्रतिपादित करता है, माधवदेव के गुरु शंकरदेव के शब्दों में 'एक देव एक सेव एक बिने नाइ केउ' (अर्थात एक ही ईश्वर है और केवल उन्ही की उपासना करना है)। एकेश्वरवादी धर्म सर्वोत्तम माना है। 'नामघोषा' के सभी घोषा के माध्यम से एकमात्र पूजनीय भगवान कृष्ण का नाम बार-बार उच्चारित किया जाता है। संत माधवदेव के शब्दों में-

'कृष्ण एक देव दु:ख: हारी काल मायादिरो अधिकारी
कृष्ण बिने श्रेष्ठ देव नाहि नाहि आर।'

(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्याख्या (2018), एकचत्वारिंशत अध्याय

: द्वितीय चरण, घोषा- 588, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी, पृ. 637)

उक्त पद के माध्यम से माधवदेव यह अभिव्यक्त करने की प्रयास की है कि, हरि पद सेवा और श्रवण कीर्तन भक्ति के माध्यम से हरि की गुरु के रूप में पूजा करने और मन की उन सभी इच्छाओं को दूर करने की सलाह देते हैं, जो हरिभक्ति के विरुद्ध है, जो विचार हरि के शत्रु है। जब तक चेतना है, तब तक संसार के भय को दूर करने का उपाय हरि भजन ही है। मनुष्य का मन बड़ा दुष्ट है। चंचल मन सदैव हरि से विमुख रहता है। वे भगवान की भक्ति के सबसे बड़े शत्रु हैं। हरिगुण के नाम के बिना मन पर शासन करने का कोई अन्य उपाय नहीं है। जब तक चेतना जागृत है, तब तक मनुष्य परम महिमा के साथ भगवान के शुभ नामों का जप करके बिना कोई अन्य कार्य किए परम सुख से मृत्यु के सागर को पार कर सकता है। कलियुग में सभी धर्मों का फल कृष्ण नाम की भक्ति में ही प्राप्त होता है।

दूसरी ओर 'नामघोषा' में माधवदेव की एकांत और आत्मलीनता के प्रति समर्पण की सरस अभिव्यक्ति भी हुई है। जीवन का अंतिम लक्ष्य अहंकार को त्यागना और अपने अस्तित्व और स्वयं को पूरी तरह से कृष्ण के चरणों में समर्पित करना है। तीसरे खंड में 'भगवत स्मरण' के लिए कृष्ण नारायण के नाम स्मरण एवं गुणानुकीर्तन उल्लेख किया गया है। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि माधवदेव ने 'नामघोषा' में निहित 'घोषा' या पदों को अलग-अलग नामों से अलग-अलग खंडों में विभाजित किया है। 'नामघोषा' की शुरुआत एक भजनपरक घोषा या पद से होती है। इसमें दो घोषा या पद शामिल हैं, इसकी पहली घोषा है-

'मुक्तित निस्पृह जिटो सेहि भकतक नमो / रसमयी मागोहो भकति
समस्त मस्तक मणि निज भकतर बैश्य / भजो हेन देव यदुपति।'
(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या (2018), प्रथम अध्याय प्रथम चरण, घोषा- 1, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी. पृ. 93)

अर्थात्, मैं उस महान गुरु को नमन करता हूँ जो अपने शिष्यों को सद्प्रेरणा के साथ भगवान कृष्ण की पूजा करने की मार्गदर्शन करते हैं और सभी देवताओं में सर्वश्रेष्ठ एकमात्र सर्वशक्तिमान भगवान कृष्ण की मैं स्वयं निरतंर पूजा करता हूँ। इसमें निहितार्थ भाव गहन अर्थ द्योतित करता है। यह 'नामघोषा' के सार और माधवदेव की भक्ति के आदर्शात्मक प्रतीक को दर्शाती है। इस घोषा का सामान्य अर्थ यह है संत माधवदेव उस भक्त को नमन करना चाहता है, जो मुक्ति की इच्छा के बिना केवल भक्ति चाहता है। फिर, वह भगवान यदुपति कृष्ण की रसपूर्ण भक्ति की कामना करता है, जो देवताओं के भी देव है, जो भक्त के अधीन है। रसमयी भक्ति मुक्ति की तलाश या भगवान के साथ विलय नहीं है, बल्कि उनके चरणों में जगह तलाशना है। इस सन्दर्भ में हम एक उल्लेखनीय उदाहरण निम्नलिखित रूप से देख सकते हैं जो नामघोषा ग्रन्थ के अंत में माधवदेव स्वयं को इस रसपूर्ण भक्ति के प्रति समर्पित करते हैं-

'जानिया भजियो भाइ भगवंत पावे / एहू रस माधव मुरुख मति गावे।'
(ठाकुरिया-चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या (2018), नव नवतीतम अध्याय द्वितीय चरण, घोषा-1001, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी पृ. 991)

माधवदेव के 'नामघोषा' के संदर्भ में डॉ. बाणीकांत काकती की मान्यता यह रही है कि, जैसे समुद्र की ओर बहने वाली धारा पहाड़ों की कठोर चट्टानों को पार करके समुद्र की ओर तेज गति से बहती है, यह रसदार भक्ति 'नामघोषा' लगभग एक हजार श्लोकों से होकर विशाल महासागर की ओर बहती है। चाहे वह शंकर की स्मृति हो, चाहे वह आत्मत्याग हो, चाहे वह भक्ति का गौरव हो, यह महान भक्ति रस सभी के माध्यम से गूँज रहा है। प्रस्तुत ग्रन्थ में यह भी व्यक्त किया गया है कि निर्गुण ब्रह्म आवश्यकतानुसार विभिन्न अवतार लेता है और उसे राम, हरि, कृष्ण आदि के रूप में जाना जाता है।

संत माधवदेव सदैव अपने हृदय में इस पुण्यात्मा कृष्ण की पूजा करता है, जो शाश्वत, अनंत, शुद्ध, सच्ची चेतना है, जिसकी सेवा से पापी भी मुक्त हो जाते हैं। माधवदेव द्वारा रचित 'नामघोषा' के कुछ-कुछ पदों में यह भाव भी देखा जा सकता है कि, ईश्वर सर्वव्यापी है, सूक्ष्म रूप से सभी चीजों में छिपा हुआ है। इसलिए उसे खोजने के लिए कहीं भी गए बिना अपने हृदय में उसके नाम का ध्यान (स्मरण) करते रहना चाहिए। फिर, भगवान भक्त के अधीन है जहाँ भी भक्त उनके नाम और गुणों का जप करते हैं, हरि विद्यमान होते हैं। कृष्ण की भक्ति सब से श्रेष्ठ माना गया है। यह सभी धर्मग्रंथों का सार भगवद गीता में भी व्यक्त किया गया है।

यह भी मान्यताएँ प्राप्त होती है कि सभी तीर्थों, दान, यज्ञ आदि का सारा लाभ केवल कृष्ण भक्ति से ही प्राप्त हो सकता है। परंतु हरि भजन के योग्य केवल मनुष्य में ही हैं। हरिनाम कीर्तन सभी बाधाओं को दूर कर सकता है और हमें मृत्यु के भय से बचा सकता है। इसलिए जीवन के इन दो पहलुओं के महत्व को समझना जरूरी है। जब अज्ञानता या भ्रम दूर हो जाता है तो व्यक्ति के हृदय में ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है और इन सभी अकल्याणकारी तत्वों को नष्ट करने का एकमात्र तरीका श्रवण, कीर्तन और विशुद्ध भक्ति है। जिसका सफल चित्रण माधवदेव के 'नामघोषा' में दिखाई पड़ते हैं, जैसे-

'साधु संग अनुसरा श्रवण कीर्तन करा
परिहरा पाखंड आचार'
(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या (2018), चतुर्थ अध्याय तृतीय चरण, घोषा- 34, बनलता प्रकाशन, गुवाहाटी. पृ. 159)

अर्थात्, हे सभासद! या सभा में उपस्थित भक्तों, हरि नाम श्रवण-कीर्तन स्मरण को मत छोड़ो। पशुवत व्यवहार या पाखंड त्याग करो। माधवदेव का यह मानना है कि, हरि नाम ही संसार को बचाने का एकमात्र उपाय है, अन्यथा मनुष्य को बार-बार जन्म लेना पड़ेगा और भवसागर में डूबना पड़ेगा। इसलिए, केवल गोविंद का नाम सुनने और जपने से ही मृत्यु से बचा जा सकता है। गुरु शंकरदेव ने सभी शंकाओं को दूर कर ईश्वर भक्ति के सिद्धांत को सरल ढंग से समझाया और उपदेश दिया है। माधवदेव उन लोगों की निंदा करता है, जो शास्त्रों के विद्वान शंकरदेव को अपना गुरु कहने के बजाय शास्त्रों के ज्ञान से रहित लोगों को गुरु कहते हैं। इसी तरह माधवदेव के 'नामघोषा' में भक्ति का अलग-अलग स्वरूप देखने को मिलती है। एक तरफ हरि कृष्ण के प्रति अगम भक्ति है तो दूसरी ओर अपने गुरु के प्रति भी अपार श्रद्धा एवं भक्ति है।

'नामघोषा' की एक और विशेषता यह है कि, यह 'श्रवण' और 'जप' के प्रति समर्पण पर जोर देता है। इस प्रकार की भक्ति की विशेषताओं की दृष्टि से इसे सर्वोत्तम भक्ति की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि श्रवण और जप से भक्ति का अभ्यास आसानी से किया जा सकता है। इसके लिए किसी नियम या जाति या धर्म की आवश्यकता नहीं है। मन को शुद्ध करने और श्री हरि की उपस्थिति प्राप्त करने के लिए इस भक्ति का गहराई से अभ्यास किया जा सकता है। माधवदेव के शब्दों में-

'हरि नाम कीर्तनत नाहिकाल देश पात्र /नियम संयम एको बिध
हरित शरण लोयो केवल हरिर नाम /कीर्तन करंते होवे सिद्धि।'
(ठाकुरिया, चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या 2018, तृतीय अध्याय तृतीय चरण, घोषा -28, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी पृ. 148)

अर्थात्, हरिनाम सुनने और जपने के लिए किसी विशिष्ट समय, देश या स्थान, व्यक्ति या पात्र-किसी विशिष्ट प्रायश्चित या संयम का पालन करने की आवश्यकता नहीं है, इसलिए केवल हरि की शरण लेना और हरि नाम का श्रवण और जप करना आवश्यक है। इसलिए हरि का नाम सभी धर्मों में सर्वश्रेष्ठ है।

नामघोषा के संदर्भ में भव प्रसाद चलिहा कहते हैं-'नामघोषा खेद, ऊब, आत्म-निंदा, शरण और प्रार्थना शीर्षक इन घोषाओं में घोषणाएँ एक ओर भक्तिपूर्ण दीनता और दूसरी ओर भक्त प्राण की व्याकुलता, एकाग्रता और आत्म-विलाप भाव को व्यक्त करती है।' **(चलिहा, भवप्रसाद, सं. माधवदेवर साहित्य (2016) श्रीमंत शंकरदेव संघ प्रकाशक, गुवाहाटी पृ. 250)**। इसलिए यह टिप्पणी की जा सकती है कि रसमय भक्ति की प्रकृति या विशेषताएँ 'नामघोषा' के माध्यम से प्रकाशित होती हैं। रसमय भक्ति का मुख्य गुण या विशेषता यह है कि इसमें मुक्ति और सुख की कोई इच्छा नहीं होती है। जो लोग इस भक्ति का अभ्यास करते हैं वे पूरे विश्व में भगवान का प्रतिबिंब देखते हैं। रसमय भक्ति सर्वोत्तम या नि:स्वार्थ भक्ति है; नवधा भक्ति का सर्वोत्तम या उच्चतम स्तर है। यह भक्ति भगवान के प्रति समर्पण है, भगवान के प्रति प्रेम है, भक्त मुक्ति सहित सभी सुखों के बावजूद भगवान के चरणों में जगह पाने के लिए ही प्रार्थना करता है, कि वह हमेशा उनके चरणों की सेवा कर सके, यही भगवान से एकमात्र प्रार्थना है। इस भक्ति के प्रभाव से भक्त मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है और न चाहते हुए भी परम शांति प्राप्त कर सकता है। 'नामघोषा' में इस तरह के भक्तिपरक 'घोषा' या 'पद' देखने को मिलती है, जो इस प्रकार है-

'अनादि अनंत हे भगवंत / भजो करि प्रणिपात
मुकुति रसको तेजि महाजने / शरण लवे तोमत।'
(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या (2018), द्वाविंशतम अध्याय प्रथम चरण, घोषा-190, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी पृ. 345)

उक्तपद में माधवदेव एकमात्र अनंत ईश्वर की महिमा को व्यक्त की है। ईश्वर का आदि और अंत खोजना संभव नहीं है। सृष्टि का यह प्रकट प्रवाह सदैव प्रवाहित होता रहेगा। यह सृष्टि अनन्त है। अत: ईश्वर शाश्वत है। वह हर तत्व का स्वामी है, समस्त जग और दिव्य ऐश्वर्य उन्हीं में समाहित है। इसलिए वह भगवान है, बड़े-बड़े महंत और महाजन मुक्ति के सुख की उपेक्षा करते हैं और आनंदमय भगवान कृष्ण के चरण कमलों की सेवा करने के साथ-साथ आनंद की आशा में उनकी शरण लेते हैं। इसलिए इस घोषा में माधवदेव ने यह व्यक्त करने की कोशिश की है कि वह मोक्ष के स्वाद को अस्वीकृत करते हैं और उन महाजनों की तरह भगवान के चरणों में शरण लेते हैं जो सुस्वादु भक्ति की तत्व बनना चाहते हैं और साथ ही संत भक्तों को ऐसा करने की सलाह भी देते हैं।

'नामघोषा' में दास्य भक्ति का भी प्रमुख स्थान है। दास्य भक्ति का

रसमय भक्ति से गहरा संबंध है, जो नाम–घोषा में प्रचलित है। दास्य भक्ति में भक्त के मन में अहंकार का भाव नहीं रहता। वे स्वयं को ईश्वर का सेवक समझते हैं। भक्त केवल भगवान के चरणों में शरण पाने की प्रार्थना करता है। इस सन्दर्भ में 'नामघोषा' के एक महत्त्वपूर्ण पद (घोषा) को उल्लेख किया जा सकता है, जैसे–

'मइ अनाथक दया करहु परमानन्द / दास बुलि धरियो मनत
थोयो निज भृतर संगत / आंगुलि मुखत करो दांते तृण तुलि धरो
केश चिंगी देऊ चरणत'/

(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्याख्या (2018), षष्ट अध्याय प्रथम चरण, घोषा–70, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी पृ. 205)

इसमें माधवदेव ने अत्यंत विनम्रता से ईश्वर के प्रति अपनी 'भक्ति भाव' व्यक्त करते हैं। वह भगवान से विनती कर रहा है कि–उसे एक सेवक के रूप में स्वीकार करने और कृपया उसे अपने सेवकों के साथ रहने की अनुमति दे। इस प्रकार, जो लोग जीवन के प्राण के रूप में आसक्ति से रहित भगवान के चरणों में समर्पित हैं, वे ही हरि के एकमात्र और समर्पित भक्त माने गए हैं।

गुरु की मार्गदर्शन की आवश्यकता और संत संगति की महिमा एवं भक्ति के सिद्धांत के बारे में 'नामघोषा' में चर्चा की गई है। गुरु की मार्गदर्शन शिष्य को ज्ञान प्राप्त कर सत्य के सही मार्ग पर आगे बढ़ने की शक्ति देती है। संत माधवदेव अपने गुरु के प्रति जो भाव अभिव्यक्त की है, उसे निम्नलिखित पदों के माध्यम से स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है–

'गुरु उपदेश लब्द्ध शिष्य सवे/ उपदेश सार धरा
येवे ईश्वरक पाइवा यत्न करि / बुद्धिक सत्त्वस्थ करा।'

(ठाकुरिया चाकिराम, नामघोषा प्रसंग व्यख्या (2018), चतुविंशतितम अध्याय द्वितीय चरण, घोषा–255, बनलता प्रकाशन गुवाहाटी पृ. 417)

इसमें गुरु माधवदेव अपने शिष्यों को सलाह देते हैं कि, अपने हृदय में ईश्वर का अनुभव करो, जो अज्ञानी और अनादरपूर्ण है, वह नष्ट हो जाएगा। जब शिष्य अपने मन को स्थिर करता है और गुरु द्वारा दिए गए भक्ति के मार्ग और प्रणालियों का अत्यंत सावधानी से पालन करता है, तो भगवान, आत्मा, प्रसन्न होते हैं।

उपर्युक्त विवेचनों के अलावा 'नामघोषा' में जिस प्रकार संत माधवदेव ने संत संगति की महिमा का वर्णन किया है, उससे यह स्पष्ट होता है कि माधवदेव ने अपना जीवन संतों और महंतों के साथ बिताया है। इससे उन्हें संत–संग की महिमा समझ में आ गई। अत: यह कहा जा सकता है कि, 'नामघोषा' की विषय–वस्तु अत्यंत विशाल एवं गहन है। संक्षेप में, 'नामघोषा' महान संतों के दर्शन का चरम संग्रह है। यह विश्लेषण भारतीय भक्ति आंदोलन के संदर्भ में भक्ति की प्रकृति की व्यापक समझ प्रदान करता है। भक्ति आंदोलन, विशेष रूप से शंकरदेव द्वारा शुरू किया गया और माधवदेव द्वारा आगे बढ़ाया गया नव–वैष्णव भक्तिधर्म ने पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के दौरान असम में धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को नया आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। भगवद गीता में निहित एक सरल नव–वैष्णव भक्ति धर्म का प्रचार करना दरअसल शंकरदेव के प्रयासों का उद्देश्य असम में विभिन्न समुदायों को एक सामान्य आध्यात्मिक व्योम के नीचे एकजुट करना था। इस आंदोलन ने धार्मिक सीमाओं को पार किया और जाति, पंथ या भाषा की परवाह किए बिना जीवन के सभी क्षेत्रों के लोगों को स्वागत किया। इस समावेशी दृष्टिकोण ने पहले की वैष्णव प्रथाओं से प्रस्थान को चिह्नित किया और एक नई असमिया संस्कृति के उद्भव में योगदान दिया। शंकरदेव के प्रमुख शिष्य माधवदेव ने अपने साहित्यिक योगदान, विशेषकर 'नामघोषा' से नव–वैष्णव परंपरा को और समृद्ध किया। यह असमिया नव–वैष्णव साहित्य के क्षेत्र में एक स्मारकीय कार्य के रूप में कार्य करता है, जो माधवदेव के आध्यात्मिक जीवन का प्रतीक है। 'नामघोषा' भी भक्ति के मार्ग पर भक्त का मार्गदर्शन करने में गुरु के महत्व को रेखांकित करता है। संतों की संगति और महंतों की संगति को आध्यात्मिक यात्रा में महत्त्वपूर्ण तत्वों के रूप में चित्रित किया गया है। संक्षेप में 'नामघोषा' माधवदेव के आध्यात्मिक अनुभवों और भक्ति की एक शक्तिशाली अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है, जो भक्ति के मार्ग पर प्रगतिशील साधकों के लिए एक मार्गदर्शन प्रदान करता है। यह कार्य नव–वैष्णववाद के दार्शनिक आधार को शामिल करता है, जिसमें भगवान कृष्ण की एकेश्वरवादी पूजा, निस्वार्थ भक्ति और दिव्य साधना के शक्ति पर जोर दिया गया है। माधवदेव का जीवन और व्यक्तित्व, जैसा कि 'नामघोषा' में परिलक्षित होता है, भक्ति आंदोलन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण अध्याय के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसने असम के धार्मिक और सांस्कृतिक ताने–बाने पर एक अमिट छाप छोड़ी है। अंत में यह कहा जा सकता है कि, शंकरदेव और माधवदेव के योगदान से आकार लेने वाली नव–वैष्णव भक्ति परंपरा की स्थायी विरासत आध्यात्मिक साधकों और विद्वानों के लिए समान रूप से प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है।

हिंदी विभाग, तेजपुर वि.वि. नापाम,
तेजपुर सोनितपुर–784028(असम)
मो.–6901609418

हिंदी उपन्यासों में स्त्रीवाद पर फ्रेंच प्रभाव

- अविनाश कुमार उपाध्याय

जन्म - 10 अक्टूबर 1980।
जन्मस्थान - पटना (बिहार)।
शिक्षा - एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ - पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

समकालीन हिन्दी उपन्यासों का एक प्रमुख विषय है-स्त्रीवाद। स्त्रीवाद के जितने भी पक्ष और रूप हैं, वे सब हिन्दी उपन्यासों में मिलते हैं। फ्रेंच उपन्यासों में स्त्रीवाद एक पुरानी बात है जबकि हिन्दी में यह एक समकालीन अनुभव है। इस शोध पत्र में 'इको फेमिनिज्म' (पारिस्थितिक नारीवाद) की फ्रेंच अवधारणा के समकालीन स्त्रीवादी उपन्यासों पर पड़े प्रभाव का आकलन मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब' (1996) के विशेष सन्दर्भ में किया गया है।

मुख्य शब्द नारीवाद/स्त्रीवाद, पारिस्थितिक नारीवाद :- पारिस्थितिक स्त्रीवाद को अंग्रेजी में 'इको फेमिनिज्म' कहते हैं। 'इको फेमिनिज्म' नामक संकल्पना की दार्शनिक व्याख्या 1974 में सबसे पहले फ्रेंच नारीवादी फ्रन्स्वाद युवीन ने प्रस्तुत की, उन्होंने इको फेमिनिज्म को मानवीयता के रूप में देखा। इसका लक्ष्य पुरुष के बदले में स्त्री को प्रतिष्ठित करना नहीं है, बल्कि इसका मकसद पुरुष केंद्रित अधिकार और उसकी संरचना को शिथिल करना है। स्त्री-पुरुष भेद के बिना मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने, समझने और मानने वालों के एक संसार के सृजन में 'ईको फेमिनिज्म' काम करता आ रहा है। फ्रन्स्वा के अनुसार स्त्रीत्व पर आधारित भूमि सबको सुरक्षा प्रदान करेगी।

पारिस्थितिकीय विमर्श यदि प्रकृति और पर्यावरण के साथ मनुष्य के संतुलित समन्वयात्मक संबंध का नाम है तो इसकी परिधि में जैविक विविधता को बचाने की जद्दोजहद के साथ प्रकृतिरूपा स्त्री की गरिमा को बचाने की संवेदनात्मक पहल भी शामिल है। स्त्री अमूमन हर देश-काल में तिरस्कृत रही है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था का उदार मुखौटा न्याय की भरसक कोशिशों के बावजूद स्त्री की अस्मिता को पुरुष निरपेक्ष स्वायत्त मानवीय इकाई के रूप में नहीं देख पाता। प्रकृति की भाँति स्त्री में सहने और सृजन करने की अकूत ताकत है, लेकिन प्रकृति की तरह उसका अत्यधिक दोहन मनुष्य के लिए घातक हो सकता है।

मृदुला गर्ग हिन्दी की पहली रचनाकार हैं जो पूँजीवादी सभ्यता और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के भीतर प्रकृति और स्त्री के साथ पुरुष और समाज के अंतर्संबंधों को नए सिरे से जाँचने की आवश्यकता पर बल देती हैं। बेहद सचेष्ट भाव से रचा गया उनका उपन्यास 'कठगुलाब' ईको फेमिनिज्म को अपनी दृष्टि से व्याख्यायित करता है। इस प्रक्रिया में मृदुला गर्ग ने कुछेक कथा युक्तियों का सहारा लिया है, जैसे पात्रों का स्याह और सफेद दो कोटियों में विभाजन; प्रत्येक देश-काल, आयु-वर्ग की स्त्री अलग-अलग व्यथा-कथा कहते हुए भी यह ध्यान रखना कि अंतिम टेक में वह पुरुष-प्रताड़ना की एक-सी ध्वनि बन जाए; अपनी प्रवक्ता तिरस्कृत स्त्रियों-स्मिता, असीमाम, मारियान, नर्मदा-को बाँझ दिखाना; तथा पुरुष को अनिवार्य रूप से खलनायक चित्रित करना, हालाँकि अर्धनारीश्वर की परिकल्पना में वे जिस पुरुष -विपिन-को रचती हैं, वह पूरा न सही, आधा-पौना स्त्री तो है ही (स्वयं विपिन स्वीकार करता है कि 'मेरा उस अहसास में भागीदारी कर पाना, जो मेरे साथ की स्त्री महसूस कर रही थी, इस बात का सबूत था कि मेरे भीतर नारीसुलभ गुण अन्य पुरुषों की तुलना में अधिक मात्रा में विद्यमान थे। तभी मैं इतना संवेदनशील था कि स्त्री की संवेदनशक्ति को महसूस कर सकता था।) **(कठगुलाब, पृ. 199)**।

वे प्राणपण से इस तथ्य को रेखांकित करना चाहती हैं कि स्त्री मूलत: स्रष्टा है और मातृत्व उसकी सार्थकता। लेकिन उनकी मान्यता में मातृत्व को गद्गद् भाव से महिमामंडित करने वाले परंपरागत भारतीय उच्छ्वास नहीं हैं, वरन सृष्टि के क्रम को आगे बड़ा कर आत्मविस्तार करने और अपनी गलतियों से सबक लेते हुए नई पीढ़ी का बेहतर संस्कार करने की ललक है। सृजन के अर्थ को संतानोत्पत्ति के रूढ़ अर्थ में देखने की हर संकीर्णता का सख्ती से विरोध करती हैं मृदुला गर्ग। 'संतान पैदा न कर पाने से कोई बंजर नहीं हो जाता। और बहुत कुछ है जिसका सृजन हम कर सकते हैं।' **(पृ. 242)**-'कठगुलाब' सृजन की उन संभावनाओं की तलाश है जो मारियान के संदर्भ में शब्दों का संसार रच कर मूर्त हुई है (उल्लेखनीय है कि सभी नारीवादी

सिद्धांतकार स्त्रियों द्वारा स्वयं अपना इतिहास लिखने की पैरवी करती हैं ताकि अपने शब्दों के जरिए वे अपने मानस में छिपे रहस्यों और आकांक्षाओं, सपनों और यातनाओं के इतिहास को दर्ज कर सकें)। वे पुरुष द्वारा परिभाषित होने की अपेक्षा स्वयं अपने को 'डिस्कवर' करके शब्दों में अपने को परिभाषित करें।

ऐलन सिक्सू मानती हैं कि स्त्री लेखन का कंटेट नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति का माध्यम भी अनिवार्य रूप से पुरुष से भिन्न है। इस भिन्नता का पाठ और विश्लेषण बेहद अनिवार्य है क्योंकि एक ओर यह स्त्री के महत्व को एक विशिष्ट जैविक इकाई के रूप में दर्ज करता है तो दूसरी ओर पितृसत्तात्मक व्यवस्था की सांस्कृतिक संरचनाओं और षड्यंत्रों को समझने का अवसर भी देता है। वे लिखती हैं- 'किसी जनसभा में स्त्री को बोलते हुए सुनो। वह 'बोलती' नहीं, अपने पूरे शरीर को आगे धकेलती है, वह अपने को भूल कर उड़ान भरती है, उसका समग्र उसकी वाणी में समाता है। वह अपने शरीर के द्वारा अपने भाषण के 'तर्क' को जीवंत करती है। एक खास तरीके से वह जो कुछ कर रही होती है, उसे लिखती या दर्ज करती है क्योंकि वह बोलते समय अपने आवेगयुक्त और अनचीन्हे प्रवाहों को रोकती नहीं। उसका भाषण जब सैद्धांतिक या राजनीतिक भी होता है, तब भी सरल या एकरेखीय या तटस्थ रूप से सामान्य नहीं होता। वह अपने इतिवृत्त को इतिहास रूप में ढालती है।' **(कथादेश, जुलाई 2012 में प्रकाशित विभास वर्मा का लेख 'मेडूसा की हँसी पृ. 45)**

मारियन-इर्विंग प्रकरण की नियोजना के जरिए मृदुला गर्ग एलेन सिक्सू की तरह यह मानती प्रतीत होती हैं कि स्त्री की तरल, प्रवाहपूर्ण, विवेकातीत, तर्क-स्वतंत्र, चक्रीय लेखन शैली के समानांतर पुरुष की लेखन शैली अमूमन 'तर्काधारित विवेकाधीन, सोपानिक या अनुक्रमिक और एकरेखीय' होती है जो जड़ता और ठस्सेपन के साथ-साथ पुरुष-अधिनायकवाद को भी रेखांकित करती है। असीमा के संदर्भ में गरीब बच्चों को बेहतर शिक्षा-सुविधाएँ उपलब्ध कराने वाले स्कूल खोल कर; दर्जिन बीबी के संदर्भ में आत्मदया और अपराध बोध के भय से सिकुड़ी स्त्रियों को आत्मनिर्भरता और आत्माभिमान का पाठ पढ़ा कर; और स्मिता के संदर्भ में बंजर को हरियाने का संकल्प बन कर।

मृदुला गर्ग पर टाइप्ड पात्रों को गढ़ने का आरोप आसानी से लगाया जा सकता है क्योंकि उनके स्त्री पात्र जिस साँचे से तैयार होकर निकले हैं, वह उन्हें 'स्वप्नदर्शिता और भावुकता' से भरपूर बनाता है। यहाँ तक कि पुरुषों को 'हरामी' का खिताब देकर कराटे किक के साथ जब-तब 'ठोक' देने वाली 'उग्र' असीमा बेशक कितने ही दावे क्यों न करे कि 'नारीसुलभ कोमलता और करुणा' से मुक्ति पाकर ही स्त्री जीवित रहते मोक्ष पा सकती है, लेकिन भीतर से बेहद तरल और स्वप्नदर्शी है वह। सिर्फ असीमा क्यों, विपिन की मानें तो 'स्वार्थी से स्वार्थी स्त्री के पास नि:स्वार्थ प्रेम कर पाने का सामर्थ्य है। ऐसी पूँजी के होते उदात्तीकरण भला क्यों न हो, भावनाओं का, अनुभूति का। **(कठगुलाब पृ. 200)**

ठीक इसी तरह उनके सभी पुरुष पात्रों का साँचा भी एक ही है जिसे लेखिका ने नाम दिया है – नर सूअर। जिम जारविस (मनोविश्लेषक जिम जारविस को मनोरोगी के रूप में चित्रित किया है मृदुला गर्ग ने, जो पत्नी स्मिता से चाहता था कि वह प्यार, स्नेह, विश्वास, जरूरत, अपनत्व, दोस्ती, संतोष सबको शब्दों में अभिव्यक्त करे।' वह नहीं कर पाती उसके पास एक ही विकल्प बचता-सेक्स। उसकी हर चुप उसकी देह को भोगनक का नया तरीका ईजाद करवा देती। पहले से ज्यादा तिरस्कारपूर्ण, अपमानजनक और अशालीन। मृदुला गर्ग, **(कठगुलाब, पृ. 49)** हो या इर्विंग हिनटमैन (इर्विंग-मारियन प्रकरण प्रसिद्ध कवि फिट्जेराल्ड और जेल्डा फिट्जेराल्ड कथा-प्रकरण की आधुनिक पुनरावृत्ति है) जहाँ बौद्धिकता और संवेदना का जीवंत प्रतिरूप बन कर लेखक पति पत्नी की डायरियों को ज्यों का त्यों 'उड़ा' कर पाठकों की सराहना बटोरता है। उल्लेखनीय है कि पत्नी द्वारा न्याय की गुहार लगाए जाने पर न्याय व्यवस्था पितृसत्तात्मक चरित्र अपनाते हुए पुरुष के पक्ष में फैसला सुनाती है क्योंकि पुरुष के साझे हितों की रक्षा सामूहिकता में ही संभव है। जाहिर है तब सीमोन द बउवार का यह कथन बेहद सटीक हो उठता है कि 'अब तक औरत के बारे में पुरुष ने जो कुछ भी लिखा, उस पूरे पर शक किया जाना चाहिए क्योंकि लिखने वाला न्यायाधीश और अपराधी दोनों ही है।' **(स्त्री उपेक्षिता-प्रभा खेतान, पृ. 28)**

मृदुला गर्ग ने मारियान को पुरुष के भावनात्मक बलात्कार के शिकार के रूप में चित्रित किया है। 'जैसे ही यह उपन्यास छप कर आएगा, हम एक और बच्चा बनाएँगे। हमारी चेतना और देह, दोनों के मिलन का चिह्न फ्लैश ऑव अवर फ्लैश'-इर्विंग के इस वादे में चतुर शिकारी की मुस्तैद घात मौजूद है जो उपन्यास के विषय- इमीग्रेंट स्त्रियों का मानस- में स्वयं न उतर पाने की असमर्थता में मारियन द्वारा रची गई इमीग्रेंट स्त्रियों के मनोलोक को ज्यों का त्यों अपने उपन्यास में उतार लेता है। गैरी कूपर (गैरी कूपर को 'चिर युवा' या टीन एज पर अटके ऐसे 'छोकरे' के रूप में चित्रित किया गया है) जिसका शरीर और दिमाग चाहे जितना परिपक्व हो जाए, भावनात्मक आयु वही बनी रहती है। ऐसे लोगों को अपने सिवाय किसी और की इमोशनल जरूरत समझ में नहीं आती। ऐसे ही पुरुष को लेकर वर्जीनिया वुल्फ ने 'अपना कमरा' में लिखा है कि 'स्त्री दर्पण में

स्वयं को कई-कई गुणा बढ़ा-चढ़ा कर देखने के बाद ही चैन से जी पाती है।' पुरुष चूँकि वह जानता है स्त्री उसकी तमाम भौतिक-भावनात्मक जरूरतों की पूर्ति का केंद्र है, इसलिए उसका अद्धत अहं हीन होने की आशंका मात्र में आक्रामक होकर श्रेष्ठ/समर्थ हो जाने का प्रपंच रचता है। मृदुला गर्ग ने विपिन के जरिए पुरुष की इस बेचारगी का खूब मखौल उड़ाया है-'बेचारा पर-निर्भर पंगु पुरुष अपनी अस्मिता सिद्ध करने के लिए इतनी उछलकूद मचाए रखता है।' **(कठगुलाब, पृ. 200)**

स्मिता का जीजा या नर्मदा का जीजा गनपत (दो भिन्न वर्गों से संबंध रखने के बावजूद मृदुला गर्ग ने इन दोनों पुरुषों को एक-दूसरे का प्रतिरूप बताया है। दोनों पत्नी पर हिंसा और स्त्रियों के यौन शोषण को अपना विशेषाधिकार मानते हैं।)- मृदुला गर्ग हिकारत के साथ इन पुरुष पात्रों पर थूकते हुए एक बड़ा सवाल उठाती हैं कि 'प्रताड़ना-लांछना करने वाले पुरुष की अनुकंपा और साहचर्य ही क्यों चाहती है स्त्री? क्या इसलिए कि वह उसे बच्चा दे सकता है?' लेकिन बच्चे पैदा करने के लिए जब स्पर्म बैंक या टेस्ट ट्यूब बेबी जैसे विकल्प मौजूद हों, तब क्या अहमियत रह जाती है स्त्री के जीवन में पुरुष की? खासतौर पर उन आत्माभिमानी आत्मनिर्भर स्त्रियों के लिए जो मानती हैं कि 'जिंदगी की असल नेमत है औरत की दोस्ती' **(कठगुलाब पृ. 107)** लेकिन मृदुला गर्ग के भीतर का विवेकशील मनुष्य उनके भीतर रची-बसी 'औरत' को धकिया कर सवाल पूछता दीखता है कि क्या लैंगिक इकाई में रिड्यूस होकर व्यक्ति अपनी मनुष्यता को अखंड पा सकता है?

क्या स्त्री के शोषण के मूल में लैंगिक विभाजन को प्राकृतिक और जायज ठहराने वाली राजनीति नहीं है जो एक और स्त्रियों में अपने ही शरीर और अस्तित्व के प्रति हिकारत का भाव पोसती है तो दूसरी ओर स्त्री को स्त्री के खिलाफ खड़ा कर उनकी सर्जनात्मक शक्तियों को नष्ट करती है। इसलिए अकारण नहीं कि मृदुला गर्ग की स्त्रियाँ आत्ममुग्धता से मुक्त हैं (यह आत्म-मुग्धता फेमिनन वाइल्स की जनक है जो पहले स्त्रियों को 'पुरुष-आयटेक' की काम्य भूमिका में उतरने का न्योता देती है, और फिर उन्हें मुग्धा, पद्मिनी, शंखिनी आदि नायिकाओं की कोटि में विभाजित कर अंततः पुरुष के विलास की सामग्री ही बनाती है। मृदुला गर्ग उपन्यास में वरजीनिया-मारियान की माँ- के रूप में ऐसी ही आत्ममुग्धा स्त्री की रचना करती है जो न प्रेम-समर्पण-भावनात्मकता के मूल्य को जानती है, न संवेदनात्मक संवेगों के जरिए संबंधों की हार्दिकता को। मृदुला गर्ग आत्ममुग्धता को आत्म-प्रवंचना का पर्याय भी मानती है। इसीलिए वरजीनिया किसी 'दुर्लभ' को पाने की तृष्णा में जीवन भर रंक बनी रहती है।) और अपराध बोध से भी। वे मानती हैं कि विशिष्ट लैंगिक भूमिकाओं में स्त्री-पुरुष का विभाजन न उन्हें स्वस्थ जैविक इकाई बने रहने देता है, न संवेदनशील-विवेकशील मनुष्य। पुरुष अपनी समग्रता को अधिनायकवाद में केंद्रित कर ले और स्त्री मातृत्व के बहाने प्रजनन की मशीन बन कर रह जाए-जहाँ संबंधों की उष्मा से भरा जीवन नहीं, वहाँ यांत्रिकता, विकृति और विघटन ही शेष बचते हैं। दरअसल नीरजा को गढ़ने के मूल में उनकी यही छटपटाहट सक्रिय रही है। बिना विवाह किए अधेड़ विपिन के साथ रह कर उसे बच्चा देने का अनुबंध स्वीकार करती है मेडिकल साइंस की छात्रा नीरजा-बोहेमियन वृत्ति, प्रयोग का कौतुक या संबंधों के पारंपरिक ढाँचे के प्रति अनास्था -कारण जो भी हो। लेकिन ढाई-तीन बरस के साहचर्य के बाद भी संतान न दे पाना, अनेकानेक मेडिकल टेस्टों से गुजरने के बाद अपनी ही असमर्थता जान कर लगभग विक्षिप्त और हठी हो जाना, मेडिकल विज्ञान की हर संभव तकनीक का सहारा लेकर अपनी बायलॉजिकल अक्षमता को पलटने का संकल्प पराभव टूटन नीरजा विपिन के साथ संबंध नहीं जीती, चैलेंज के साथ दिन ब दिन खुद को छीलती-छलती चलती है। उसकी भरी-पूरी शख्सियत यंत्र-मानव में तब्दील को गई है या फिर-'गिनीपिग' में। मौसम का आह्वान, भावनाओं का ज्वार, मदन-गंध से गंधाता विपिन-उसके लिए सब बेमानी है। सच और मानीखेज है तो उस एक पल की प्रतीक्षा जब पोस्ट कोयटल टेस्ट और ओव्यूलेशन टेस्ट की रिपोर्टें यह तस्दीक करें कि हाँ, अब इस एक खास पल में वह माँ बन सकती है। उसके लिए विपिन नहीं, विपिन का स्पर्म ज्यादा जरूरी है। लेखिका और विपिन दोनों आतंकित हैं नीरजा के इस विघटन से। 'जब सायास, निर्मम बन कर अपने बारे में बेबाक जानकारी दी जाती है, तब न तिलिस्म बचता है, न साहचर्य पैदा होता है।' **(कठगुलाब, पृ.234)**

लेखिका अपनी राय के बावजूद स्त्री-पुरुष संबंध का दारुण अंत इस बिंदु पर नहीं हो सकता। दुख से प्रतिस्थापित होकर मनुष्य अपने संवेगात्मक कोश को दिखाता है, लेकिन तकनीक से प्रत्यारोपित होकर वह संवेगात्मक रिक्ति का ही पर्याय बन जाता है। चयन, वरण, विस्मरण मनुष्य की नेमतें हैं जो यांत्रिकता और जड़ता को छिन्न-भिन्न कर मनुष्य को मनुष्य-निरंतर गतिशील, विकासशील प्राणी-बनाती हैं। इसी मान्यता के कारण विपिन तमाम नैराश्य के बीच भी जीवन के उल्लाय को चिह्नित करने में सक्षम हैं। विपिन को अपना प्रवक्ता बना कर मृदुला गर्ग मानो नीरजा की यांत्रिकताओं को समझा देना चाहती हैं कि 'संयुक्त स्मृति के उन अंशों को जो प्रासंगिक नहीं रहे, हम अस्वीकार नहीं करेंगे तो जड़ हो जाएँगे। सोचने-विचारने, निर्णय लेने लायक नहीं रहेंगे। यानी मनुष्य ही नहीं रहेंगे। मनुष्य बने रहने के लिए संयुक्त स्मृति को संपूर्ण नहीं, चयन करके ग्रहण करना होता है। तुम अच्छी तरह जानती हो, तुम केवल अंडकोश या गर्भाशय नहीं हो, जो उसके सक्रिय न होने पर तुम बंजर हो जाओगी। यह सारा

नाटक तुम मुझे पीड़ा पहुँचाने के लिए करती हो। पर मुझसे ज्यादा दुख तुम खुद पाती हो। यही होता है। पर-पीड़न की परिणति आत्मपीड़न में ही होती है।' **(कठगुलाब, पृ.242)**

मृदुला गर्ग का नारीवाद दो अवधारणाओं के खूँटे से बँधा है। एक, दर्जिन बीबी का जीवन दर्शन कि 'हम औरतें हैं।' हमें माफ करना आना चाहिए। दूसरा स्मिता की आकांक्षायुक्त पीड़ा कि अमेरिका प्रवास के दौरान 'हमेशा कठगुलाब क्यों याद आता रहा मुझे?' ये दोनों अवधारणाएँ-क्षमाशीलता और सौहार्दपूर्ण तरलता-स्त्री की शक्ति और अपेक्षाओं को एक ही प्लेटफॉर्म पर समझने की संवेदना देती हैं। 'मैं मर्द नहीं सर्जक होना चाहती हूँ' जैसे उद्गार में पुरुष को अ-सृजनशील (अ-संवेदनशील) प्राणी बता कर उसकी अधिनायकवादी स्थिति के प्रति स्त्री के असंतोष को ही नहीं रखतीं, बल्कि स्त्री की संपूर्णता को कठगुलाब में प्रतीकित कर मनुष्य से प्रकृति की इस अद्भुत विशिष्ट संरचना को समझने और संरक्षित करने का आग्रह भी करती हैं। स्त्री गुलाब, नीम का पेड़ या किसी भी सामान्य वनस्पति की तरह फूलने, खिलने और मुरझा जाने की समयबद्ध प्रक्रिया में नहीं बँधी है। कठगुलाब की तरह सृजन की हजारों संभावनाओं से भर कर वह खिलने को तैयार है, लेकिन समय, समाज और सहचर की संवेदनात्मक तरलता और आत्मीयता का संस्पर्श पाकर ही। हर प्रकार की दैहिक-भावनात्मक अवमानना उसकी रागात्मकता को अवरुद्ध कर उसे बंजर बना देगी, जैसे पानी की बौछार के बिना मुट्ठी की तरह कसी कलियाँ धीरे-धीरे भूरी से काली पड़ कर नष्ट हो जाती हैं, काठ में तराशे गुलाबों का अकूत सौंदर्य और खजाना असंवेदनशील हाथों में नहीं जाने देतीं। बेशक मृदुला गर्ग स्त्री के उत्पीड़न की कथा कहती हैं, लेकिन उसकी यातना को प्रतिशोध या असृजनशील में विघटित नहीं करतीं। वे प्रकृति के साथ तादात्मीकृत हो कर स्त्री को भगिनीवाद के सूत्र में बाँध कर अपनी जातीय अस्मिता को पहचानने और बचाने का संकल्प देती हैं।

इस प्रक्रिया में यकीनन हर कदम पर उसकी लड़ाई पुरुष की सत्ता और वर्चस्व से है, लेकिन लक्ष्य भी यहीं से होकर गुजरता है कि अपनी क्षमताओं और संवेदना से पुरुष अंतर्मन की सूख कर कठोर हुई जमीन को सींच कर नम करना, उसे मनुष्य (अर्धनारीश्वर) होने का संस्कार देना। जिस सरलता से तीन साल की मेहनत के बाद गोधड़ के वंथाल क्षेत्र को स्थानीय महिलाओं की मदद से हरिया दिया है स्मिता और असीमा ने, और उस बंजर क्षेत्र के भूतल जल स्तर को बड़ा कर पौधों की पच्चीस स्थानीय प्रजातियों के साथ व्यावसायिक लाभ हेतु लहसुन की खेती की जाने लगी है, उस सरलता के साथ पुरुष के भीतर की अधिनायकवादी मानसिकता की कठोर गाँठों को घुला नहीं पाई हैं मृदुला गर्ग। यही नहीं, उनका एकमात्र पुरुष प्रवक्ता-स्त्रीमानस से युक्त विपिन-भी अपनी तमाम कोशिशों के बाद कठगुलाब की तरह सूख गई स्त्री को तरलता की बौछार से हरिया नहीं पाया है। यह अपनी-अपनी ग्रंथियों से न उबर पाने की पीड़ा है? या पितृसत्तात्मक व्यवस्थ की कंडीशनिंग और दबाव जो यथार्थ की दारुण भयावहता के आगे आकांक्षाओं को उड़ान भरने का मौका ही नहीं देते? मृदुला गर्ग का इको फैमिनिज्म प्रकृति को स्त्री की शरणस्थली भी बनाता है और कर्मस्थली भी, लेकिन पितृसत्तात्मक व्यवस्था के शिकंजे से मनुष्य की मुक्ति का प्रयास नहीं करता। शायद इसलिए कि वे मानती हैं स्त्री और प्रकृति की मुक्ति तब तक संभव नहीं जब तक अधिनायकवादी मानसिकता से मुक्त होकर स्वयं पुरुष अपने भीतर के 'मनुष्य' का साक्षात्कार न कर ले। विपिन और स्मिता दोनों को प्रकृतिरूपा यानी सत्य, संवेदनपूर्ण, समर्पित चित्रित करती हैं मृदुला गर्ग। इसलिए दोनों की मुट्ठी में कठगुलाब के बीज हैं-बंजर को हरियाने का सामर्थ्य लेकिन दोनों उन बीजों को मुट्ठी में दबाए अपने-अपने तईं अकेले हैं, रिक्त और अपूर्ण। मृदुला गर्ग इस स्थिति को उपन्यास के केंद्रीय सवाल के रूप में प्रस्तुत करती हैं कि सहचर सहमना न हो तो क्या एक की संवेदहीनता अनिवार्यत: दूसरे के भीतर जड़ता का प्रसार नहीं करेगी?

ईको फैमिनिज्म में प्रकृति और स्त्री (मृदुला गर्ग स्त्री को जैविक इकाई मानते हुए भी पुरुष-प्रकृति से संचालित स्त्री को अपना प्रवक्ता नहीं मानती। स्मिता, असीमा, मारियान, दर्जिन बीबी या नर्मदा के जरिए वे जिस स्त्री की बात करती हैं, वह इसेंशियली 'अर्धनारीश्वर' की परिकल्पना को ही जीती है। इसलिए इन स्त्रियों के समूह में विपिन भी शामिल हैं।) को समरूपा मानकर उन्हें पुरुष/वर्चस्ववादी ताकतों के शोषण के खिलाफ खड़ा करने की मान्यता को नहीं स्वीकारतीं मृदुला गर्ग। वे स्वीकारती हैं कि प्रकृति बेशक अन्याय का प्रतिकार करने हेतु पूरे समाज और समय से टक्कर ले, स्त्री अपने घावों के साथ-साथ प्रकृति के घावों को सहलाने का बीड़ा भी स्वयं उठाती है। यह मिल-बाँट कर अपने दर्द को कम कर लेने का नुस्खा भी है और अपने ही साहचर या कोख से उत्पन्न संतान की ज्यादतियों का प्रायश्चित भी। लेकिन एक टीस भरी गहरी गूँज के साथ वे पाठकों और समय के लिए इस सवाल को अनुत्तरित छोड़ देती हैं कि स्त्री के घावों पर मरहम लगाने के लिए सहचर पुरुष का संवेदनात्मक हाथ कब आगे आएगा? स्त्री कभी बंजर नहीं रह सकती, लेकिन यदि उसकी कोख बंजर रह गई तो इस नुकसान की क्षतिपूर्ति आखिर कौन करेगा?

168, डी-3, नेशनल डिफेन्स अकादमी,
खंडकवासला, पूना-411023(महा.)
मो.-9552879225

लोक के राम

– सुमन चौरे

जन्म –22 जून 1948।
जन्म स्थान –कालमुखी (म.प्र.)।
शिक्षा –एम.ए., पीएच.डी।
सम्मान –म.प्र. साहित्य अकादमी सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

पिछले ही साल की घटना रही होगी। हमेशा की तरह सोमवार के दिन घर के सामने की सड़क पार करके बड़े से आँगन में लगी पंचवटी के नीचे कच्चे चबूतरे पर विराजमान शंकरजी को कलश से जल चढ़ाया और प्रणाम किया। इसके बाद जैसे ही मैं पीछे मुड़ी तो चबूतरे के नीचे हाथ में लम्बी–सी लाठी के सहारे खड़ी हुई वृद्धा दिखी। उसने मुझे देखते ही बोला 'जय सियाराम बाईजी, रुप्पया–दो रुप्पया देते जाओ, रामजी की तुम्हारा भला करेंगे।' मैंने तुरन्त ही चौकी की ओर पलट कर देखा, शिवजी और नन्दी के अलावा कोई और प्रतिमा नहीं थी। इनके साथ बस एक त्रिशूल पर डमरू लगा था। कोई तस्वीर भी नहीं लगी थी। मुझे अपने आप पर ही हँसी आ गई कि मैं किस भाव से जल चढ़ाकर आई? मेरी ईश्वर के प्रति श्रद्धा मुझे ही थोथी लगी इस महिला की आस्था के आगे। जिसने शिव के द्वारे खड़े होकर राम की दुहाई दी। मैं समझ गई यही लोक विश्वास, लोक आस्था है'सीताराम मैं सब जग जानी'। यही है, लोक के राम।

लोक के अन्तर्मन में जागृत हुई श्रद्धा और आस्था भरी कामना ही लोकव्यवहार का मूल है। यहाँ लोक लालसा, लोक कामना, लोक दर्शन, लोकानंद है जो लोक अपने आपको राममय पाता है। इस धरा पर पुरुषोत्तम राम के आदर्श जीवन और उनके राम राज्य को अनुभूत कर भारतीय लोक संस्कृति राममय हो उठी है।

राम का हर रूप हर अवस्था लोक को अपनत्व का बोध कराता है, लोक ने अपने संस्कारों में अपनी परम्पराओं में राम को हर पल, हर क्षण अपने निकट पाया है। मैं निमाड़ की समृद्ध लोक संस्कृति में बसे राम की चर्चा करुँगी। 'निमाड़' मध्य भारत का एक प्रमुख लोक सांस्कृतिक क्षेत्र है। यह मध्यप्रदेश के दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र में स्थित है। निमाड़ की पश्चिमी सीमा पर गुजरात है और दक्षिणी सीमा पर महाराष्ट्र का खानदेश क्षेत्र है। सीमावर्ती क्षेत्रों का प्रभाव निमाड़ की संस्कृति और बोली है। निमाड़ की बोली 'निमाड़ी' है, जो 500 वर्षों से अधिक समय से प्रचलन में है।

निमाड़ की लोक संस्कृति राममय है।निमाड़ में जन्म संस्कार से पूर्व एक लोक व्यवहार होता है। गर्भाधान के सातवें मास या नवमें मास में गर्भिणी की गोद भरी जाती है, इस अवसर पर 'साध' गीत यानी संतान पाने की अभिलाषा के गीत गाए जाते हैं। इन गीतों में तो कामना होती है कि जन्म लेने वाली संतान राम जैसी ही हो या राम ही हो। लोक में जन्मे शिशु को राम–कृष्ण के रूप में ही देखा जाता है। गीत के अंश हैं–

कुल देवी सी करुं अरदास
म्हारा घर राम जलम
राम जलमस् नस् भरत जलम
राम जलमस् तो राम राजस्चलाव
दीन दुखियाँ को करऽ उद्धारऽ ... राम जलम

हे कुल देवी माता, आप से प्रार्थना है, अरज है कि हमारे घर राम जैसा और भरत जैसा पुत्र उत्पन्न हो। राम राज चलाएगा और दीन दुखियों का पालन कर जगत का उद्धार करेगा।

लोकगीतों में राम जैसे पुत्र की कामना और राम जैसे आचरण को तीव्र लालसा, उसकी अपनी संतान के लिए रहती है। यह भाव लोक का राम अपनत्व भाव है, राम जैसे पारिवारिक, सामाजिक व्यावहारिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन की अपेक्षा और आज्ञापालक संतान की कामना लोक माता करती है। पहले तो प्रसूतियाँ घरों में ही होती थीं। तब जन्म लेते ही शिशु के दोनों कानों में राम बोला जाता था। राम ही पहला शब्द होता था, जो शिशु सुनता था। उसी से राम नाम की ऊर्जा का संचार शिशु में हो जाता था।

लोक में संतानोत्पत्ति के अवसर पर जो बधाइयाँ गाई जाती हैं। उनमें दशरथ को दी बधाई पहले गायी जाती है। महल हो अट्टालिका हो, या झोपड़ी हो, संतान के जन्म पर जो बधाई गाई जाती है वह एक ही भाव की होती है। चारों भाइयों और सीता सहित तीनों बहिनों के नाम भी बधाई में लिए जाते हैं।

बधावागीत के अंश हैं –

आजऽ तो बधाई, राजाऽ दशरथ रायक्याँऽ
चम्पोफूल्योमोंगरोफूल्यो अति सुख पायऽ केऽ

राणी कौशल्या असी फूली, रामचंद्रस्जाय केऽ
राणी कैकेयी असी फूली भरत लाल जाय केऽ
गेंदोफूल्यो, दवणोंफूल्यो, अति सुखस्पाय केऽ
राणीसुमित्राअसी फूली लखन लाल जाय केऽ
राणीसुमित्राअसी फूली सत्रुघनजाय केऽ
आजस् तो बधाई, राजास्जनकरायक्याँऽ

राजा दशरथ के यहाँ आज बधाई आ गई है। चम्पा फूल उठा है, मोंगरा फूल उठा है अति सुख पाकर, रानी कौशल्या अति आनंद से फूल उठी हैं, रामचंद्र जैसे पुत्र को जन्म देकर। राणी कैकेयी ऐसी ही आनंदित हो गई हैं भरत जी को जन्म देकर। गेंदा फूल उठा है, दवणा फूल उठा, ऐसे ही रानी सुमित्रा आनंदित हो उठी हैं। लक्ष्मण और शत्रुघ्न जैसे पुत्रों को जन्म देकर, पाकर।

बाल सुलभ भाव के लोक को नर–नारायण का भेद तनिक भी नहीं बूझता है। राम ही लोक देवता हैं, जहाँ हर अवसर पर पहले राम को स्मरण किया जाता है। विवाह केशुभारम्भ के अवसर पर लगीण टीप लिखी जाती है। उस अवसर पर जो बधावा गाए जाते हैं, उसमें सबसे पहला बधावा सिया–राम के लिए ही गया जाता है।
गीत के अंश हैं –
खुशी भई नऽ म्हारा मन की
आज बधाई सिया राम की
राजा दशरथ नऽ रत्न लुटाया
हाथी घोड़ा पालकी
राजा जनक नऽ गौआ छोड़ी
स्वर्ण सींग जटित दा की
आज बधाई सीया राम की।
राणी कौशल्या नऽ माणिक लुटाया
हीरा मोती थाल लाल भी
राणीसुनैना नऽ वस्त्र लुटाया
रेशम जरी नऽ मसरू थान की
आज बधाई सीया राम की

मेरे मन में आनंद छा रहा है। आज सीता राम के विवाह की बधाई इस अवसर पर राजा दशरथ ने रत्न, हाथी, घोड़ा, पालकी सब लूटा दिये।राजा जनक ने गोशाला में बँधी स्वर्ण सींग जड़ित दूध देने वाली एक लक्ष गायें सियाराम के विवाह की बधाई में दान कर दीं। राणी कौशल्या ने माणिक मोती और हीरे जवाहर लाल थाल भर–भर कर लुटा दिए हैं। रानी सुनैना ने जरी मशरू रेशम के वस्त्रों के थान के थान ही दान कर दिए। आज राम सीता के विवाह की हर्ष और आनंद की बधाई है।

निमाड़ की वैवाहिक परम्परा में विदाई के बाद जब बेटी अपने ससुराल जाती है तब जनवासा से घर जाते समय यह बधावा गाया जाता है। इसमें दूल्हे की बहन और बुआएँ राम और सीता की ओर से संवाद करते हुए गाती हैं।
बधावा गीत के अंश–
सोन्ना रुप्पा का घड़ा घड़ी स्लणऽ
रेसम लम्बीऽ डोरऽ
सीता ववूऽ पाणी खऽ संचर्या।
घड़ो उठावतऽ सीस पल
रामचंद्र आड़ा हो फीरी गयाऽ
कौन सा राय नीऽ डीकरीऽ नऽ कहो तुम्हारा नावऽ
कोणऽ सा देस का वासिया।
राजा जनक की डीकरीऽ नऽ सीता हमारो नावऽ,
मीथिला जो नगरी वासिया।
सोन्ना रुप्पा का चेंडू पाटलाऽ
रामचंद्र खेलणऽ जायऽ सीताराम आड़ा फिर गया।
कोणऽ सारायनाऽ डीकरानऽ कहो तुम्हारा नावऽ
कोण सा राज का वासिया
राजादशरथ ना डीकरा नऽ रामऽ हमारोनावऽ
अजुध्या जो नगरी का राजवईऽ
सोना–चाँदी के घड़े और रेशम की लम्बी डोर लेकर सीता बहू पानी भरने गई। उन्हें देखकर रामचंद्र जी ने उनका रास्ता रोक कर पूछा, तुम किस की बेटी हो, तुम्हारा नाम क्या है, और किस देश की रहने वाली हो? हे राजकुमार, मैं राजा जनक की पुत्री सीता हूँ। मिथिला नगरी में रहती हूँ।

सोना–चाँदी के गेंद और पाट लेकर रामचंद्र खेलने जा रहे थे, सीता ने उनका मार्ग रोककर पूछा? तुम किस राजा के पुत्र हो, तुम्हारा क्या नाम है और कहाँ निवास है? रामचंद्र उत्तर देते हैं, हम राजा दशरथ के पुत्र हैं, हमारा नाम राम है। हम अयोध्याराज्य के वासी हैं। इस प्रकार लोकराम सेतादात्म्यभाव स्थापित कर अपना पारिवारिक संबंध जताते हैं।

मैं कुछ वर्ष पूर्व मिथिला सांस्कृतिक क्षेत्र के अंदरुनी अंचल में प्रचलित वैवाहिक परम्पराओं के अध्ययन के लिए गई थी। विवाह संस्कार में शामिल होकर प्रथाएँ देखीं। मधुबनी जिला के दो अंदरूनी गाँवों, कटैया औरगम्हरिया में प्रचलित वैवाहिक परम्पराओं और लोकगीतों में जाना कि प्रभुराम से सीता जी प्रश्न करती हैं कि हर घड़ी मैंने केवल आपका ही स्मरण किया तब मेरा त्याग क्यों किया। सत्य तो धरती माता जानती हैं। हे राम, अब आपके लिए परीक्षा की घड़ी है। एक लोकगीत में यह भीगाया जा रहा था कि मिथिला की बेटी अजुध्या में नहीं ब्याहेंगे।

निमाड़ में भी एक ऐसा लोक गीत है, जिसमें सीता अपने स्वामी राम से प्रश्न करती हैं।
गीत के अंश हैं –
असी काई विपदा आई स्वामीऽ
रामऽ मखऽ धोखाऽ सीवनऽ मऽ पठाईऽ

सतऽ तो म्हारी माता धरा जाणतीऽ
सतऽ धराऽ मऽ सीताऽ समाईऽ
रामऽ नयननऽ नीरऽ ढळाईऽ

हे स्वामी ऐसी क्या विपत्ति आ गई कि तुमने मुझे धोखे सेवन में भेज दिया।... सत्य तो मेरी माता धरती ही जानती है। धरा में सीता समागईं। राम के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली।

जीवन के हर संकट के क्षण में राम के साथ खड़ी सीता के त्याग की घड़ी राम और राम के मर्यादा पुरुषोत्तम राजा होने के बीच के अन्तर की सबसे गहन परीक्षा की घड़ी थी। लोक ने राम को सीता से कभी भी पृथक नहीं समझा। मुँह से राम शब्द निकलने पर भी लोक के मन मस्तिष्क में सियाराम ही रमता है।

राम लोक जीवन की श्वास-प्रश्वास में ऐसे समाए हैं कि निमाड़ क्षेत्र में तो संबोधन, अभिवादन भी 'जै राम की' की कहकर किया जाता है। यहाँ के जन के अचेतन मन में भी राम ऐसे समाए हैं कि नन्हें बालक-बालिकाएँ भी राम की आपत्ति-विपत्ति पीड़ा से स्वानुभूत हो उठते हैं। बालपन से ही राम की इसी संवेदना के बीज बालगीतों में सुनाई देते हैं। यह घर-घर में सुनाई जाने वाली राम कथा, राम लीला और मंदिरों में श्रीमद्रामायण पाठ का प्रभाव ही है। राम को बच्चे अपने जैसा ही समझते हैं। राम के प्रति अपनापन दर्शाते हुए बालकों के झूले के बहुत से गीत हैं। ये लोकगीत बच्चे खेलते हुए और झूले झूलते हुए एक साथ गाते हैं। रामलीला में वन गमन के प्रसंग को देखते समय बच्चे और उनकी माँ के संवाद के रूप में बच्चे एक साथ गाते हैं-
गीत के अंश-
राम चल्या वन खऽ माता
हम भी चली जावाँगाऽ
बेटा तूखऽ तीसऽ लगऽगा
पाणी काँऽपावऽगा
लईजावांगा झारीऽकळश्याऽ
पीताऽ चली जावाँगाऽ
रामऽ खऽ नीऽछोड़ाँगाऽ

हे माता, रामचंद्र वन को जा रहे हैं, हम भी उनके सथ चले जाएँगे। माता पूछती हैं। हे पुत्र तुम्हें प्यास लगेगी तो पानी कैसे पीयोगे? हे माता हम लोटा झारी ले जाएँगे, उसी से जल भरकर पानी पीते-पीते चले जाएँगे। किंतु राम को अकेला नहीं छोड़ेंगे। उनके साथ ही वन चले जाएँगे।

लोक ने राम भक्त शबरी की महिमा भी गाई है। भील बहुल निमाड़ क्षेत्र का एक लोक भजन का अंश है -
शबरी तू बड़ऽ भागेणऽ
रामऽ तुखऽ ढूँढी रह्याऽ
तुनऽ उनखऽ चाखी चाखी बोर खवाड़्याऽ
लछमणऽ का तो ई मनऽ नी भायाऽ
रामऽ कयऽ सुणो वीरा ई भीलेणऽ नी होयऽ
या तो छे म्हारी उच्ची भगतेणऽ
राम तुखऽ ढूँढ़ी रह्याऽ
हे शबरी! तू बड़ी भाग्यशालिनी है। श्रीराम तुझे वन में ढूँढ़ रहे हैं। हे शबरी! तू प्रभु को बेर चख-चख कर खिला रही थी। भाई लक्ष्मण को शबरी के जूठे बेर खाना अच्छा नहीं लगा। तब राम ने कहा, 'हे भाई! यह केवल जाति की भीलनी नहीं है, यह तो मेरी परम भक्त है।' वनवास में भगवान् ने शबरी को भी तार दिया।

लोक के राम आमजन की तरह ही आचरण करते हैं। राम के आदर्श का सम्बल भाई भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न रहे हैं। सीतामैया की खोज में हनुमन्त ने जो भक्ति भाव का परिचय दिया, ऐसा ही भाव लक्ष्मण का भी वनवास काल में साथ रहा। जब लक्ष्मण को शक्ति लगी, तब राम विकल हो उठे। करुणावतार इतने द्रवित हो उठे कि भाई को गोद में लेकर विलाप कर रहे थे। उस रुदन को सुनकर लग रहा था कि स्वयं करुणा भी करुण हो उठी है। वे पछतावा कर रहे थे कि ऐसा भाई इस संसार में फिर पैदा नहीं होगा, ऐसी माता जिसने अपने पुत्र को भाई के लिए न्योछावर कर दिया ऐसी माता नहीं होगी दूसरी। ये गीत भी बच्चे रामलीला के लक्ष्मण को शक्ति लगने के प्रसंग व अन्य अवसरों पर एक साथ मिलकर गाते हैं।
गीत के अंश-
तुखकुण नऽ मारयो बाण
बतई दऽ रेऽ लछमणवीरा
ओको करुँ धरती सीऽ नास
बतई दऽ रेऽ लछमणवीरा
हाऊँअजुध्या कसो जाऊँगा
उर्मिला खऽ काई दई समझाऊँगा
रड? सुनैना मात
बतई दऽ रेऽ लछमणवीरा

हे मेरे अनुज, तुझे किसने बाण मारा है? तू मुझे बता दे, मैं उसका धरती से नाश कर दूँगा। हे भाई, तेरे बिना मैं अयोध्या कैसे जा सकता हूँ? उर्मिला के सामने कैसे खड़ा हो सकूँगा। उसे उसकी माता सुनैना (सुनयना) भी तो पूछेगी, कि उसकी बेटी का पति कहाँ है? क्या उत्तर दूँगा मैं? हे भाई, तू एक बार तो आँख खोल और कुछ शब्द तो बोल, तुझे किसने बाण मारा है?

भाई से भाई का ऐसा प्रेम संबंध निज भाव देखने को सुनने को नहीं मिलता है। इस प्रसंग के बाद घोर युद्ध हुआ। राम ने रावण पर विजय प्राप्त की। राम अपने साथ सीता और लक्ष्मण सहित लंका से अयोध्या लौटे। उन्होंने वचन का पालन किया। उनका राज्याभिषेक हुआ। दशहरा त्योहार

के दिन बनाए जाने वाले भूमि चित्र को निमाड़ी में 'दसरायोमाण्डणों' कहते हैं। यह घर के आँगन में माँडा जाता है।

राज्याभिषेक के बाद का जीवन भी राम के लिए कठिन रहा। लोक यह भी जानता है कि सीता के त्याग के बाद राम भी किसी तरह से सुखी नहीं थे। वो समय उनके लिए बड़ा दुष्कर था। वे भी राजमहल में सभी सुखों को त्याग कर तपस्वी की भाँति रहे। केवल सीता ही उनके हृदय में रहीं। प्रजा और समय की हरेक कसौटी पर राम और राजा राम खरे उतरे। संभवत: सीता के त्याग के प्रसंग को लोक अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सीख के रूप में आगे बढ़ाता गया।

सीता मैया के देह त्याग के विषय में अनेक अंचलों में लोक मान्यता है कि ऋषि वाल्मीकि आश्रम से बाहर आने पर राम की आँखों में देखते हुए सीता उनमें ही समा गईं। राम भी नि:शक्त होकर लड़खड़ाकर गिर पड़े। सीता ही राम की शक्ति थीं। सीता के जाने के बाद राम शक्तिहीन हो गए। तथापि वे सतत्प्रजाहित में अपने धर्म का पालन करते रहे।
रामकोलोक ने कैणात (कहावत) में भी अपना लिया है जैसे–
राम की लाकड़ीमंऽ आवाज नीऽ होती हाईऽ।
राम नाव की लाकड़ीमंऽजीभ नीहाँईऽ
राम नांवऽ को दगढ़ा भी तीरजऽ
राम शक्ति और शक्ति संचार का द्योतक भी है, निर्बल के लिए यह न कहकर कि वह अशक्त है उसके लिए एक लोक सूक्त है-
ओकऽ सरीरमंऽ राम नीहाँईऽ
अर्थात उसके शरीर में राम नहीं हैं, शक्ति ही राम है।
राम नीऽ होय तो जीव नीस्होयऽ
राम ही जीवात्मा है। लोक ऐसा रमा है राम में।
जब किसी में मतभेद हो जाता है तो कहते हैं थारो रामऽ, ओकोऽ रामऽ कोई भेदयोनीहाँईऽ अर्थात तेरा रक्षक उसका रक्षक एक है, उसमें भेद नहीं है।

लोक ने राम नाम के जाप को सरल साधना का मंत्र माना है। राम नाम से संबंधित बहुत से लोकाचार, लोकव्यवहार और लोकाचरण जीवन को प्रभावित करते हैं। सत्याचरण, मातृभक्ति, पितृाज्ञाभ्रात प्रेम, राज्य शासन और एक पत्नी धर्म की बात होती है तो लोक में उदाहरण दिया जाता है कि बेटा पुत्र हो तो राम जैसा।

लोक ने न वेद पढ़े, न उपनिषद पढ़े, न वह आरण्यक ग्रंथों के विषय में जानता है, न लोक ने ब्राह्मण ग्रंथों के बारे में सुना है पर लोक राम नाम की महिमा जानता है। उठते-बैठते, काम करते-करते राम नाम लेता रहता है। वह गाता है गुनगुनाता है–हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। लोक तो बालपन से या कहें तो माता के गर्भ से ही यह महामंत्र हृदय उतार लेता है। ठाकुर जी के मन्दिर की प्रभातफेरी हो या फिर अखण्ड नाम कीर्तन यह महामंत्र झानमिरथिंग के साथ सस्वर गाया जाता है। कार्तिक मास और वैशाख मास में तो आनन्द में वृद्धि हो जाती है। आठ प्रहर यानी चौबीस घण्टे का नाम संकीर्तन होता है। वर्षाकाल में बुवाई करने के बाद किसानों को खेती-बाड़ी का बड़ा काम नहीं होता था। तब 'राम सत्ता' हुआ करती थी। 'रामसत्ता' यानी 'रामकीसत्ता' 'रामराज'। इसमें सातों दिन आठों प्रहर खड़े रहकर अखण्ड राम नाम संकीर्तन होता था। आसपास के सात गाँव कीटो लियाँ गाती थीं। हरे कटोली एक-एक पहर गाती थीं। इसलिए इनटोलियों को 'पैरावाले' कहते थे। लोक को यह नहीं पता कि यह मंत्र उसकी जिव्हा पर कैसे आया। सहस्त्रों वर्षों से यह मंत्र लोक गाते आ रहा है जपते आया है। यह मंत्र कलिसंतरणोपनिषद का है, जिसे ब्रह्माजी ने बताया था।

नारदः पुनः पप्रच्छतन्नामकिमिति। स होवा च हिरण्यगर्भः।
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
इति षोडषकंनाम्नांकलिकल्मषनाशम्। नातः परतरोपायः सर्ववेदेषुदृश्यते।
इति षोडश कलावृतस्यजीवस्यावरणविनशन्म।
ततः प्रकाशते पर ब्रह्म मेगायाये रवि रश्मि मण्डलीवेति।
देवर्षि नारदजी ने ब्रह्माजी से पुनः प्रश्न किया, पितामह! वह कौन सा नाम है जो कलियुग में मनुष्य के पापों का नाश करेगा। तदुपरान्तहिरण्यगर्भ ब्रह्माजी ने उत्तर दिया, हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे का जप कलिकाल के महापापों का विनाशकरने में सक्षम है। इससे श्रेष्ठ कोई सरल उपाय वेदों में दृष्टिगोचर नहीं होत है। इन षोडश नामों के द्वारा षोडश कलाओं से आवृत्त जीव के आवरण समाप्त हो जाते हैं। जिस प्रकार मेघ के विलीन होने पर सूर्य की किरणों ज्योतिर्मय होने लगती हैं, वैसे ही परब्रह्म का स्वरूप भी दीप्तिमान होने लगता है।

संस्कृति और परम्पराओं को इतिहास से एक साथ बाँधने वाली कई प्रथाएँ और लोक गीत लुप्त होते जा रहे हैं। लोक के अपने प्रभु से एकत्वदर्शा ने वाले भावों की सरिता है लोक संस्कृति। सूर्य में तेज, चाँद में शीतलता, अग्नि में दाह, धरा में धैर्य और वायु में गति, ऐसे ही लोक के प्राण में समाए हैं राम, लोक के रोम-रोम में बसे हैं राम।

लोक ने राम को अवतार रूप में या देव रूप में नहीं देखा, ना ही स्वीकारा। लोक ने राम को लोक मानव मान कर अपनी कसौटी पर कसा। राम को अपने ही बीच पाया और अपना ही समझा। लोकदृष्टि सूक्ष्म भी है, विराट भी है। वह राम के बिना नहीं रह सकता। इसलिए अन्त में कह उठता है– राम नाम सत्य है।

फ्लेट नं.-202,श्री चामुण्डेश्वरी एलाइट,
प्लाट नं.-15,16,17, मुकुन्द रेसीडेन्सी के सामने,
डी.एल.आर. एंक्लेव, सैनिकपुरी,
सिकन्दराबाद-500094, तेलंगाना

गेहूँ

– नर्मदा प्रसाद सिसोदिया

जन्म – 3 जनवरी 1954।
शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – देश की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में ललित निबंध का निरंतर प्रकाशन।

अरे! ये हुलस भी कितनी नानी सी है कि हम कहते आ रहे हैं कि– 'दाने–दाने पर खाने वाले का नाम लिखा होता है।' तो गेहूँ के बीज के भीतर विराजमान स्वत्व अंश पर भी नाम लिखा होता है। चलो! आओ हम बात करते हैं कि भला! गेहूँ के 'दाने–दाने' के भीतर विराजमान स्वत्व अंश से टीसती संस्कृतियों के आदर सम्मान करने की भोली भावना की मौलिकता की पवित्री हमारे हृदयतंत्री के किस कोने में अपना राग अलाप रही है।

लोक की डबडबाई स्मृति का रागरंग भी अथाह है। हाँ, थाह लेना बड़ा कठिन है। पर! वे राग रागनियाँ थपथपाती हैं तो कड़े अनुभव से सृजित यह लोकाचार अपनी मौलिकता में नदी की 'कल–कल' करती धारा सृदश प्रवहमान है। हाँ, हमारी आस्था ने अपनी सहजता में अनुकरण किया है। सो लोककंठ से अनुनय, विनय के साथ सावन सुदी नवमी के दिन गेहूँ के बीज दौने, कोरी कुरकई में बोने की चौकसी हो रही है। मजोटा, उसारी, आँगन, ओटला की सफाई, लिपाई, पुताई हो रही है। हाँ, गुनगुनाते हुए गुणगान करते हुए विषेष चौकसी हो रही है। साफ–सफाई के साथ–साथ आपस के आचार–विचार चोखा–चोखा रखने की हिदायत दे रही है 'आजी माई।' अच्छी भावना रखने से समृद्धि, खुशहाली के सगुन सामने आते हैं। नेक बातों का ध्यान रखा जा रहा है। हाँ, खुशहाली का दिन है आज। माटी में थोड़ा गोबर का करसा मिलाकर एक दिल कर रहे हैं। फिर बिने–चुने गेहूँ के बीज नोनी–पोनी सी माटी में मिलाए हैं। इस एक रस पंचमेवा को खाकर के नौ दौने में या नौ कोरी कुरकुई में थोड़े–थोड़े छोड़ दिये। और ऊपर से हलका–हलका पानी का छिड़काव कर दिया है बस! सुबह–शाम देख–परख हो रही है।

पर! थोड़ी सी भी बेपरवाह भावना ने अनचाहा पानी का छिड़काव किया कि माटी ने पट बाँध लिए तो भला! कैसे! फूटेगी पोंई। और यदि दो दिन की अनदेखी होने से पानी का छिड़काव नहीं हो पाया तो बस! नमी सूख गई कैसे! होगा सोलह आना अंकुरण। चलो यदि अंकुरण हो भी गया और फिर ज्यादा ही लापरवाही हुई तो अंकुरित पौधे मुरझा जाएँगे। बीज के अंकुरण जानने–समझने का यह लोक विज्ञान कितना मौलिक है कि खाकर के दौने या कोरी कुरकुई में ही बीज डाले जाते हैं हाँ, इनमें से पानी रिसता रहता है। यदि चमचमाते स्टील के कटोरे में बीज डाल दिए तो अंकुरण तो हो जाएगा पर! दो दिन बाद ही सारे अंकुरण उमल जाएँगे। भला! स्टील के कटोरे से पानी कैसे रिसेगा। तो सोलह आना अंकुरण के लिये चौकस रहना पड़ता है–समय पर अनुकूल पानी, खाद, हवा, प्रकाश मिलना चाहिए फिर देखें कि तीन चार दिन में ही ये खाकर के दोने या कोरी कुरकई पीले–पीले अंकुरण से महमहा उठते हैं।

निरमल मर्यादा की चौकसी में सृजित ये पीले–पीले अंकुरण को देखकर भला! निस्पृह आत्मीयता से भाव विभोर हो जाना सहज ही है सो हृदय की मुक्तावस्था उत्सव का रूप ले लेती है 'उत्सव प्रिया: खलु मनुष्या:।' तो हम जानते हैं कि सावन का रासरंग भुजरिया के त्यौहार के रूप में प्राणवंत हो उठता है। पिछले दिन से जो उत्सव लोक अनुशासन से घर के भीतर ही आयोजित हो रहा था वह उत्सव आज भादौं बदी एकम् के दिन आँगन में अभिव्यक्त हो रहा है। सो तुलसी क्यारा के आश्रय में गेहूँ के आटे के चौक पूरे जाते फिर ठुमा दो ठुमा गेहूँ के दाने रखे जाते। इन गेहूँ के दानों पर कलश रखा जाता। 'कलशष्य मुखे विष्णु: कण्ठेरुद्र: समाश्रिता: . . .।' हाँ, यह भूपृष्ठ ही भुजरिया का पूजा स्थल है। तो कोरी कुरकई और खाकर के दोनों में अंकुरित पीले–पीले 'भुजरिया' की माता बहनें पूजन करतीं। फिर मंगल बाद्य बज उठते पुरुष और महिलाएँ अपने–अपने समूह में गाते–बजाते हुए नदी, तालाब के घाट पर 'भुजरिया' सिराने जाते हैं। हाँ, लोक अनुशासन से देवधामी की चैतरिया पर भुजरिया अर्पित की जाती। और फिर गेहूँ के ये पवित्र तृण 'भुजरिया' एक दूसरे को भेट करके सद्भाव और मेल मिलाप का माध्यम बन जाते हैं। बोली बानी फूटती है–'भैया! भुजरिया बहुत अच्छी लग रही है।' मंगल कामना करते हैं कि सबके घर के भण्डार गेहूँ से भरे रहेंगे। गेहूँ के बीज का अंकुरण बहुत अच्छा हुआ है। भैया! गहरी स्मृति ने पड़ी हुई कविता

उसकार दी–

'एक बीज था गया बहुत ही गहराई में बोया,
उसी बीज के अंतर में था नन्हा पौधा सोया।
उस पौधे को मंद पवन ने जाकर पास जगाया,
नन्हीं, नन्हीं बूँदों ने फिर उस पर जल बरसाया।।'

भला! सद्भाव हमारी ताकत है और इसी सदाचार से हमने कोठी, पेवला, बंडा, बुखारी में रखी सरवती, कालाशूकला, जलालिया गेहूँ की किस्म के बीज का अंकुरण जान लिया है। बस! अब एक–एक करके–आर्द्रा, असलेषा मघा, हतिया, चित्रा। नक्षत्रों को गुन रहे हैं। इन नक्षत्रों में वर्षा की बूँदों के गिरने से वनस्पति खरपतवार पर पड़ने वाले प्रभाव को भी गुन रहे हैं। तो देख रहे हैं कि मेड़–खोड़ में काँस में गवोट आ गई है–और पोला हुई कि–'पानी गेला' हाँ, चहुँओर धरती धौली फट दिखाई देती है–'फूले काँस सकल महि छाई।' फिर चौपाल बोल पड़ती है–'ऋतु आ गई।' रूजगारी भी ठुमुक उठते हैं। किसान तो टकटकी लगाए खड़े ही थे बस! फिर उजाली ने टुक भर दी है सो खेत की जुताई हो रही है। माटी पलटाई जा रही है। अलटा–पलटी की जुताई होती है। माटी को घाम खिलाना होता है। 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।' भला! सूरज का तेज माटी में पर्यवसित होता है। माटी को नोनी–पोनी करने के लिए फिर जुताई होती है तो दोंगली, दिवाला, फुलेरा, काँस, कुंदा, समेल जैसे खरपतवार माटी में एकाकार हो गये। हाँ, काली, दोमट, कछारी माटी में मिलकर गेहूँ की अच्छी पैदावार बढ़ाने के लिये उबरक हो गए हैं। सूरज, हवा, पानी, वृक्ष वनस्पतियाँ तो लोक कल्याण के संस्कार रचते हैं। हाँ, गेहूँ की बोनी के अनुकूल माटी ने संस्कार रचे हैं।

खेती किसानी के संस्कारों की सरणियाँ रह–रहकर हुलस भरती रहती हैं। उमड़ती–घुमड़ती स्मृतियाँ उजलती हैं हाँ, हिरनी ठेक आती है कि कही से कुआँ की गड़गड़ाडू की घरघराहट आती। और अपने ही घर में माँ, भौजाई घट्टी की मानी बिठाती तो उजाला होते तक कुड़ा चारपाई गेहूँ पीस लेती। पर! गेहूँ पीसते–पीसते जीवन की व्यथा गीत बनकर गाती हैं–हाँ, सूखी खेती थी उन दिनों सो माटी में नमी बनी रहने की चिन्ता थी और ऊपर से गेहूँ के बीज की चिन्ता सताती थी। माटी का निमान गुनें कि बिजाई की बाट जुहें। बड़ी हबड़–दबड़ होती थी। मेड़ पड़ोस के गाँव डोलरिया के 'बसया' दादा के घर बिजाई के गेहूँ की बात करने जाते थे। यदि बिजाई से गेहूँ देने की हामी भरी तो उनके बिन्डा बुखारी खुलने के दिन बैलगाड़ी लेकर जाते तो घंटों बैठे रहना पड़ता। फिर कालाशूकला, शरबती, जलालिया, जैसे गेहूँ के मिलने की बात तो सपने में नहीं सोची होगी। हाँ, बिजाई में मिला खिचड़ा गेहूँ। और उसमें मट्टी, कुट्टी रजी, छारी अलग। घर लाकर साफ करो तो चारमन गेहूँ में से एक मन कचरा मट्टी का निकलता था। अब बिजाई तो बैशाख में चार मन गेहूँ की ड्योटी छः मन तो देना ही पड़ेगा। इन आँसुओं को भीतर–भीतर समा लेते थे भला! दूर–दूर तक कौन सुनने वाला था उन दिनों।

पर! मछन्दरी माई का पेट भरना ही है। भला! यह कैसा अनुराग कि पेट काटकर भी खेती माई की बोनी करनी है। हाँ, क्वार की चाँदनी की आव में ही बस! भुनसारी रात दो, दो कुड़ा की पोटली सिर पर रखकर सुदाव से चल पड़ते 'तालाब' वाले खेत की ओर। फिर आगे–आगे बैलों के कंधों पर जूड़े में दूफन लटकी होती। दिन ऊगती दिशा में 'बहेड़ा बाबा' की तरफ थोड़ी लाली ही दिखी कि डुली में मैंने स्वयं गेहूँ भरे कि बड़े भाई अनूप सिंह के सधे हाथों से दूफन चल पड़ती। तो दूफन की डबरू में मैंने स्वयं उरैया बनकर मुठी से नपे–तुले गेहूँ के बीज छोड़े हैं। दो चार फेरे हुए कि दूफन रोककर देखते थे कि दाने 'टीप' पर गिरे या नहीं। कुछ कमी–बेसी दिखी तो दूफन को 'सेव', 'करार' करना पड़ता था। अपने लोकविज्ञान का प्रयोग करके देखा और फिर दूफन चल पड़ती। पर! लोकानुराग का मान सिर आँखों पर होता था। हाँ, चलती बोनी के बीच कोई नेग लेने आता तो दुफन रोककर बिना नपे तुले अंदाजन गेहूँ उनकी झोली में उरेल देते। सोनखेड़ी से सिरे वाले दादा सिर पर पगड़ी बाँधे आते तो बिठाकर हाल चाल पूछते फिर उन्हें नेग देते हुए भैया कह देते–'आज अच्छा शगुन हुआ है।' और शगुन यही कि हमारी बोनी हुई कि नाजी पूजा करके पिताजी सिंगाजी घी चढ़ाने जाते हैं। और इधर पटेल दादा जी की बोनी पिछमनी हो रही है सो उनके खेत में बोनी करने 'लासिया' जाते। हाँ, उनके खेत में एक साथ पाँच, दस नाजी चल पड़ती तो 'हलूर' की राग–रागनियाँ उमड़तीं घुमड़ती फूट पड़ती हैं :–

'साहब सिंगाजी जायनी बस्या बड़ी दूर,
हम तो देख्या बड़ी दूर, पाया नी पार,
आवन, आवन कहीं तो गया, पाया नी पार,
साहब सिंगाजी जायनी बस्या बड़ी दूर।।'

तो जीवन की राग–रागनियों ने मेरी कच्ची उमर में ही तादात्म्य रच लिया था सिवनी मालवा में पढ़ाई के दिनों में एक कुढ़ा गेहूँ चक्की से पिसाकर लाते समय सड़क किनारे की दूब पर पोटली गिरने से आटा गिर गया था दूब को पवित्र मानकर फिर सकेलते हुए कितना रोया था। साल भर परिवार के भरण–पोषण के लिए गेहूँ पुराने की कठिनाई की समझ भी ना समझी की उमर में उमग आई थी। यह बात लिखते–लिखते वे आँसू फिर सरस आए तो अतीत के पलों में आत्मस्थ होकर गुन रहा हूँ कि हमारी प्राणनाड़ी तो गेहूँ से जुड़ी हुई है।

और याद है कि उन दिनों खेतों में गेहूँ का अंकुरण तो हो जाता था पर! माटी का निमान नीचे जाते-जाते कहीं-कहीं गेहूँ के पौधे उमलने लगते थे। पूरे खेत में जगह-जगह उमलाव के टाँके पड़ते देख रुलाई फूटती थी। फिर कोई-कोई साल इन सयाले के दिनों में मावट गिर जाती तो गेहूँ के पौधे पुगारा जाते। लहलहाते थोड़े-थोड़े कूचा हो जाते तो घनी हरीकच बाल निकल आती। हिलती-डुलती डुलडुलाती गेहूँ की बाल में नाने-नाने फूल आते देख मगन होते। फिर भगवान से प्रार्थना करते कि हवा के गरम झोका से बचाना नहीं तो फूल झरते ही 'अखियाँ' खाली न रह जाए। 'सिद्ध संकल्प खाली नहीं जाते।' 'कर्म ही पूजा है।' शायद यह शूक्ति वाक्य चरितार्थ हुआ है और गेहूँ की अखियाँ मोती से दानों से भर उठती। बोल पड़ते-'भैया! अब गेहूँ वजन पर आ गए हैं।' आनंद का ठिकाना नहीं सात्त्विक स्थितप्रज्ञता की घटाटोप में टप-टप आँखों से मोती टपकते हैं अरे! इन नाने-नाने कोमल-कोमल फूलों में विराजमान वह स्वत्व अंश का कब किन अलौकिक क्षणों में प्राणस्पन्दन की अचिन्तय लीली से गेहूँ के हीरा जैसे बीजों का आविर्भाव हो जाता है। हाँ, ऐसे ही आम की शाखाओं से बौर हुलस पड़ती तो पलाश की सूखी सी ठुठिया से फूल खिलखिलाने लगते। प्रकृति की चिन्मयी रूप की अत्युच्च अवस्था केइन अदभुत दृश्यों को देखकर आनन्दातिरेक में डूब जाते हैं। और कोयल की कूक कितनी सुहानी लगती है, फिर फागुन आते-आते गेहूँ के खेतों में पीला पाक फिरने लगता मानो बसंत का रूप लावण्य दुगणित हो उठतातो भैया! हिया की कुहुक फूट पड़ती-

जा महक रई अमुआ की डारी
कुहू-कुहू कूके कोयलिया जा कारी।
बागन बगीचन में दाउ करै रखवारी
अमुआ में आ गई तन्नक सी कैरी।।

होली के बेद लग जाते हैं। हाँ, फागुन की पूनम से एक दिन पहले ही गेहूँ की पीली-पीली पाँच, सात, बालियों को गठान से तोड़कर एक मनोहारी झुक्के में 'बाल' से ही बाँध लेते हैं। जलती होली की मधूरी आँच में गेहूँ की मनोहारी बाली के झुक्के को सेक लेते हैं। फिर घर के डाँडे में खोंस देते। या पूजा घर में रख देते। हाँ, गेहूँ की आगामी वर्ष की फसल आने तक ये बालियाँ रखी रहती हैं हाँ, परम्पराओं का पालन करते चलना प्रणम्य है। तो कहा जाता है कि-'होली की आँच लगी कि गेहूँ के खेतों में पीलापाक फिर जाता।' 'भीलट बाबा' की जतरा लगते-लगते गेहूँ मोड़ पर आ जाते। पहाड़ के गाँव, राँझी, भातना, बारासेल मानाटेकर, से चेतुआ आ जाते। गेहूँ की कटाई होनी लगती। हाँ, गेहूँ काटते-काटते ही पहाड़ी बोली की लय कानों में गूँजती है। साँझ होते ही सिर पर लकड़ी की मोली धरे चले आते हैं गाँव की ओर। हाँ, उनके पैरों के घुघरू आज भी झन-झन बजते सुनाई दे रहे हैं। खेड़ा पर उनका डेरा रहता। रोटी पानी से निपटे कि फिर टिमकी बज उठती-'देओ फगुआ हमारो, चैता हुओ है तुमारो।' फिर कितने सोपाते हैं पर, मूँ झाँकले में ही उठ पड़ते। उनका सिलगा हुआ चूल्हा खेड़ा पर मैं आँखों-आँखों में देख रहा हूँ। फिर भोर हुआ कि चल पड़ते खेत की ओर। गेहूँ की कटाई के राग रंग में डूब जाते तो खाकर की जड़ के बक्कल से गेहूँ के कटे हुए कड़पा की पूल बाँधी जाती। बड़ी गाड़ी पाँजरी में सात फेर लगाकर बड़ी कुशलता से पूल जमाई जाती। पर! 'बरत' (मोटी रस्सी) से कसकर बाँधना पड़ता। तो बैलों के कंधों पर रखी जुड़ी पर ही हिम्मतवर गाड़ीवान बैठकर बैलों को साधते हुए खलिहान तक ये सात फेरे की गेहूँ की पूल से भरी हुई पाँजरी बड़ी होशियारी से लाता। नदी-नाले के घाट से चढ़ते उतरते हुए डगर-मगर होती पाँजरी का संतुलन बनाकर चढ़ना पड़ता वरना जरा सा झौंका आया कि गेहूँ की सारी पूल लदर-बदर हो पड़ती। भला! खेती-बाड़ी में लोक कला का संसार विविध रूपों में रचा बसा है। कला के कौतुहल से काम सरल हो जाते हैं। हाँ, लोक ने अपने ताले चाबी भी रचे हैं।

इधर गोबर से लिपा-पुता खलिहान राह देखता है। और यहाँ पाँजरी की पूल गिराई जाती। फैले हुए 'पगर' के बीच एक लकड़ी जमीन में गढ़ी होती जिसे 'मेड़' बोलते हैं। इसी मेड़ की दामुन में आठ-दस बैलों के गले की रस्सी एक-दूसरे से जुड़ी होती ताँकि ये बैल गेहूँ के फैले 'पगर' से बाहर न जाए। बस! मेड़ के चारों ओर दामुन के बैलों को एक व्यक्ति टिटकारते हुए घेरता रहता है। हाँ, मैंने भी अपने रतवाड़ा के खलिहान में पाठशाला की छुट्टी के दिन दामुन घेरी है। दामुन के इन बैलों को थोड़ी देर गेहूँ का 'साजा' खाने की छूट रहती है। पर! गेहूँ के इस 'पगर' पर बैल गोबर भी करते जाते थे। इस गोबर में गेहूँ के दाने होते हैं। मैंने स्वयं अपने हाथों से गेहूँ के दाने वाले गोबर को खलिहान के एक कोने में डाला है। पर! दर्द तो उन दिनों की दरिद्रता का है कि गेहूँ के दाने से युक्त उस गोबर के ढेर को कुछ गरीब लोग उठा ले जाते थे। और उसे धोकर निकले हुए गेहूँ को पीसकर फिर निकले हुए आटे की रोटी बनाकर खाते थे। गेहूँ के अभाव की यह दीन दशा मैंने अपनी आँखों से देखी है।

फिर गेहूँ के अभाव की प्राकृतिक घटना को इन कानों ने खूब सुना है-कहते हैं-'1943 के आसपास कोई पछहत्तर साल पहले सयाले के दिनों में ऐसी शीत लहर चली कि अच्छी भली गेहूँ की फसल में 'पाला' पड़ने से गेहूँ की बाल में पुगराए गेहूँ भी पानी हो गए और बचे-खुचे की झिरी पड़ गई।' और यह भी कहते हैं 'भैया! झिरी की साल तो गेहूँ की झिरी के साथ-साथ काँड़ी-कोचरी तुअर, चना के आटे की रोटी भी खाई। और तो और गरीब-गुरबा मजदूरों ने झेंझरू

की रोटी खाई।' और अति सहनशीलता तो ये निभाई कि माटी की हौजी भर, मही (छाछ) में ठुमा दो ठुमा दलिया की महेरी खदबदाकर गले से गटकाई थी। उन दिनों जिन्हें ज्वार की रोटी मिली हो वे भाग्यशाली रहे हों। पर! सामान्य दिनों में भी अधिकांश घरों में रोज ही ज्वार की रोटी बनती थी। गेहूँ की रोटी तो मेहमान आने पर बनती थी। तो गरीब-गुरबा ने कई दिनों तक गेहूँ की रोटी देखी नहीं होगी। और ये कैसे दिन थे कि इस प्राकृतिक विपदा के उपरान्त भी सामान्य दिनों में शादी समारोह की पत्तलों से बची हुई भोजन सामग्री को बीनते-चुनते, झटकारते देखा है। हाँ, एक बार लाल गेहूँ भी आया था। पर! कितने हाथों तक गया होगा? और कितने दिन उस लाल गेहूँ ने पुराब किया होगा?

पर! इतने कठिन समय में भी अपने ईमान धरम और अपनी परम्पराओं को छोड़ा नहीं था। खेत में गेहूँ की पूरी कटाई होने को आई कि आखिरी मुठी को गेहूँ की पूल से भरी पॉजरी में एक लम्बे बाँस में बाँधकर लाते थे। इसे 'छीताछाबड़' कहते थे। इस 'छीताछाबड़' के लम्बे बाँस को खलिहान के भीतरी फाटक के पास बाँध देते थे। दूर से देखने वाले कह देते थे 'भैया! उनकी गेहूँ कटाई हो गई।' बस! गेहूँ की पूरी कटाई हुई कि घर की महिलाएँ खेत में गिरी हुई गेहूँ की एक-एक बाल की बिनाई करतीं। डला, टोपला में बिनी हुई गेहूँ की बाल को एकत्रित करतीं। संध्या होने से पहले उन बालों से गेहूँ के दाने निकाल लेती कोई दूसरी महिला गेहूँ की बाल बीनती तो उन गेहूँ की बाल से निकले गेहूँ को आधे से लेते थे। पूरे खेत से गेहूँ की बाल बीनने के बाद घर की महिलाएँ बिने हुए गेहूँ से धरती माता के पाँच बन्डे भरतीं और लोकरीति से पूजन करतीं-'असतो मा सत् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।।' और इधर दादा जी, काका जी के सिर आँखों पर गेहूँ की बाल का मान होता। हाँ, वे तो नदी-नाले के घाट पर गिरी बाल बीन लाते। तो बागड़-बेले में उलझी बालों को निकाल लेते। और भला! खट्टड़-मट्टड़ से भी गेहूँ के दाने बीन-चुन लेते थे।

और इधर खलिहान में पूरे गेहूँ के 'लाँक' की दामुन हो चुकी होती तो उस महीन, बारीक 'साँजे' की खण्डार लगाते। फिर अखाती के दिन इस खण्डार पर नर्मदा जल की शीशी रखते। माटी की मटकियाँ भी रखते। आम के पत्तों की नाड़े में झालर बनाकर खलिहान के फाटक में लगाते। जिस दिन उड़ावनी, गहाई होती उस दिन गोबर के गणेश जी जरूर बिठाते, पूजन करते हाँ, तिपाही पर खड़े होकर हवा मुहानी उड़ावनी करते। फिर हाथ पंखा से उड़ावनी होने लगी। पूरी उड़ावनी हो जाती तो गेहूँ की नपाई करते जिसे 'रास' नापना कहते थे। 'रास' नापने से पहले खहिलान का फाटक लगा देते थे। पीतल के कुड़ा से 'रास' नापते। पर! 'रास' नापते समय आपस में बोलते नहीं थे। पहला कुड़ा भरा कि 'राम' नाम बोलकर डुले में डालते फिर कुड़ा भरकर दो बोलते। नपाई की शुरूआत में एक नहीं बोलते थे। बस! 'राम' बोलकर शुरुआत करते। फिर जोड़ लगाने के लिए एक रस्सी में गठान लगाते जाते। खलिहान में हर समय ताली नहीं बजाते। रास नापने में गेहूँ कम निकलते ही पिताजी की आह! फूट पड़ती-बाप रे! कैसे करूँगा सबकी पूर्ती। सूखे की खेती में हर साल तीन चार गुना गेहूँ होता था। पिताजी मेज से टिककर चुपचाप बैठ जाते विचार करते क्या तो बिजाई का दें, क्या खाने और बोने को रखें। और ऊपर से सरकार ने सरकारी स्टाक करने के लिए लेवी लगा दी है कि प्रति एकड़ इतना, इतना गेहूँ सरकार को देना पड़ेगा। बताओ! कैसे दी होगी गेहूँ की लेवी और कैसे दी होगी डोलरिया के 'बसया' दादा के गेहूँ की बिजाई। पर! उड़ावनी हुई कि पहले बिजाई सहित गेहूँ देने गए हैं डोलरिया।

समय तो सर गया बात रह गई और अब समय ने पलटा खाया कि हमारे खेत के दोनों सिरों से नहर की खुदाई होती देख पिताजी की आँखें नम हो गईं। हाँ, खेत के दोनों सिरों से लगभग डेढ़ एकड़ जमीन निकल गई। बँटवारे में मिली जमीन और कम हो गई। पर! समय ने फिर करवट ली 1978 के आसपास तवा बाँध का पानी नहरों में आना शुरू हुआ कि 'जय जयकार हो गई।' धीरे-धीरे सिंचाई करना सीखी। तीन-चार गुना गेहूँ होते थे जो दस गुना, बारह गुना होने लगे। वे पुराने गेहूँ के बीज-कालाशूकला, खिवड़ा को बदलना पड़ा फिर लोकवन, सुजाता, पिसी आई। फिर और नए-नए बीज आने लगे-हाँ, तीन सौ बाइस, श्रीराम, दौ सौ बाइस, तीन सौ तीन, एक सौ सतासी, भास्कर ग्यारह, एच.आई. सतासी, उनसठ आदि अनेक प्रकार के बीज आ गए तो एक एकड़ खेत में एक क्विंटल गेहूँ क्रास करके खाद मिलाकर बोने लगे। तो खाद और तीन, चार पानी की सिंचाई होने लगी। जिधर देखो उधर गेहूँ की भरपूर फसल। मैं खड़े होकर अपने खेत के चारों ओर गेहूँ का विराट रूप देख रहा हूँ-अहा! 'अन्न ही ब्रह्म हैं।' सूखे समय की फसल और अब सिंचाई की फसल से तादात्म्य रच रहा हूँ। यह फागुन माह है कहीं-कहीं सरसों, राई के पीले-पीले फूलों से खेत लदे हुए हैं। और ये पगडंडी किनारे सेमल के फूल भी गदरा रहे हैं। नदी किनारे महुआ के पेड़ों से भुनसारी रात फूल झरने लगे हैं। तो जान रहे हैं कि डी.ए.पी., यूरिया खाद और सिंचाई के उपयोग से गेहूँ में खूब कूचा होने लगे फिर गेहूँ की क्रास बोनी करने से भरपूर 'लाँक' निकलती है। तो बीस, बाइस गुना गेहूँ की पैदावार हो रही है। तो मोती से चमकदार हीरा जैसे गेहूँ देखते बनते हैं हाँ, देखते-देखते मेरी आह फूट पड़ती है-

मोती से दाने में भर गई गेहूँ की बारी
निबुआ तो गिर गए संतरा पे ठाड़ों संतरी।
भओ भुनसारो के महुआ बीने पनिहारी।
छप्पर पे डार दई टुकनिया भर-भर सारी।। कुहू-कुहू . . . ।

पर! यह कैसा संसर्ग! कि ठुमुकती पगडंडिया अब कहा है? अरे! हम भूल रहे हैं कि गेहूँ की पैदावार तीन-चार गुना ही हो पाती थी। और अब बीस-बाईस गुना पैदा हो रहा है गेहूँ। हाँ, देख रहे हैं कि गेहूँ की विराट पैदावार से उपजे आनंद का तो पारावार नहीं रहा। पर! अतिशय आनन्द के आवेश में हम जानते हुए अनजान हैं। हाँ, खेती किसानी की लोक-परम्पराओं को विस्मृत कर रहे हैं। लोक विज्ञान को अनदेखी कर रहे हैं। भला! धरती माता की पूजा के लोकविधान और खलिहान अब गुम हो गए। तो गेहूँ की 'रास' नापते समय पहले कुड़ा को एक न बोलकर 'राम' बोलना, एक को 'राममय पर्यवसित करने के महाभाव में 'एक' की अनन्ता की विराट गणना का लोकानुराग कहा है? तो भोजन की थाली को धोकर पी लेने की कैसी थी आत्मानुभूति फिर खेत में गिरी गेहूँ की एक-एक 'बाल' को बीन लेने में अन्नदेवता का मान सिर आँखों पर होता था। हमारी आँखों में पानी है? भला! बताओ बड़े-बड़े नीतिधारकों को क्या पता कि गेहूँ के अंकुरण के समय एक निर्विकल्प अवस्था होती है। माटी के उदर में बीज का यह स्वत्व अंश जल, हवा, प्रकाश की सहचरी में अँखुआते हुए पोंई रूप में विनयस्त होकर एक टोपी लेकर माटी के उदर से उमग पड़ता है। और अंकुर की दो पत्तियों से सम्पृक्त नानी सी सौम्याकृति प्रादुर्भूत हो उठती है। और देखते-देखते एक बीज से सैकड़ों तनों का विराट रूप आकार लेता है देखते ही कह देते हैं- 'अच्छे कूचा हुए हैं।' और प्रत्येक कूचा के तनों में सैकड़ों गठानें। फिर लाखों फूल कब खिल जाते हैं, और कब गेहूँ की हरी-हरी ललित बालियों में मोती से दाने बैठ जाते हैं तो एक-एक कूचा की ये बालियाँ पुगराकर करोड़ों हीरा से गेहूँ के दानें हमें लौटाती हैं। पर, गेहूँ की विराट आत्मनिर्भरता में हम कितने बेरहम हो गए हैं कि आज मण्डी में, राशन की दुकान में, आयात निर्यात के परिवहन में, वेयरहाउस के रखरखाव में गेहूँ का अतिशय नुकसान हो रहा है। और घर में, बफर में, बची हुई रोटियाँ कचरे की गाड़ी में डाल रहे हैं। अति तो यह है कि कहा है गाय, बैल, बछड़े। तो कहा से मिलेगी गोबर की खाद। परिस्थितिकी तंत्र बेहाल है हाँ, देखो! हम इतने उतावले हो गए हैं हाँ झटपट हारवेस्टर से गेहूँ कि कटाई कराई कि नरवाई में आग लगाकर अनगिनत बालियों में मोती से गेहूँ के दानों को जला देते हैं। तो क्या यह सच नहीं है कि गेहूँ के दाने के भीतर विराजमान स्वत्व अंश से संस्कृतियाँ टीसती हैं तो हमारे पुरखों की भोली भावना की मौलिकिता में सिरजी पवित्री हमारे हृदय के किस कोने में अपना राग अलाप रही है? हाँ राग तो रिरया रही है कि ओ! भैया! अन्तर्दृष्टि ओहरा गई तो अन्नदेव के इस अतिअनादर से हमें अनावृष्टि, अल्पवृष्टि, असमय वृष्टि जैसे अनहोने ऋतुचक्र को झेलना न पड़े। पर! यह कैसा संकेत! भैया! प्रकृति हमारी सहचरी है सो संदेश देती है-'गेहूँ की विराट फसल के बीच खड़े सेमल के पके घेंटों से निकले रुई सृदश बासंती रेशे-रेशे उड़-उड़कर देश-देशांतर में डोंडी पीट रहे हैं'- 'भाइयो, सावधान! सावधान!

जाग जाओ! जाग जाओ!'

ऑफीसर रेसिडेंसी, कंचन नगर,
रसूलिया, होशंगाबाद-461001 (म.प्र.)
मो. 9926544157

महामहिम राज्यपाल माननीय मंगू भाई पटेल द्वारा
अक्षरा के भारतीय भाषा विशेषांक का विमोचन

स्वयं पर लिखना बहुत कठिन

- उषा सक्सेना

जन्म - 30 अगस्त 1945।
जन्मस्थान - छतरपुर (म.प्र)।
शिक्षा - एम.ए.।
रचनाएँ - एक दर्जन से अधिक।
सम्मान - कादम्बिनी सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

यह जीवन इतनी सीधी सरल रेखा तो नहीं कि जिस पर हम बिना किसी अवरोध के चलते रहें लेकिन यह इतनी वक्र भी नहीं कि चल ही न सकें। चुनौतियाँ हर जगह मुँह बाए खड़ी आपकी परीक्षा लेती हैं। मेरा तो जन्म ही विपरीत परिस्थितियों में हुआ। छतरपुर जो छत्रपति छत्रसाल महाराज के नाम पर बसाया हुआ, छत्रपुर से बदल कर छतरपुर हो गया। हमारा घर ठीक मुख्य बाजार के पीछे बजरिया में। मुझसे पहले मेरे बड़े भाई की मृत्यु हो चुकी थी। जन्माष्टमी के दिन मेरे जन्म से बहुत पहले मेरे एक चाचा जी को अल्पायु में ही भगवान ने छीन लिया था। ऐसे समय ठीक जन्माष्टमी के दिन मेरे होने के पहले ही मेरी दादी और माँ के साथ संपूर्ण परिवार बेटे की उम्मीद लगा कर बैठा था। उन सबकी इच्छा के विपरीत सभी की आशाओं पर पानी फेरता मेरा जन्म ही उन सभी के लिए पीड़ा दायक था।

बुंदेलखंड में जन्माष्टमी झाँकी सजाकर बहुत धूमधाम से मनाई जाती है। ऐसे में मेरे एक चाचा जी ने दादी से कहा-अम्मा अब तो त्यौहार आ गया हम भी झाँकी सजाएँगे। तभी पास में बैठी दाई रुआँसा चेहरा लेकर बोली बेटा-बेटियों से त्यौहार नहीं लौटता। दादी फफक कर रो पड़ी जब तक हमारी गया बेटा वापिस नहीं आएगा हम जन्माष्टमी नहीं मनाएँगे। वह दिन था 30 अगस्त 1945 दोपहर समय 11: 20 रोहिणी नक्षत्र। काश मैं भी कृष्ण होती तो हमारे परिवार वाले इस त्यौहार से वंचित नहीं रहते। तब से लेकर आज तक इतने बड़े पाँच भाईयों के परिवार में फिर न किसी का जन्म उस दिन हुआ और न त्यौहार लौट कर आया। आज तक मेरे मायके वालों के मन में एक टीस सदा ही बनी है। मेरे पिता जी कहते थे कि काश उस समय हमने सबकी बात न मान कर उस दिन त्यौहार मना लिया होता तो आज इतने बड़े त्यौहार से वंचित नहीं रहते।

मेरे घर वालों को आज तक इस बात का अफसोस है। किसी का भी जन्म दिन किसी को याद नहीं रहता पर मेरे जन्म दिन को सभी अवश्य याद कर लेते हैं। उनके मन की पीड़ा जो वह कह नहीं पाते। मेरी बड़ी बहिन का नाम सूरज होने से मेरी बुआ ने मेरा नाम ऊषा रखा। बाद में सभी ने मुझे खूब लाड़-प्यार से रखा। मेरी माँ गाय दुहतीं तो सबसे पहले मुझे दूध देतीं। दही बिलौतीं तो उस मक्खन पर मेरा ही अधिकार होता। मेरी बड़ी बहिन के बाद दो बच्चे होकर नहीं रहे थे। इससे मेरी माँ का प्यार दुलार मेरे ऊपर सबसे अधिक रहा। मेरे बाद चार भाई और दो बहिनें और हुईं। मेरे दादा श्री जगन्नाथ प्रसाद जी पहले महाराज के सेक्रेटरी थे बाद में दीवान रहे। एक दादा तहसीलदार थे। हभारे पिता जी की उम्र जब सोलह साल की थी तभी उनके पिता जी का स्वर्गवास हो जाने से इतने बड़े घर की सारी जिम्मेदारी पिता जी पर आ गई जिसे उन्होंने अपने कठिन परिश्रम से खूब निभाया।

अब बात करती हूँ अपने लेखन की। मेरे पिताजी उस समय बहुत बड़े घड़ी साज और रेडियो डीलर थे। बंदूक विक्रेता की तो उनकी उस क्षेत्र में एक ही दुकान थी। घर में उस समय श्रीकृष्ण पुस्तकालय था। पिता जी सरस्वती सदन पुस्तकालय के अध्यक्ष थे। अत: जो भी पुस्तकें-पत्रिकाएँ आतीं वह पहले हमारे घर आती थीं बाद में पुस्तकालय। हम उनको पहले पढ़ते थे। हमारे पिता जी जो भी बने, अपनी मेहनत से। उन्हें अपने जीवन में संघर्ष करते हुए आगे बढ़ते मैंने देखा और यही शिक्षा उन्होंने हमको दी। वह हमेशा कहते थे ऐसा कौन सा काम मुश्किल है जो हम नहीं कर सके। अपने अंदर उस कार्य को करने की इच्छा होनी चाहिए। अपने चाचा जी ज्योति प्रकाश जी की कविताएँ जब भी रेडियो पर सुनती मन में मेरे भी ललक जागती। मैं भी इसी तरह एक दिन आकाशवाणी में जाकर कविता पाठ करूँगी। वह सपना जो कभी बचपन ने देखा था समय के साथ पूरा हुआ।

तुलसीदास जी की इस चौपाई के साथ-'जो इच्छा करिहौ मन माहीं, राम कृपा कछु दुर्लभ नाहीं।' एक कटु सत्य मनुष्य पहले अपने मन में इच्छा तो जागृत करे, तभी तो सारी कायनात आपके सपने को पूरा करने में सहयोग देगी। आठवीं कक्षा में आने पर मैंने 'आया बसंत' छोटी सी कविता लिखी थी। 1962 में जब में हायर सेकेंडरी के

अंतिम वर्ष में थी तब चीनी आक्रमण पर–**जागो! भारत के वीर जवानों माता ने तुम्हें पुकारा है, / सीमा पर दुश्मन ने आकर / आज तुम्हें ललकारा है।**

इसके बाद कालेज में आने पर कविता और कहानी लिखने लगी उस समय लड़कियों पर बहुत प्रतिबंध थे। केवल कालेज की पत्रिका में ही मेरी रचनाएँ छपती थीं। जिन्हें देखकर डॉ. राजेन्द्र मिश्र जी जो हमारे हिन्दी के प्रोफेसर थे अक्सर मुझसे कहते–बहुत अच्छा लिखती हो। कहानी में तुम्हारी भाषा शैली जयशंकर प्रसाद सी है। अपना लेखन कभी मत छोड़ना। यह उनका ही मुझ पर आशीर्वाद था। इसी प्रकार से संस्कृत में डॉ.भास्कराचार्य त्रिपाठी जी के विचारों का मुझ पर प्रभाव पड़ा। भवभूति का उत्तररामचरितम् जब वह पढ़ाते तो जिस तरह से सभी रामायणों के साथ उसकी तुलना करते हुए सीता जी के विषय में जो चित्रण करते उसने ही मेरे मन में सीतायन के बीज बोये।

इसके लिये मैंने सारी रामायणें जो भी उपलब्ध हो सकीं सभी का पहले गहन अध्ययन किया। तब कहीं जाकर उसे लिखा। अनेकों बार गोष्ठियों में सुनाने के बाद सभी के परामर्श पर कई बार परिवर्तन हुए। पहले अतुकांत में लिख रही थी बाद में अपने पतिदेव के परामर्श पर उसे लय बद्ध किया। इस तरह मेरा प्रथम खंड काव्य ही तैयार होने में मुझे बीस वर्ष लगे। यह एक साधना थी। जिसके लिए मैं पूर्ण समर्पित होकर कार्य कर रही थी। इसी बीच बच्चों की जिम्मेदारी, मामा ससुर के भी चार बच्चों को अपने साथ रखकर उन्हें पढ़ाना, उन सबकी विवाह, शादी। बाद में अपने बच्चों का। संयुक्त घर परिवार में जिम्मेदारी पहले होती है लेखन बाद में। मनेन्द्रगढ़ मेरी कर्मभूमि रहा क्योंकि मैं यहाँ पर अपनी जिम्मेदारी निभाने के साथ ही वर्ष 84 से अम्बिकापुर आकाशवाणी जाने लगी। वहाँ तक पहुँचाने का श्रेय भी अमरलाल सोनी अमर जी को है जो कि एक बहुत अच्छे कवि थे।

अनिरुद्ध नीरव जी से परिचय हुआ उन्होंने वर्ष 1986 में मेरा इंटरव्यू अम्बिका वाणी में छापा था। रायपुर के प्रसिद्ध कवि गिरीश पंकज जी हमारे पड़ोसी थे वह जब भी मनेन्द्रगढ़ आते मेरी रचनाएँ ले जाते? उस समय नवभारत रायपुर के रविवारीय अंक में काव्य कुंज निकला करता था जिसमें प्राय: मेरी कविताएँ प्रकाशित होतीं। रायपुर के ही नवभारत में प्रकाशित मेरे आलेख धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद को वर्ष 1991 में महाकौशल महोत्सव जबलपुर में पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। रायपुर से ही निकलने वाले दैनिक भास्कर, देशबन्धु आदि में भी आलेख प्रकाशित होते रहते थे। कन्या महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ. रमा चतुर्वेदी ने इंदौर के सत्यमेव में मेरी रचनाओं के ऊपर आलेख मणिरत्नों की माला है–उषा सक्सेना करके छापा था। मनेन्द्रगढ़ से हर तीसरे महीने मुझे हिन्दी वार्ता आकाशवाणी अम्बिकापुर में बुलाया जाता था बाद में घर आँगन कार्यक्रम में भी किसी भी विषय पर वार्ता के लिए बुएला लेते थे। मनेन्द्रगढ़ में सम्बोधन साहित्य परिषद की वर्ष 2000 से 2010 फरवरी तक मैं वहाँ की अध्यक्ष थी। इसी प्रकार से वनवासी महिला प्रकोष्ठ की भी वर्ष 1999 से 2010 फरवरी तक वहाँ की अध्यक्ष रही। मेरी अध्यक्षता में ही वनवासी संस्था ने अपनी स्वर्ण जयंती मनाई। महिला समता मंच मनेन्द्रगढ़ की पहले कोषाध्यक्ष बाद में अध्यक्ष रही। 2004 फरवरी में भोपाल आगई। जिसके बाद भोपाल में आप सभी के साथ मेरा परिचय 2006 में हुआ।

2006 अक्षय तृतीया के दिन मेरी पुस्तक सीतायन का राज्यपाल महामहिम बलराम जाखड़ द्वारा राजभवन में विमोचन किया गया। उस समय उन्होंने मुसे इसके कुछ अंश सुने और कहा कि मैं चाहता हूँ कि आप इसे रामायण की तरह ही सीतायण के रूप में पूरा करें। उनके कहने पर ही मैंने भूमिजा लिखी और जब उनसे 2009 में मिलने गई तो वह उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुए और तुरंत ही बरकतुल्ला यूनिवर्सिटी में उस समय के वाइस चांसलर को फोन किया कि सीतायन को कोर्स में लगाया जाए। हमसे कहा गया कि आप तुरंत जाकर मिलि। मैं अपने पति के साथ गई दो साल तक वह मैटर चला। अंत में कुछ नहीं। मुझे पहली बार अहसास हुआ कि इतने बड़े व्यक्ति की बात को भी किस प्रकार से नकारा जाता है। सत्य तो यह है कि व्यक्ति को समय से पहले और भाग्य से अधिक कभी नहीं मिलता। बाँसुरिया काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ, श्रीकृष्ण लीला खंडकाव्य, भूमिजा खंडकाव्य, कामदेव खंड काव्य के साथ ही सहस्र रावण उपन्यास प्रकाशित हुआ। हमारी सांस्कृतिक विरासत बुंदेलखंड पर आलेख खजुराहो के कलातीर्थ, सूर्यदेव एवं चंद्रदेव उपन्यास मोबाइल हिन्दी ई–बुक बैंक विजय मिश्र ने 2001 में प्रकाशित किए। अभी हमारी सांस्कृतिक विरासत, एवं वैचारिक चिंतन प्रकाशनाधीन है। भोपाल की सभी साहित्यिक संस्थाओं से पुरस्कृत हुई। जबलपुर की कादम्बिनी संस्था ने सीतायन खंडकाव्य–को 2009में पुरस्कृत किया था। ग्वालियर की पारस साहित्यिक संस्था ने मुझे लाईफ एचीवमेंट पुरस्कार के साथ गोल्डन बुक में प्रकाशित किया।

मुंबई की अग्नि शिखा मंच द्वारा पतंजलि पुरस्कार से पुरस्कार हुई। शब्दों की दुनिया मंच ने मुझे Author of the year 2003 के सम्मान से सम्मानित किया। यही मेरी साहित्यिक यात्रा है जो बिना रुके निर्बाध राह में आई अनेक परेशानियों के साथ संघर्ष करते हुए चल रही। संघर्ष ही जीवन है ज़िंदगी को जीना इतना आसान भी नहीं। सफलता उन्हीं को मिलती है जो जीवन में हार नहीं मानते।

आर.वी.66/इंडस गार्डेन -1
ई-8, अरेरा कालोनी एक्सटेंशन,
बावड़ियां कला चौराहा-भोपाल-462039 (म.प्र.)
मो.-9993372655

मु. क. नायक

मूल : चि. वि. जोशी
अनु. : संगीता जगताप

शिक्षा – एम. ए., स्नातकोत्तर अनुवाद पदवी, बी.एड.पी.एच.डी.।
रचनाएँ – दो पुस्तकें प्रकाशित।

सालकाढ़े :– का अर्थ होगा छिलके निकालने वाला।

मराठी में द्वि अर्थ के शब्द प्रचुर मात्रा में होने के कारण इसमें रोचकता पैदा हुई है। वर्तमान में हम सब विवाह विच्छेद की समस्या से जूझ रहे हैं आनेवाली पीढ़ि को इस एकांकी से सबक मिलेगा कि छोटे-छोटे कारण से भी विवाह जैसा मजबूत और पवित्र रिश्ता टूट सकता है?

(दृश्य स्थल: ग्रामराज्य का न्यायालय। लोगों द्वारा न्यायाधीश यशवंत निवाडे, आसन पर बैठे हैं। वादी श्रीमती सरोजिनी नायक। प्रतिवादी– उनके विचलित (मन से) पति मुंकुंद कमलाकर नायक। वादी की ओर से वकील सालकाढ़े। गवाह –नौकरानी मंजुला। प्रतिवादी की ओर से कोई वकील नहीं है।)

न्यायाधीश :– (घंटी का बटन दबाकर) शांति रखिए। अब आज का काम शुरू हो रहा है। अपने चतुरगढ़ ग्रामराज्य का यह पहला मुकदमा है, और मामला शिक्षित वादी-प्रतिवादी का होने के कारण इसे आंतरभारतीय महत्व प्राप्त हो गया है। भले ही न्यायाधीश को कानून का तनिक भी ज्ञान नहीं है तो क्या हुआ, प्रजातांत्रिक प्रणाली द्वारा चुना हुआ तो है। लेकिन उसे व्यावहारिक ज्ञान बहुत है। ग्रामराज्य के कल्पित आचार्य विनोबा महाराज को प्रथमत: वंदन कर कार्यारंभ करता हूँ। अरे! वादी ने कौनसा वकील रखा है रामभाऊ?

पेशकार :– सालकाढ़े वकील है, पर प्रतिवादी ने वकील नहीं रखा है।

न्यायाधीश :– बुलाओ सालकाढ़े को।

चपराशी : (जोर से पुकारते हैं) सालकाढ़े वकील हाजिर हो? सालकाढ़े वकील।

सालकाढ़े : हाँ! मैं यहीं हूँ न्यायमूर्ती महोदय। क्या आज्ञा है न्यायरत्न।

न्यायाधीश :– अपने मुवक्किल का केस समझाइये।

सालकाढ़े :– न्यायमूर्ती। यह केस इस प्रकार है कि हमारी मुवक्किल श्रीमती सरोजनी नायक वादी है। उनकी फरियाद अपने पति मुकुंद कमलाकर नायक के खिलाफ है। पिछले आठ वर्षों से प्रतिवादी प्रताड़ित कर रहा है, अत: त्रस्त होकर वादी ने न्यायालय से निवेदन किया है कि उसे प्रतिवादी से तलाक दिलाया जाए।

न्यायाधीश :– वादी को न्यायासन के सामने उपस्थित किया जाए। (सरोजिनी गवाह के कटघरे में खड़ी होती है।)

पेशकार:– महोदया! आपका नाम?

सरोजिनी :–इश्श! यह क्या रामभाऊ, सप्ताह में आठ बार मेरे घर में चाय ठूँसते हो और मेरा नाम तुम्हें मालूम नहीं।

न्यायाधीश :– (वादी को रोकते हुए) यहाँ पूछे गए प्रश्नों का ही उत्तर दिया जाए। अपनी तरफ से कुछ नहीं कहना।

सरोजिनी :– ठीक है। मेरा नाम सरोजिनी नायक, बी.ए., बी.टी. कांदीवली डिप्लोमा।

पेशकार :– आपके पति का नाम?

सरोजिनी :–सोनगाँव बुद्रूक हमारा गाँव, सोनगाँव बुद्रूक हमारा गाँव ग्रामराज्य के कोर्ट में लेती हूँ मुकुंदराव का नाम।

न्यायाधीश :– अरे-घर में किसी के द्वारा पति का नाम पूछे जाने पर उखाणा में बताया जाता है। कोर्ट में तो वह सीधे तरीके से बताना चाहिए।

सरोजिनी :– मुकुंद कमलाकर नायक, बी. एस. ससी.।

न्यायाधीश :– आपका विवाह कब हुआ?

सरोजिनी :– हमारा विवाह ई.स. 1952 में हुआ था।

न्यायाधीश :– विवाह के बाद पति-पत्नी में तुरन्त झगड़े शुरू हो गए थे या कुछ समय अच्छी तरह प्रेम में बीता?

सरोजिनी :– जज साहब हमारा प्रेमविवाह होने के कारण एक साल खूब आनंद और प्रेम से बीता।

न्यायाधीश :– किसी भी बात पर बिना विवाद हुए?

सरोजिनी :– हाँ, कभी-कभी होता था पर त्रेतायुग के झगड़े के समान जैसे यदि हापुस आम मैं लाई तो बड़ी फाँक आप खाइए ऐसा मैं कहती, और वे कहते-तू खा। कोई भी अच्छा पदार्थ घर में लाया जाता तो वह पहले दूसरे ने खाना चाहिए ऐसा हम एक दूसरे से आग्रह

करते। उस समय हम दोनों में स्वार्थ का अंश लेश मात्र भी नहीं था। ऐसे प्रेमकलह हममें होते रहते थे।

न्यायाधीश :- तो फिर आप दोनों के इस आदर्श जीवन में पहला झगड़ा कब हुआ?

सरोजिनी :- हमारे प्रेमसंबंध स्थापित होने से पहले मेरा मधु नामक एक लड़के से प्रेम था। पतिराज से प्रेमसंबंध जुड़ने के बाद उन्होंने आग्रह किया कि मधु को अपने मन से निकाल बाहर कर दो, लेकिन मेरा मन मेरे वश में कहाँ था? मधु ने उसका एक छोटा सा कोना घेर रखा था। बाद में मधु ने प्रेमभंग के कारण निराश होकर आत्महत्या कर ली (रोने लगती है)।

पेशकार :- महोदया, यह अदालत है, यहाँ भावुक न होते हुए अपनी बात कहनी चाहिए।

सरोजिनी :- भावना शून्य न्याय प्रजातंत्र का शुद्ध मखौल है। कागज काला करने में जिसका पूरा जीवन बीत गया उस पेशकार को भावना का महत्त्व कैसे समझेगा। लेकिन मेरी बात जज साहब के हृदय तक पहुँच गई है।

न्यायाधीश :- महोदया, यह व्याख्यान देने का मंच नहीं है। तुम अपनी हकीकत बयान करो रिमार्क्स प्लीज।

सरोजिनी :- मधु के मरने की बात सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ। मेरे प्रेम के लिए उसने जान दे दी इसलिए मैं फूल माला लेकर शव . . . (सिसकती है) उसके पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शन को गई, वहाँ से लौटी तो ये ऽऽऽऽऽ फिर सिसकती है।

पेशकार :- ये नहीं प्रतिवादी कहो।

सरोजिनी :- हाँ प्रतिवादी। मैं मधु का अंतिम दर्शन लेकर लौटी तो प्रतिवादी मेरे रोने की नकल कर मुझे चिढ़ाते हुए बोले 'आत्महत्या करनेवाले उस बुजदिल के लिए रो रही हो? वीर पुरुष अपने प्रतिस्पर्धी को मार गिराते हैं, खुद नहीं मरते। और आत्महत्या करने की कल्पना भी कितनी क्षुद्र है। फ्रंटियर मेल या डीलक्स एक्सप्रेस के इंजिन के नीचे जान देनी थी मूर्ख ने। यह तो 1904 के लोकल मिक्स के पुराने मॉडेलवाले इंजिन से ही टकरा गया।' हु ऊ -हु ऊ -(रोती है)

न्यायाधीश :- बहुत ही संकीर्ण वचन हैं ये, यदि सचमुच तुम्हारे प्रतिवादी ने व्यक्त किए हैं तो। हवाईजहाज से नीचे गिरकर मरना क्या और सूखी लकड़ियाँ ढोनेवाले ट्रक के नीचे कुचले जाकर मरना क्या, डेड बॉडी तो एक जैसी ही होगी। अच्छा फिर तुमने प्रतिवादी से क्या कहा?

सरोजिनी :- मैंने कहा-आप राष्ट्रपति की स्पेशल ट्रेन के इंजिन के नीचे जान दो। वे तुरन्त बोले-मुझे आत्महत्या करने का क्या कारण। मधु को तू नहीं मिली इसलिए उसने जान दे दी। और क्या बोलते हैं-अगर तू उसे प्राप्त हो गई होती तो मैं उसकी जान ले लेता। आखिर उसके नसीब में मरना तय था।

न्यायाधीश :- फिर तुमने क्या जवाब दिया?

सरोजिनी :- मैंने कहा, आप नीच अंत:करण के राक्षस हो। मधु के बारे में मुझ से कुछ मत कहो, मैं भी चर्चा में उसका नाम नहीं निकालूँगी। तबसे हमारी रोजना की बातचीत का एक और विषय कम हो गया।

न्यायाधीश :- इस तरह और विषय कम होते चले गये क्या।

सरोजिनी :- हाँ, न्यायमूर्ती महोदय।

न्यायाधीश :- जैसे?

सरोजिनी :- देखिये जज साहब, इन्हें कुछ भी दुरुस्त करते नहीं आता। स्टोव्ह बिगड जाए, रेडियो बंद हो जाए, घड़ी में खराबी आ जाए, फाऊन्टन पेन न चले तो इनके हाथों कतई दुरुस्त होने से तो रहे। मैं ही हमेशा दुरुस्त करती। और साथ ही मैं बताती भी थी कि ये सब चीजें सुधारने का शिक्षण मुझे मेरे पिताजी से प्राप्त हुआ है। तो ये खिलखिलकार हँसते हुए बोले-'तेरे बाप ने रेडियो कभी देखा भी है?' ऐसा ही कुछ बोलकर मेरे पिता जी का अपमान करते। एक बार इनकी साइकल का चक्का आउट हो गया तो मैंने ठीक करके दिया, तो ये बोले, 'यह भी तेरे बाप ने सिखाया होगा?' मैं बोली क्यों नहीं, तो ये बोले 'उन्हें साइकल पर बैठते भी आता था क्या?'

न्यायाधीश :- तो फिर तुमने क्या कहा?

सरोजिनी :- मैं बोली-'आता था, वे तुम्हारे बाप की तरह भैंस की पीठ पर बैठ कर भैंस नहलाने तो नहीं जाते थे? वे तो साइकल से मिडिल स्कूल में मास्टरी करने जाते थे।' इसपर वे भी चिढ़कर बोले 'मेरे पिता जी के बारे में आगे कुछ मत बोलना', मैं बोली, 'मेरे भी पिताजी के बारे में कुछ नहीं बोलना।' इस तरह हमारी बातचीत का एक और विषय खत्म हो गया।

न्यायाधीश :- रसोई बनाने पर से तुम्हारा झगड़ा हुआ ही होगा।

सरोजिनी :- बहुत बार, इनको सौम्य और फिका और मुझे चटपटा, जिसमें तेल-मिर्च-नमक की मात्रा अधिक लगती थी। मुझे चिढ़ाने के लिए इन्होने एकबार मेरी चाय में चम्मच भर खाने का तेल डाल दिया, तब मैं भी गुस्सा हो गई। मैंने भी इसका बदला लेने के लिए उनके सिरपर लगानेवाले पोमेड में खाने का तेल मिला दिया। ये ऑफिस में गए और पोमेड में मिलाया तेल चेहरे पर फैल गया, पास में बैठे क्लर्क 'बदबू आ रही है, बदबू आ रही है' कहने लगे। साहब ने भी पसीने की बदबू के लिए उन्हें फटकारा। फिर घर पर आने के बाद मैंने उन्हें बताया की मैंने उनके पोमेड में तेल क्यों डाल दिया था तबसे प्रतिवादी रसोई में कोई गलती नहीं निकालेंगे और मैं उनके

ऑफिस जाने की तैयारी में कोई दखल नहीं दूँगी ऐसा आपस में तय हुआ। मैं महिला मंडल की सेक्रेटरी थी। एक दिन मैं मंडल में भाषण दे रही थी कि तभी ये वहाँ आ गए और मुझे घर चलने के लिए कहने लगे, पतित्व के नशे में मुझ पर अधिकार जताने लगे, तब अध्यक्षा ने कहा, 'जाओ सरोजिनी! हमने मंडल की स्थापना की और स्वतंत्रता की गुहार करते रहे फिर भी हम सीता-सावित्री के वंशज ही ठहरे न?' इस प्रकार उन्होंने चार लोगों के बीच अपमान किया।

न्यायाधीश :- फिर तुमने उस अपमान का बदला लिया ही होगा।

सरोजिनी :- मैं क्या कम हूँ। एक बार ये ऑफिस की महिला मित्र को लेकर सिनेमा देखने गए। मैं वहाँ भी उसी पिक्चर का टिकट निकालकर इनके पीछे की पंक्ति में जाकर बैठ गई। पिक्चर शुरू होने से पहले कुछ देर के लिए इनकी मित्र जरा बाहर गयी, तो मैं अँधेरे में इनकी बगलवाली सीट पर जाकर बैठ गई। वह जब लौट आई तो उसने मुझे पहचाना और सकपका गयी। मैंने उसे खाली सीट पर बैठने का इशारा किया, वह चुपचाप बैठ गई। सिनेमा चालू होने पर मुझे ही मित्र समझकर ये कुछ मजेदार बातें करने लगे। एकबार तो प्रतिवादी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा, इतने में मध्यांतर हुआ और हमारी आँखें एक दूसरे से टकराईं। मैंने कहा, 'ये पति लोग कितने धूर्त होते हैं। मेरे बगल में बैठे होने पर क्या तुमने कभी मेरे कंधे पर हाथ रखा था? मेरे साथ सिनेमा के कथानक की चर्चा करते हुए कभी मीठी-मीठी बातें की थीं? पर आज मैं जब अनजाने में तुम्हारी मित्र की जगह बैठ गई तब तुम्हारे लच्छन दिखाई दिए।'

न्यायाधीश :- ये सब बातें आप ने थियटर में जोर से बोलीं क्या?

सरोजिनी :- बोलूँगी नहीं तो क्या, मैं डरपोक थोड़े ही हूँ।

सरोजिनी :- इनकी मित्र अपनी बेइज्जति न हो इस वजह से वहाँ से रफूचक्कर हो गई। फिर से सिनेमा शुरू होने तक लोगों का ध्यान हमारे तरफ ही था। शो खत्म हो जाने के बाद कुछ महिलाओं ने मेरा अभिनंदन भी किया।

सरोजिनी :- यह निर्णय एक तरफा था जजसाहब। मैंने इनसे बोलना बंद नहीं किया, पर ये 'मेहरबाबा के पक्के शिष्य हो गए हैं। ये मुझसे बिलकुल बात नहीं करते। काम रहा तो इशारों से बताते हैं या फिर लिखकर देते हैं। आठ साल हुए, ये मुझसे बिलकुल भी बात नहीं करते। (रोती है)

न्यायाधीश:- महोदया, अब आप जाकर अपनी कुर्सी पर बैठो। रोओ मत, आपको रोए बिना भी उचित न्याय मिलेगा। वादी की तरफ से वकील श्री सालकाढ़े बताइए किस की गवाही लेनी है।

सालकाढ़े :- मेरा निवेदन है की प्रतिवादी मुकुंद कमलाकर नायक की गवाही ली जाए।

न्यायाधीश :- मु.क. नायक इस कटघरे में खड़े हो जाओ। (वह वैसा करता है) बोलो-भगवान की शपथ मैं सच बोलूँगा।

मुकुंद :- हूँ ----

पेशकार :- सिर्फ हूँ कहने से काम नहीं चलेगा। भगवान की शपथ सच बोलूँगा झूठ नहीं बोलूँगा ऐसा कहो।

मुकुंद :- भगवान की शपथ सच बोलूँगा झूठ नहीं बोलूँगा। ऐसा कहो।

पेशकार :- अरे, आप तो बी.एस.सी. हैं। आपको ठीक तरह से शपथ लेना भी नहीं आता?

मुकुंद :- मैं साइन्स का बी.एस.सी.हूँ। शपथ लेने का शास्त्र हमारे पाठ्यकम में नहीं था।

न्यायाधीश :- दैटस् ऑल राईट। प्रतिवादी ने शपथ ले ली है ऐसा मैं समझता हूँ। हर व्यक्ति अपनी अक्ल के अनुसार शपथ लेता है।

सालकाढ़े :- आप मु. क. नायक, बी.एस.ससी.। सरोजिनी देवी के पति हैं। सही कहा न मैंने, क्या?

मुकुंदः- हूँ। ऐसा लगता है।

सालकाढ़े :- अभी सरोजिनी देवी ने जो आरोप आप पर लगाए वे आपको मंजूर हैं?

मुकुंद :- हूँ।

सालकाढ़े :- कितने साल से आप इनसे बात नहीं करते?

मुकुंद :- लगभग आठ साल से।

सालकाढ़े :- इसके बाद आप उनसे बोलने के लिए तैयार है क्या?

मुकुंदः- ऊँ - हूँ -।

सालकाढ़े :-न्यायमुर्ती महोदय, मुझे आगे और कुछ नहीं पूछना।

न्यायमुर्ती :- मिस्टर नायक आप अपनी जगह पर जाकर बैठिए। सालकाढ़े आप वादी की ओर से अब अपना आर्ग्युमेंट शुरु करें। आपके केस का तुरन्त फैसला करना है। ग्रामराज्य में शेक्सपीयर कहता है कि कानूनी कार्यवाही में विलंब नहीं होना चाहिये, करो शुरू।

सालकाढ़े :- (खाँसकर, गाऊन ठीक करके, खाँसकर) मिलार्ड, न्यायमूर्ती ताज-उल-इन्साफ। भारतीय स्त्री वर्ग का एक ही भगवान, एक ही आधार, एक ही प्रियजन उसका पति होता है। 'पति परमेश्वर' यही हमारे आर्य महिला वर्ग की दृढ़ संकल्पना हजारो वर्षों से है। 'पतिव्रता के लिए पति के सिवा और कोई देवता नहीं होता।' ऐसा अण्णासाहब किर्लोस्कर या किसी अन्य नाटककार ने कहा है, 'पति दुष्ट तो पत्नी तुष्ट, पति क्रुद्ध तो पत्नी बेशुद्ध' ऐसी हालत हमारे भारतीय हिन्दू समाज में है।

न्यायाधीश :- जातिवाद मुर्दाबाद। हिन्दू का नाम मत निकालो, यहाँ किसी भी जाति के संबंध में अलग से विचार नहीं किया जाएगा।

सालकाढ़े :– भारतीय समाज में ऐसा दिखाई देता है की पति के आज्ञा–पालन के लिए पत्नी सदैव तैयार रहती है। पति पर ही उसका सुख–दु:ख निर्भर रहता है, पति असंतुष्ट, मौनी, झगडालू, मारपीट करनेवाला, गाली–गलौच करनेवाला रहा तो उसका जन्म दु:खमय हो जाता है। निष्ठुरता से छुटकारा पाने का कोई भी उपाय स्वातंर्त्र्यपूर्व भारत में स्त्री को प्राप्त नहीं था। लेकिन स्वतंत्र भारत ने विवाह विच्छेद का मार्ग खोल दिया है, मेरी मुवक्किल को उसका लाभ मिले यही मेरी न्यायालय से प्रार्थना है।

न्यायाधीश :– वादी का भी यह कहना नहीं है कि प्रतिवादी ने उससे मारपीट की, गाली–गलौच की, उसे भूखा रखा था, उसे कैद रखा। प्रतिवादी की निष्ठुरता का आप कोई प्रमाण या उदाहरण दे सकते हैं क्या?

सालकाढ़े :– यौर ऑनर, आपस में बातचीत बंद निष्ठुरता की चरम सीमा है। एकाध बार पति ने पीठ पर दो हाथ जमा दिए तो उसका पतिव्रता स्त्री को दु:ख नहीं होगा। पर पारस्परिक प्रेम की बात तो रहने दो, काम पड़ने पर भी दो शब्द न बोले तो उससे अतिशय पीड़ा होती है। जो पति पत्नी को छड़ी से नहीं पीटता उसे तोड़ा, पर्धान हलवी इत्यादी आदिवासी जातियों मे कायर समझते हैं, लेकिन जो पत्नी से बोलता नहीं उसे निष्ठुर समझा जाता है। अब इन जंगली लोगों के व्यवहार को आदर्श प्रमाण माना जाए? यदि ऐसा प्रश्न करते हैं तो मेरा उत्तर यह होगा कि जंगली लोगों के रीतिरिवाज मनुष्य प्राणी की मूल प्रवृत्ती को ही प्रदर्शित करते हैं।

न्यायाधीश :– बोलना आवश्यक होने पर भी प्रतिवादी नहीं बोला यह आप सिद्ध कर सकते हैं क्या, मिस्टर सालकाढे?

सालकाढ़े :– हाँ न्यायमूर्ती, बिलकुल सहजता से। एक बार वादी ने कटहल के गूदे का सांदण बनाया। यह व्यंजन उसने अपनी कोंकण यात्रा में सीखा था। प्रतिवादी को वह इतना पसंद आया कि करीबन सब सांदण उन्होंने अकेले ही चट कर दिया, फिर भी यह व्यंजन क्या है, और बहुत ही स्वादिष्ट बना है, उसने कहाँ से सीखा इतना भी नहीं पूछा। वादी के लिए नहीं बचा तो इसके लिए क्षमा याचना भी नहीं की।

न्यायमूर्ती :– सचमुच, यह तो उसके मन का ओछापन ही कहा जाएगा, क्यों ठीक है न?

सालकाढ़े :– शेम, शेम। आठ वर्ष जिसके साथ गृहस्थी की गाड़ी खींची वह वादी से आठ वर्ष तक एक शब्द भी न बोले यह कितनी निदर्यता, कितनी क्रूरता, कितनी निष्ठूरता की बात है। इसलिए न्यायमूर्ती के चरणों में मेरी विनम्र प्रार्थना है कि विफल साबित हुये इस विवाह को रद्द कर मेरे मुवक्किल को इस बंधन से मुक्त किया जाए।

न्यायाधीश :– (सोचकर प्रतिवादी से) आपको कुछ कहना है। आपका वकील न होने के कारण आपसे ही पूछता हूँ। वादी का कहना मान्य क्यों न किया जाए इस संबंध में आपको कुछ कहना है क्या?

मुकुंद :– ऊँ – हूँ –।

न्यायाधीश :–'मियाँ बीबी राजी तो क्या करेगा काजी?' मैं ऐसा फैसला सुनाता हूँ कि 'क्योंकि प्रतिवादी से आठ वर्ष से नहीं बोल रहा है अत: इन दोनों का विवाह रद्द किया जाता है।' पेशकार।

पेशकार :– जी साहब।

न्यायाधीश:– मेरा जजमेंट कानून की धाराओं के अनुसार कानून की भाषा में सुचारु रूप से लिख दो ताकि मैं उसे पढ़ कर सुनाऊँ।

पेशकार :– जी साहब (किताबें देखकर लिखने लगता है।)

सालकाढ़े :– इस फैसले पर मुवक्किल की ओर से और खुद मेरी ओर से मैं कोर्ट का आभार मानता हूँ। इस फैसले से एक और प्रश्न उठ खड़ा हुआ है जजसाहब।

न्यायाधीश :– वह क्या?

सालकाढ़े :– पिछले आठ वर्षों में वादी और प्रतिवादी को तीन बच्चे हुए, दो लड़के, एक लड़की। इन तीनों का प्रतिपालन करने का काम वादी को सौंपा जाए और उसका पूरा खर्च प्रतिवादी दे इसका भी कोर्ट के आदेश में उल्लेख किया जाए। ऐसी हमारी माँग है न्यायमूर्ती।

न्यायाधीश :– क्यों इस माँग के विरुद्ध आपको कुछ कहना है?

मुकुंद :– ऊँ – हूँ –।

न्यायाधीश :–माँग मंजूर। (परदा गिरता है।)

(समाप्त . . .)

'बोलो ग्राम न्यायालय की जय।'

इश्श :– यह शब्द मराठी में शर्मा ने के भाव की विशेष अभिव्यक्ति के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

उखाणा :– मराठी में तुकबंदी के साथ पति–पत्नी ने नाम लेने का एक रिवाज।

मेहरबाबा :– यह महाराष्ट्र के सन्त हैं, जिन्होंने आजीवन मौन धारन किया था।

सांदण : एक कोकणी व्यंजन जो कटहल के गूदे को चावल के साथ मिलाकर बनाया जाता है।

व्दारा प्राचार्य राजेश देशमुख 'इन्द्रपुरी'
मकान नंबर 39
महर्षि कालोनी, व्ही. एम. व्ही. रोड
अमरावती 444603 (महाराष्ट्र)

खेला

– शुभदा मिश्र

जन्म – 01 जुलाई 1948।
जन्म स्थान – डोंगरगढ़ (छ.ग.)।
शिक्षा – एम.ए.।
रचनाएँ – पाँच पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान – छ.ग. साहित्य सम्मेलन द्वारा सप्तपर्णी पुरस्कार सहित अनेक सम्मान।

आप मुझसे मेरे जीवन की कहानी जानना चाहती हैं मैम। मैं तो आपसे पहले भी बोली थी मैम, क्या मेरा जीवन, क्या मेरी कहानी। आप कहने लगीं तुम्हारे संघर्ष की ही कहानी। मैम संघर्ष का भी तभी महत्व है जब अंततः कोई उपलब्धि हो। यहाँ तो उपलब्धि का सवाल ही नहीं। और संघर्ष भी क्या। कदम- कदम पर सिर पड़ने वाले बवाल। एक बवाल से जूझकर किसी तरह निकलो तो दूसरा बवाल। दूसरे से निकलो तो तीसरा। जाने क्यों उसे ही सुनना चाहती हैं। सुना भी दूँ तो मुझे फुरसत ही नहीं। फुरसत क्या चैन नहीं। न सुबह न शाम। अब देखिए सुबह का समय कितना सुहावना होता है, होता है न। पौ फटते ही सोया हुआ संसार जाग उठता है। मंदिरों से आती घंटे आरती की मंगल ध्वनियाँ मानो जगत में नवजीवन का संचार कर रही हैं। नन्हें पक्षी चीं-चीं करते घोंसलों से निकलने लगे हैं। गायें रंभा रही हैं। वृक्ष झूमने लगे हैं। पशु-पक्षी, वनस्पति जगत सबमें मधुर स्पंदन। जीवनदायिनी हलचल। फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या। कोई मंदिर जा रहा है, कोई ठंडी हवाओं के मस्त झोंकों के साथ घूमने। कोई दौड़ लगा रहा है। कोई मैदान में योगा कर रहा है। कोई जिम में कसरत। उजाला फैलने लगा है तो लोग लौट रहे हैं। उत्साह और ऊर्जा से भरे। घूमने गई महिलाएँ जाने कहाँ-कहाँ से फूल बटोरे प्लास्टिक की झिल्लियों में धरे बोलती, बतियातीं हँसतीं खिलखिलातीं घर लौट रही हैं। कोई अपनी बालकनी में खड़ा अखबार पढ़ रहा है तो कोई बैठा चाय पी रहा है। कोई टी.वी. में समाचार सुन रहा है, तो कोई भक्ति संगीत जागो मोहन प्यारे . . .

और मैं? सुबह उठते ही मुझे चिंता, बवाल, बेचैनी। भागमभाग। सच तो यह है कि मैं चिंता, बवाल लेकर सोती हूँ, चिंता, बवाल लेकर जागती हूँ। बवाल कैसे न हो, साढ़े नौ बजे तक मुझे स्कूल पहुँच जाना है। साढ़े नौ बजे तक पहुँचने के लिए मुझे नौ बजे घर से निकलना पड़ेगा न भई, क्योंकि स्कूल है मेरा पास के गाँव में। आप सोचेंगी कि ऐसा है तो गाँव में ही क्यों नहीं रह जाते। गाँव में तो अब मूलभूत सुविधाएँ हैं ही। नहीं रह सकते मैम। शहर में पैदा हुए, पले-बढ़े। पढ़े-लिखे। पढ़ाई के दौरान शहर-शहर भटके। फिर नौकरी के लिए भटके शहर-शहर। शहरी जीवन हमारे रग-रग में। मगर सरकार ने नौकरी दी गाँव में। मैम हमारे स्कूल के जितने भी शिक्षक हैं, महिला हों या पुरुष, सब शहर में ही रहते हैं। मेरे जैसे ही दौड़ते-भागते आते हैं गाँव में पढ़ाने। पढ़ाने क्या नौकरी बजाने। छुट्टी होते ही भागते हैं अपने शहर। अपने घर। वैसे शहर में रहने का मुख्य कारण है बच्चे। सभी के बच्चे शहर के महँगे अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। नामी ट्यूशन कक्षाओं में पढ़ने जाते हैं। सभ्य, सुशिक्षित संपन्न परिवारों के राजदुलारों के साथ पल-बढ़ रहे हैं। आगे से आगे निकलजाने की धुन में लगे उन बच्चों को देखकर इन बच्चों का भी मनोबल बढ़ता है। शानदार कैरियर बनाने की ललक बढ़ती है। मैं भी तो अपने बच्चे का शानदार कैरियर बनाना चाहती हूँ। यही तो लक्ष्य है मेरे जीवन का। यही तो मेरी सबसे बड़ी खुशी है।

मगर इस सबसे बड़ी खुशी पाने की राह में कदम-कदम पर परेशानी, झंझट, कष्ट। सुबह से ही। मैंने आपको बताया न, मेरा स्कूल लगता है साढ़े नौ बजे। साढ़े नौ बजे स्कूल पहुँच जाने के लिए मुझे घर से निकलना पड़ता है सवा नौ बजे तक। सवा नौ बजे तक बेटे को तैयार कर, स्वयं तैयार होकर, घर में सब चीजें ठीक-ठाक कर, घर में ताला लगाकर निकलना मजाक बात है! इसके लिए मैं तड़के पाँच बजे उठ जाती हूँ, बल्कि उससे पहले ही। फिर फटाफट एक के बाद एक काम। ब्रश करना, दैनिक क्रिया से निवृत होना, एक कप चाय बनाकर पीना, साथ में एक दो बिस्कुट कि खाली पेट चाय नहीं पीनी है। नजर लगातार दीवाल घड़ी पर। छह बज गए हैं। बेटे को उठाती हूँ। मासूम बच्चा सुंदर सोया पड़ा है। उठाने में बड़ा मोह लगता है। दुलारकर-पुचकारकर उठाती हूँ। उनींदा सा बच्चा मेरा उठता है। पाँचवीं कक्षा में आ गया है मैम। खुद तैयार हो लेता है। जब तक तैयार होता रहता है उसके लिए नाश्ता बनाती हूँ। उसकी पसंद का नाश्ता। उसका टिफिन तैयार करती हूँ। बीच-बीच में उसके तैयार होने में मदद करती जाती हूँ। स्कूल की सुंदर पोशाक में तैयार खड़ा है मेरा राजदुलारा। हाय कैसा सुंदर। बलैंया लेती हूँ। पास बैठाकर कौर बना-बना कर खिलाती हूँ। यही हैं मेरे जीवन के सबसे सुंदर क्षण। इन्हें आँखों में भर लेना चाहती हूँ। प्रेम रस में डूबी उसका बस्ता चेक करती हूँ कापी, किताब, पेन, पेंसिल, कलरबॉक्स, कोई जीच छूटी तो नहीं। उसकी स्कूल बस आ गई है। उसे हाथ हिलाती विदा करती हूँ। ओझल हो जाता है मेरी आँखों का तारा।

कुछ पल ठगी सी खड़ी रहती हूँ। बस फिर मशीन बन जाती हूँ। एक

घंटा है मेरे पास। जल्दी-जल्दी नहाती हूँ। जरा पूजा पाठ कर लेती हूँ। फिर फटाफट नाश्ता कर, तैयार होती हूँ। अपना बैग चेक करती हूँ। जो जरूरी चीजें न हों, उन्हें ढूँढ़-ढूँढ़कर रखती हूँ। बाहर निकलने के पहले जितना बन सके, घर व्यवस्थित करती हूँ कि जाने काम वाली बाई आए या न आए। नहीं आई तो लौटने पर सारा घर छिन्न-भिन्न बिखरा हुआ मिलता है। मन खराब हो जाता है। बाईयाँ मेरी तीन है। एक झाड़ू, पोंछा, चौका- बर्तन करने वाली, दूसरी खाना बनाने वाली, तीसरी कपड़े धोने वाली। तीनों के पास घर की चाबियाँ हैं। तीनों के पास फोन है। मगर कभी नहीं बतातीं कि आज नहीं आ पाएँगी। कई बार तो तीनों नहीं आतीं। घर लौटकर दरवाजा खोलो तो घर बिखरा, अस्तव्यस्त। मलिन फर्श। बाथरूम जाती हूँ, गंदे कपड़ों का ढेर। किचन जाती हूँ जूठे बर्तनों का ढेर। चूल्हा गंदा। भोजन के नाम पर ठनठन गोपाल। बैठकर रोने लगती हूँ। लेकिन बैठकर रो नहीं सकती। सो स्कूल से लौटते हुए होटल से प्यारे बेटे की पसंद की चीजें बँधवा कर साथ में रख लेती हूँ। अक्सर चाऊमीन या समोसे कचौरी वाली चाट।

घर सँभालने का यह हाल है और स्कूल का! यह प्राचार्या मुझसे चिढ़ी ही रहती है। मुझे देखते ही कुछ न कुछ टोकेगी, सबके सामने- 'आज आप फिर लेट। कल तीसरे पीरियड में आपकी कक्षा में शोर हो रहा था। मैडम, आप दसवीं ब में चली जाइए, श्रीमती वर्मा आज छुट्टी पर हैं।' पिछले चार महीने से मुझे ग्यारहवीं कक्षा की अंग्रेजी पढ़ाने का अतिरिक्त भार दे रखा है, क्योंकि अंग्रजी की व्याख्याता प्रसव अवकाश पर है। अब अंग्रेजी रही हमेशा मेरे भेजे के बाहर। पर करूँ क्या। इतनी व्यस्तता के बावजूद रोज रात एक अंग्रेजी शिक्षक के पास जाती हूँ पढ़ने। पढ़ने क्या किसी तरह इज्जत बचाने। जिस पाठ को पढ़ाना हो उसका उच्चारण हिंदी में लिख लेती हूँ। सारांश, प्रश्नोत्तर सब हिंदी लिपी में। रट के जाती हूँ, तब भी गड़बड़ा जाती हूँ। उच्चारण गलत निकल जाता है। लड़के कहते हैं- 'मैम क्या बोलीं, समझ नहीं आ रहा, बोर्ड में लिख दीजिए।' बोर्ड में लिखने के नाम से मेरी रूह काँपती है। कई बार प्राचार्या से बोला-'मैम मेरी अंग्रेजी बहुत कमजोर है, छात्रों का नुकसान हो रहा है, किसी और शिक्षक को पढ़ाने दीजिए।' वह तो भड़क ही गईं। 'आप तो खुश होइए कि आपको अंग्रेजी सुधारने का मौका मिल रहा है।'

वह मुझे मौका ही देती रहती हैं। छात्रवृति बाँटने का, स्कूल में होने वाले आयोजनों का, ऑफिस के तो कोई भी काम दाखिल-खारिज रजिस्टर सँभालना, स्कूल में आए सामानों का लेखाजोखा, रुपए पैसे का हिसाब। दरअसल वे हैं अपनी चमची राजबाला के प्रभाव में, और ये राजबाला मैम हैं मेरी एक ही दुश्मन। इनकी बेटी की शादी हुई थी मेरे छोटे भाई भानू से। पति-पत्नी में पटी नहीं, जल्दी ही तलाक हो गया। अब यह मैडम समझती हैं, मैंने ही अपने भाई को इसकी बेटी के खिलाफ भड़काया है। भगवान जानता है मैम, मैं तो अलग-थलग रहती हूँ अपने बेटे के साथ। मगर इसने सारे शिक्षकों में यही सब फैला रखा है। शिक्षिकाएँ तो मुझे अक्सर छेदती रहती हैं। आपको तो अपने भाई-भाभी के बीच मेल कराना था मगर आप ननद वाली चाल चल गईं।

ननदवाली चाल इसलिए भी कहती होंगी क्योंकि भाई के तलाक के मुकदमे में मैंने भाई के पक्ष में बयान दिया था। कैसे नहीं देती मैम, उस लड़की का ढंग ही ऐसा कि वह जैसे कोई महारानी हो, भाई उसका गुलाम। हर बात में नीचा दिखाना। दबाना 'तुम तो आरक्षण के बल पर नौकरी पा गए हो वर्ना हो किसी काम के नहीं।' मैंने डाँटा था-भाभी तुम भी तो आरक्षण के बल पर नौकरी पाई हो बल्कि तुम्हारी माँ भी। बस फिर वह मेरे माँ बाप पर आ गई। मैं भी उसके माँ बाप पर। सभी तो आरक्षण के बल पर नौकरी पाए थे। नौकरी के चलते संपन्नता थी, ठाट थे, ऐंठ थी। मगर भीतर कुंठाएँ भरी पड़ी थीं। सब फूट पड़ीं किसने किसकी कितनी चमचागिरी की। क्या-क्या करम किए। फिर खानदान भर के गड़े मुर्दे। मलबा बिखर-बिखर कर गंधाने लगा था। रोज ही ऐसा। दमघोंटू विषाक्त वातावरण। आखिर तलाक। ननद जिम्मेदार।

वैसे मैम मेरे स्कूल में भी अधिकतर शिक्षक आरक्षण वाले हैं और वे सभी अपने को दूसरे से श्रेष्ठ समझते हैं। मौका मिलते ही दूसरे की बखिया उधेड़ते रहते हैं। मगर मेरे मामले में सब एक हो जाते हैं। इसमें सिर्फ राजबाला मैम की करतूत नहीं है। मेरे पति ने भी आग में घी का काम किया है। मेरे पति से मेरी झाँय-झाँय चलती ही रहती थी, पिछले दिनों बात बहुत आगे बढ़ गई। उस दुर्बुद्धि ने जाकर प्राचार्या को ही बता दिया कि तलाक के सिवाय उसके पास कोई चारा नहीं है। तब से प्राचार्या क्या पूरा स्कूल का ही मेरे प्रति यही रवैया इसके भाई का तलाक हुआ है। इसका भी होने जा रहा है। इसके तो माँ-बाप में ही नहीं पटती थी। इसका पति बेचारा कितना सीधा। दयनीय। यह दिखती ही जबरजंग है। ऊपर से ज्यादा पढ़ी-लिखी। जरूर बेचारे को दबाकर रखती रही होगी।

सही में मैम, मैं खुद इस से, शादी नहीं करना चाहती थी। पर क्या करती। बड़े भैया मेरे लिए लड़का ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पस्त हो गए थे। जब मैं बी.ए. में थी, लगभग बीस बरस की, तब से बेचारे ढूँढ़ रहे थे लड़का। विवाह की प्रतीक्षा में मैं पढ़ती चली गई। बी.ए., एम.ए.,बी.एड., फिर बी.लिब,.एम.लिब। उम्र बढ़ती गई। डिग्रियाँ बढ़ती गईं। न लड़का मिला न नौकरी। हताशा भरी मैं दुनिया भर की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने लगी। सो कभी कोचिंग के लिए दुर्ग जा रही हूँ, कभी भिलाई। कभी रायपुर, कभी बिलासपुर। हड़बड-हड़बड़ जा रही हूँ, हड़बड़-हड़बड़ आ रही हूँ। बीच-बीच में लड़के वाले देखने आ रहे हैं तो सज रही हूँ। भैया बेचारे ऐसे समय कितना तामझाम करते। बढ़िया जायकेदार नाश्ता-पानी, घुमाना-फिराना, तोहफा। भारी खर्च। बिछे जाते उनके आगे। मगर सब बेकार। मस्त खा-पीकर जाते कि घर में विचार कर जवाब देंगे। बार बार फोन करने पर वही जवाब इस साल शादी का इरादा नहीं है या ऐसा ही कुछ। टूटे हुए पस्त पड़े भैया को देखकर मेरा कलेजा फट जाता।

न मैं पारघाट लग रही थी, न भानू। एम.ए. करने के बाद से उसकी लगातार कोचिंग, लगातार साक्षात्कार। भिलाई, रायपुर, बिलासपुर,

कोटा, दिल्ली। कहीं कोचिंग, कहीं प्रशिक्षण, कहीं साक्षात्कार। खर्च का ठिकाना नहीं। भाभी भानू को खूब कोसें मगर मुझे जरा मरा बर्दाश्त कर लें क्योंकि माँ की सेवा तो मैं ही करती थी। जीवन भर तनाव में रहनेवाली माँ को लकवा मार गया था। रक्तचाप, मधुमेह, गठिया तो पहले से था। शरीर एकदम बर्बाद हो गया था उनका। भाभी तो उनके कमरे में झाँकने न आतीं। मैं तन-मन से लगी रहती। रात में उनके बगल की खाट में सोती। सोती क्या, कुछ सोती कुछ जागती। उन्हें सोते में ही पेशाब हो जाता। सफाई करती। दवाईयाँ देनी पड़तीं। सुबह तड़के उठकर उन्हें शौच कराकर, उनका तन-बदन अच्छे से पोंछकर, कपड़े बदलकर, बिस्तर की चादर बदलती। चाय बनाकर पिलाती। पानी, बिस्कुट, दवाईयाँ, जरूरी चीजें उनके बिस्तर के पास की मेज पर रख देती कि हाथ बढ़ाकर ले लिया करें। फिर खुद जल्दी जल्दी तैयार होती कॉलेज के लिए। सारी पढ़ाई मेरी ऐसी ही हुई। अपने शहर से एम.ए. करने के बाद, पास के शहरों दुर्ग, भिलाई, रायपुर में पढ़ाई। बी.एड. बी.लिब., एम.लिब., फिर प्रतियोगिताओं के लिए कोचिंग। ट्रेन से जाती आती।

अपने शहर के स्टेशन तो पैदल ही पहुँच जाती, पर इन शहरों के स्टेशन में अपनी स्कूटी रखी होती। अपनी स्कूटी से ही कॉलेज या कोचिंग इंस्टीट्यूट जाती। वहाँ भी पढ़ाई के दौरान ध्यान बार-बार माँ पर जाता। लेक्चर खतम होते ही स्कूटी दौड़ाते भागती स्टेशन। स्कूटी वहीं छोड़ी। ट्रेन पकड़कर अपने शहर। दौड़ते भागते अपने घर। बस फिर माँ की सेवा। उनके लिए पथ्य बनाना, खिलाना-पिलाना, दवाईयाँ देना, डॉक्टर को रपट देना। अपने खाने पीने का तो होश ही नहीं। बड़े भैया रेल्वे में वेलफेयर आफिसर थे। भागदौड़ भरी व्यस्त जिंदगी। फिर भी समय निकालकर माँ के पास आते। मेरी सेवा देख उनका हृदय द्रवित होता रहता। पर क्या करते। भाभी को तो कुछ कह नहीं सकते। आखिर वही तो उनकी गृहस्थी सँभाल रही थीं। उनके बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, घुमाना-फिराना, फरमाइशें, शौक सब पूरा कर रही थीं। माँ निपटीं तो भैया को राहत ही हुई होगी। मैं रोई तो बहुत पर संतुष्टि भी थी कि मैंने आखिरी क्षण तक उनकी सेवा की। मगर भाभी को अब मैं बर्दाश्त बाहर हो गई। बर्तनों की झनाझन उठापटक। सुनाना, भगवान लड़की बनाए तो भाग्य दे। भाग्य नहीं तो कम से कम सूरत शकल तो ढंग की दे। ऐसी क्या सूरत की लोग देखते ही बिचक जाएँ। हर बार इनकी नुमाईश में इतना खर्चा। अपने बच्चों का पेट काटकर कैसे-कैसे पूरा कर रहे हैं हम।

आपने पूछा हमारे पिता? पिता हमारे शुरू से निकम्मे रहे मैम। घर के प्रति कोई दायित्व नहीं। वैसे रेल्वे में ड्राइवर थे। गाड़ी लेकर निकल जाते। लौटते तो पीकर पड़े रहते। कोई कुछ बोले तो बवाल। मार पीट। अवकाश प्राप्ति के बाद तो बस यार दोस्तों की महफिल। वह रोज मदिरा, रोज माँस। माँ तो घर में यह सब चलने नहीं देतीं थीं। माँ हमारी बड़ी धार्मिक। पूजापाठ, व्रत उपवास सब करतीं। वैसे हम बौद्ध थे। पर माँ का कहना था कि एक पीढ़ी पहले तक तो हम हिंदू थे न भाई। जब हमारी बिरादरी के लोग समय के प्रवाह में आकर झुंड के झुंड बौद्ध बनने लगे तो उसी झुंड में दादा जी भी चले गए थे। मगर हमारे घर में परंपरागत हिंदू संस्कार ही चलते। प्रत्येक पूर्णिमा को माँ भगवान सत्यनारायण की कथा करवातीं, क्योंकि ऐसा उनके मायके में होता था। पिता जी इन सबमें बड़ा बवाल मचाते। पूजा की सामाग्री उठाकर फेंक देते। मारपीट। बड़े भैया जब बड़े होने लगे तब उन्होंने धमकाया आप अपने तरीके से रहिए। माँ अपने तरीके से रहेंगी। वैसे हम भाई बहन माँ के संस्कार में ही रहते। वह हमें अपनी प्रकृति के अनुकूल लगता।

माँ तो रहीं नहीं। पिताश्री का ये हाल। माँ जब इतने दिनों खटिया में पड़ी रहीं एक बार झाँकने तक नहीं आए। माँ का अंतिम संस्कार भी बड़े भैया ने किया। अब घर में दिन भर बात सुनातीं, उठापटक करतीं भाभी। भतीजे भी माँ के डर से मेरे पास न बैठते। दुनिया भर की कोचिंग, प्रशिक्षण, साक्षात्कार के मायाजाल में फँसा कभी दिख जाता भानू। वैसे ही दौरों से लौटकर कभी दिख जाते हताश परेशान बड़े भैया। तिस पर सालों साल मुझे नापसंद किए जाने से अंतरतम तक दुखी उनका मन। मुझे ऐसे करुण नेत्रों से देखते कि मेरा हृदय टूक- टूक हो जाता। सोचती सब लड़कियों को कोई न कोई प्रेम करता है। मीठे रस में भरी लड़कियाँ अपने-अपने प्रेम-प्रसंग बतियातीं, हँसती-मुस्करातीं, खिलखिलाती रहती हैं। मैं इतना फिरती हूँ स्कूल, कॉलेज, कोचिंग इंस्टीट्यूट, ये शहर वो शहर, सबसे बढ़िया मिलना-जुलना, बोलना-बतियाना भी है। मुझे भी कोई प्रेम करता तो भैया से शादी के लिए कहती।

ऐसी कुछ आस बँधी भी।

उन दिनों मैं प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के लिए रोज भिलाई आया जाया करती थी। कोचिंग इंस्टीट्यूट में एक युवक कक्षा के सभी छात्रों में सबसे प्रतिभाशाली लगता। औसत रंग। भली सी सूरत। अच्छी कद-काठी। मिलनसार। देखता कि इंस्टीट्यूट से छूटते ही मैं ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन भागती हूँ। उस दिन मैंने स्कूटी सुधारने दी थी। पैदल ही स्टेशन की तरफ जा रही थी कि वह आ गया अपनी बाईक में-'चलिए मैं आपको छोड़ देता हूँ। उसकी बाइक में बैठी मुझे लग रहा था, मैं हवा में उड़ रही हूँ। ट्रेन आने में समय था। हम प्लेटफॉर्म पर चहलकदमी करने लगे। बोला चलिए एक-एक कप चाय हो जाए। हम चाय पी ही रहे थे कि टेन आ गई। दूसरे प्लेटफॉर्म पर। हम दौड़े। उसने मेरा हाथ पकड़कर पटरियाँ पार कराईं। भीड़ भरे डिब्बे में पीछे से पकड़कर चढ़ाया। बस फिर मैम वह मेरे तनमन में छा गया। मेरे अंग-अंग में मानो अमृतरस बहने लगा। मैं भी मानो मीठे रस से भरी राधारानी बन गई। वह रोज मुझे स्टेशन छोड़ता। फिर हम कभी मैत्रीबाग, कभी 'नेहरू आर्ट गैलरी', कभी 'शहीद उद्यान' जाने लगे। इनपर खूब गपियाते। पढ़ाई के विषयों पर, विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं पर, देश की, समाज की, सरकारों की स्थितियों पर, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति पर वह बोलता तो मैं मुग्ध होकर सुनती रह जाती। मैं कहती, मुझे तो यह सब सोचने-विचारने का समय ही नहीं रहता। मैं उससे अपनी समस्याएँ ही कहने लगी, अपने घर परिवार की, वह चुटकी में समाधान सुझा देता। मेरे मन प्राण मानो पुकारने लगे यही है, यही है तुम्हारे जनम जनम का साथी। इसके पहले कि दुनिया मुझसे छीन ले,

मुझे पाना है इसे। इसके लिए मैं क्या-क्या जतन नहीं करती। ब्यूटी पार्लर जाती। शरीर का अंग-अंग सँवारती। मेरा वजन जल्दी बढ़ जाता है, सो डायटिंग करती। सुंदर से सुंदर पोशाकें खरीदती, पहनती। हल्के -फुल्के जेवर भी। शीशे में अपनी सुंदरता देख खुद ही मुग्ध होती। उसकी आँखों में प्रसंशा तो होती पर इसके आगे कुछ नहीं। तड़पन से भरी मैं एक पंडित जी से मिली। उनके सामने अपना दिल खोलकर रख दिया। रोने लगी कि मुझे वशीकरण मंत्र दीजिए। वह मुझे नहीं मिला तो मैं मर जाऊँगी। पंडित जी ने मुझे बहुत समझाया। वशीकरण मंत्र के प्रतिकूल प्रभाव बताए। मैं इतना रोई कि आखिर में उन्होंने कोई मंत्र दिया। करने का तरीका बताया। शायद आकर्षण मंत्र था। वह सचमुच ही आकर्षित दिखता। उसकी नजर से प्यार झलकता। उस दिन हम मैत्रीबाग के एकांत में घास पर बैठे थे। मैं कह बैठी आपके पास रहती हूँ तो मैं सब कुछ भूल जाती हूँ। सारी दुनिया सुहावनी लगने लगती है। वह प्यार भरी नजरों से मुझे देखता रहा। बोला कहीं शादी का तो नहीं सोच रही हैं।

मेरा चेहरा लाल। फिर भी बोल गई अगर ऐसा सोच रही हूँ तो कुछ गलत सोच रही हूँ क्या?

बोला गलत नहीं, संभव नहीं है। मेरा परिवार भारी परंपरावादी है। मैं अपने परिवार के विरुद्ध नहीं जा सकता।

मैं बोली साफ क्यों नहीं कहते कि मैं आपको पसंद नहीं हूँ।

बोला नहीं आप बहुत अच्छी लड़की हैं। एकदम दिल की साफ। इसीलिए मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। मगर शादी की मत सोचिए। हम मित्र ही रहें यही बेहतर है।

मैं बोली अगर जाति की बात है तो हम दोनों ही कौन से ब्राह्मण ठाकुर हैं। मेरी जाति महार है, आपकी तेली। पर दोनों ही पढ़े लिखे, संपन्न, संस्कारी परिवारों से हैं। ब्राह्मण ठाकुरों से कुछ कम भी नहीं हैं हम। साफ क्यों नहीं कहते कि मैं सुंदर नहीं हूँ कहते-कहते मेरी आँख में आँसू आने लगे।

उसने हाथ बढ़ाकर मेरे आँसू पोंछे-नहीं, आप बहुत सुंदर हैं। आप मेरी माँ को नहीं जानतीं। वे क्या-क्या बवाल मचाएँगी, आप समझ नहीं सकतीं।

मैंने आँसू पोंछे अगर मैं आपकी माँ को मना लूँ, तब तो कोई समस्या नहीं न।

वह मानेंगी ही नहीं। तुम कितनी कोशिश कर लो।

उसने मुझे बहुत समझाया। मैं मानी ही नहीं। बरसों बाद मुझे मेरा मनचीता साथी मिला था। भगवान ने ही मिलाया है इससे मुझे। नहीं छोड़ सकती इसे। मैं इसकी माँ को मना लूँगी। अब सुंदर तो दिखती ही हूँ। इतनी पढ़ी-लिखी हूँ। अगर जाति की बात हो तो वह लोग ही कौन सी ऊँची जाति के हैं। जरूर दहेज चाहती होंगी। सो भैया जरूर दे देंगे। उत्साह और उमंग में भरी मैं प्रेम दिवानी बिहार चली गई। सीधे उसके गाँव। उसके घर। अपने घर में बताया कि अपनी बैच के छात्र-छात्राओं के साथ बिहार जा रही हूँ एक अध्ययन यात्रा में। उसने भी मेरी जिद देख अपने घर में फोन कर बता दिया था कि मेरी एक सहपाठिन बिहार यात्रा पर गई है। तुम लोगों से मिलने घर भी आ सकती हैं। सो वे तैयार ही थे। दरवाजे में मुझे देखते ही पहचान लिया। मैंने उसके माता-पिता के पैर छुए। माँ ने मुझे उठाकर गले लगा लिया। छोटे भाई-बहनों ने मुझे घेर लिया। मैं उनके लिए कुछ न कुछ तोहफे लेकर गई थी। वे खूब खुश। खूब हँसी मजाक, गपशप 'हम तो आपको देखते ही पहचान गए।' मैं बोली 'मैं तो इस घर का दरवाजा देखते ही पहचान गई।' वे सामान्य खाते-पीते लोग थे। मैं उनके घर तीन दिन रही। उनकी माँ रोज कुछ न कुछ विशिष्ट व्यंजन बनातीं। कभी लिट्टी चोखा,कभी मालपुआ, कभी ठकुआ। मैं मौज में कह गई मुझे यहाँ इतना अच्छा लग रहा है कि मैं बिहार में ही बस जाऊँ। वे लोग एकदम उछल पड़े 'इससे अच्छी बात और क्या होगी।' पिता उसके सहृदय लगे। मुझसे मेरे घर परिवार, शिक्षा, कैरियर के बारे में बातें करते। उसके माता-पिता के पाँव छूकर, भाई-बहन को दुलारकर, उसकी माँ का दिया सलवार सूट का तोहफा माथे से लगाकर, उनकी भावभीनी विदाई में भीगी मैं वहाँ से विदा हुई।

घर पहुँचते ही मैं अपने प्रियतम से मिलने व्याकुल। कब मिलूँ कब बताऊँ। 'सुमति उद्यान' के एकांत में हम मिले। उत्साह में छलकती मैंने उसे सब बताया। वह चुपचाप सुनता रहा। फिर बोला 'मेरी माँ ऐसी ही मायावी हैं। ऐसा ही प्रेम दिखाती हैं। तुम धोखे में मत आओ'। मैं आँखें फाड़े उसे देखने लगीं। उसका चेहरा बड़े कष्ट से भरा हुआ था। किसी तरह बोला उन्होंने मुझे फोन किया है उस लड़की के चक्कर में मत आना। मैं भयभीत उसका मुँह देखने लगी तुम झूठ बोल रहे हो। तुम मुझे छूकर बोलो कि तुम सच बोल रहे हो। उसने मेरे हाथ पर अपना हाथ रखा मैं सच बोल रहा हूँ। मैं तुम्हारे जै सी निश्छल हृदय लड़की को धोखे में नहीं रख सकता।

मैं फूट-फूट कर रोई। उसके भी धार-धार आँसू बह रहे थे। मेरी दुनिया उजाड़ हो गई।

उस रात मैं सो नहीं सकी। रात भर छाती के घाव से दर्द का दरिया बहता रहा। मन करता था आत्महत्या कर लूँ। आत्महत्या करूँ तो वह अपने को दोषी मानेगा। जबकि उसने मुझे शुरू से मना किया था। बताया था कि माँ मायावी हैं। ऐसा ही प्रेम दिखाती हैं। इन औरतों की दुनिया ऐसी ही है। दिखावा कुछ, मन में कुछं। मैं मूर्ख खुद ही अपने जाल मैं फँस गई। हृदय में रहरहकर शूल सा उठ रहा है। छाती पकड़े छटपटा रही हूँ पड़ी पड़ी। इस घड़ी मौत आ जाए तो मुक्ति मिले।

मैंने इंस्टीट्यूट छोड़ा। भिलाई जाना ही छोड़ा। उसका फोन नंबर ब्लॉक कर दिया। अपने कमरे में पड़ी घुलती रहती। सुबकती रहती। भानू ने देखा तो बिगड़े 'पढ़ना-लिखना छोड़ के बिस्तर में पड़ी है। पढ़ना नहीं था तो इतनी भारी भरकम फीस क्यों भरी। रोज आने-जाने की झंझट क्यों किया। यहीं लग जाती किसी छोटे मोटे स्कूल में।' पर भैया शायद मेरी हालत समझते। घर आते तो मुझे आवाज देते-'मेरे लिए जरा अदरक वाली बढ़िया चाय बना कर ला तो। मेरी

कमीज के बटन टूट गए हैं, टाँक दे तो। कैसे टाँका, उल्टा टाँक दिया है।' अक्सर कुछ न कुछ बोलकर हँसाने की कोशिश करते। कि तभी मेरा नियुक्ति पत्र आ गया। मेरे डूबे दिल में कोई असर नहीं। पर भैया की खुशी का क्या कहना। मुझे नियुक्ति पत्र दिखा-दिखाकर कहने लगे 'देख तू छोटी-मोटी नौकरी के लिए तरस रही थी न, मगर तेरे लिए तो रखी थी व्याख्याता की नौकरी। चल जल्दी से तैयार हो। हम मंदिर चलेंगे।' माँ की मृत्यु के बाद पहली बार हमारा परिवार एक साथ बड़ी श्रद्धा से मंदिर गया। भैया के उत्साह का क्या कहना। छोटा-मोटा जश्न ही मना डाला घर में। मुझे लेकर उस गाँव में गए, जहाँ मुझे नौकरी ज्वाइन करना था। स्कूल में नौकरी ज्वाइन कराया। सबसे मिले। मेरे रहने का इंतजाम किया। सबसे बराबर अनुरोध करते रहे कि मेरी बहन का ध्यान रखिएगा। जाते हुए भैया को देखती मेरे आँसू झरझर बह रहे थे। भैया सच में महान हैं, मुझे विषाद के गर्त से किसी तरह उबारा। जीने लायक बना दिया।

भैया दो तीन बार मुझसे मिलने आए। हालचाल लेते मेरा, मेरे स्कूल का। जायजा लेते आस पड़ोस का, गाँव का। कहने लगे बहन तेरा यहाँ अकेले रहना ठीक नहीं। तेरी शादी हो जाए, अब यह और भी जरूरी है। मैं बोली भैया आप जो ठीक समझो, करो। बताया उन्होंने, एक लड़का है। तेरी ही उम्र का। किसी निजी संस्था में काम करता है। तेरे लायक नहीं है। पर जीने के लिए बहुत कुछ समझौता करना पड़ता है बहन।

छुट्टियों में मैं घर गई। भैया ने लड़के वालों को आमंत्रित किया हुआ था। वैसा ही स्वागत सत्कार। वैसा ही तामझाम। परिवार तो दिख ही रहा था जाहिल गँवार। लड़का देखकर मेरा दिल ही बैठ गया। दुखों के सागर में डूब गई। गहरा साँवला, देहाती नाकनक्श, ऊँचाई मेरे जितनी ही। पर मेरा शरीर भरा हुआ, जवान। उसका छीजा हुआ। पिटा सा। मगर भैया उसके परिवार के सामने उसकी अच्छी परेड ले रहे थे, देखिए आप तो बी.ए. भी पास नहीं हैं, मेरी बहन बहुत पढ़ी-लिखी है। अच्छी सरकारी नौकरी में है। हम भाईयों की इकलौती बहन है। सो बहुत दुलार में पली बड़ी है। स्वाभाव से भी जरा तेज है। आपको इसे सहना होगा। उस व्यक्ति ने सब स्वीकार किया वह घर सँभाल लेगा। पत्नी की भावनाओं का खयाल रखेगा। घर गृहस्थी के सब काम में सहयोग करेगा। उसके माता पिता भी बोले आप चिंता मत कीजिए

अपने विवाह के लिए मैंने कैसे सुंदर-सुंदर गहने कपड़े बनवाए थे। दुकान-दुकान जाकर। विशेष आर्डर देकर। अकेले में उन गहनों कपड़ों में सजकर, दर्पण में स्वयं की छवि देखकर मुग्ध होती। ऐसे में बाँहें पसारे मेरा वह मनचीता साथी आ जाता, मैं तो छुई-मुई हो जाती। सारे सपने खाक हो गए। फिर भी सजी मैं। दुनिया को दिखाने के लिए सजी। स्वयं के दुखी हृदय को मनाने के लिए सजी मैं। दुनिया को दिखाने के लिए खुश भी हुई। शादी के कुछ दिनो तक उस पति ने सचमुच निभाया। स्कूल से लौटती तो घर साफसुथरा, व्यवस्थित मिलता। बना बनाया गर्म गर्म नाश्ता, गर्म खाना। और तो और मैं सोती तो मेरे हाथपाँव भी दबा देता। मैं मन ही मन दुखभरी हँसी हँसती, अच्छा पति मिला मुझे तो। स्कूल की कई शिक्षिकाओं के बारे मैं सुना था कि वे सब काम काम चलाऊ आदमियों से शादी की हैं और खूब सेवा कराती हैं। सोचती, चलो यही सही।

मगर मेरे नसीब में यह भी नहीं था। वह अक्सर अपने गाँव चला जाता। कई कई दिनों तक नहीं आता। गाँव में उसके माँ बाप, भाई भाभी बच्चे सभी थे। उनके बीच वह मगन रहता। चाहता कि मैं भी छुट्टियों में गाँव जाकर उसके घर में रहूँ। उसके माँबाप की सेवा करूँ। उनके पैर दबाऊँ। मैं कुछ दिन जाकर रही भी। मगर उन जाहिल लोगों ने मेरा तमाशा बना डाला। पहले मजाक, फिर उपहास, फिर ताने। ताने मेरी शिक्षा पर, मेरे रहनसहन पर, सूरत शकल, माँ बाप पर। आखिर मैं भी भड़की और अपने घर आ गई। वह पीछे-पीछे आया और खूब लड़ा। लड़ा कि मैं तेरे जैसी भैंस की गुलामी करता रहूँ और तू दो दिन मेरे घर भी न रह सके। वह जो गया तो आया ही नहीं। मैं गर्भवती हो गई थी। प्रसव काल समीप आ गया था। बार-बार फोन करने पर भी वह न आए। फोन पर ही बके। प्रसव का अंतिम समय आ गया। रिक्शा बुलाकर मैं खुद ही सरकारी अस्पताल चली गई। आप्रेशन से बेटा हुआ। पास में मेरे कोई नहीं। अस्पताल वाले दया करके जो सेवा कर दें, बस वही। पेट के टाँके पक गये थे सो महीने भर अस्पताल में रहना पड़ा। बड़े भैया किसी विशेष ड्यूटी में। उनका फोन बंद। भानू स्वाभाव से गैर जिम्मेदार। पति नदारत। मुझे सेवा की जरूरत थी। देखरेख की जरूरत थी। सार संभाल की जरूरत थी। जो पैसे लेकर आई थी, सब खतम हो गए थे। चलने फिरने लायक थी नहीं। लस्तपस्त देह। अनाथ, अभागी की तरह बच्चे को छाती लगाये रोती रहती। अस्पताल वालों ने किसी तरह भैया से संपर्क किया। वे आए भानू को साथ लेकर। दोनो भाई संभालकर हमें घर ले आये। भाभी को क्या अच्छा लगना था पर भैया बराबर ध्यान रखते। भानू की नौकरी लग गई थी। असिटेंट प्रोफेसर की। वह कॉलेज से छूटते ही घर आता। बच्चे के साथ खूब खेलता। भतीजे भी खेलते। नौकरानियाँ भी खेलतीं। बच्चा था ही बहुत प्यारा। सब मेरा ध्यान रखते। भैया ने बहुत दौड़ धूप की कि मेरा तबादला अपने ही शहर में हो जाये। अपने शहर में तो नहीं हुआ पर पास के ही गाँव में हो गया।

कि अचानक मेरा पति आकर खड़ा हो गया। अपनी माता जी के साथ। तोहफे लेकर। भैया ने खूब सुनाया 'अब तुमको याद आया कि तुम बाप हो गए हो। माता जी अब आपको अपने पोते की याद आई।' उन्हें क्या असर। रहने लगे हमारे ही घर में। हमारे पिता श्री भी अब घर में ज्यादा रहने लगे। कारण वे मांसाहार के शौकीन। बाजारू तरीके से सजी दिलफेंक समधिन मटककर कहें, 'आप लाइए न, मैं बना दूँगी'। अब ला रहे हैं पिताश्री रोज, किसी दिन मछली, किसी दिन मुर्गा, किसी दिन बकरे का माँस। अंडा तो रोज। समधी-समधिन दोनों चटकारें ले लेकर खाए। हड्डी चूस-चूसकर हाहा-हूहू। मेरा मूर्ख पति भी उनके साथ। घर का माहौल एकदम बर्बाद। आखिर भैया ने तय किया कि मैं अपने पति, बच्चे, और सास के साथ अलग रहूँ।

भाईयों को तो समय ही नहीं। पति की सूरत ही ऐसी कि कौन मकान देता। मेरा 'प्रसव अवकाश' समाप्त हो गया था, सो मैं स्कूल जाने लगी थी। स्कूल में ही शिक्षकों, चपरासियों, ऑफिस के कर्मचारियों, छात्रों सभी से मकान के लिए पूछती रहती। जहाँ किसी मकान के बारे में पता चलता, बच्चे को गोद में लिए पहुँच जाती। लोग दया तो करते पर मकान देने में डरते। कारण हमारी जाति के नेताओं ने हिंदुओं, विशेषकर हिंदू देवताओं के खिलाफ खूब जहर उगला था, और सारे सभ्य, सुरक्षित मुहल्ले हिंदुओं के ही थे। मगर भैया की उज्ज्वल छवि के कारण हमें एक अच्छे मुहल्ले में एक अच्छा फ्लैट मिल गया। फ्लैट जिस बिल्डिंग में था, उसमें कई फ्लैट थे। सब में किराएदार। सभी सपरिवार। सभी परिवारों में कामवाली बाईयाँ, खानाबनाने वालियाँ, धोबी, दूधवाले लगे हुए थे, सो मुझे सब आसानी से उपलब्ध हो गए। मगर मुझे चैन कहाँ!

मैं तो काम पर चली जाऊँ, सास महारानी, अपने बेटे को भड़काए तुम पति हो, पति को ऐसे दबकर नहीं रहना चाहिए। इससे तो कोई शादी नहीं कर रह था तो इसके भाई ने तुम जैसे सीधे सादे को फाँसा। कामवालियों को भी मेरे खिलाफ कर दें। बाईयाँ बतियायें 'पति को नौकरी नहीं है तो क्या उसका ऐसे तिरस्कार करना चाहिए। सास क्या सिर्फ बच्चा खिलाने के लिए है। स्कूल से आते ही बच्चे को गोद में ले लेती है। दो मिनट बैठकर सास से बात नहीं कर सकतीं।' सास आसपास के फ्लैट में बतियायें 'बेटे की नौकरी थी, इसके साथ रहने के लिए छोड़नी पड़ी। वैसे हमारे इतने खेत हैं कि अगर ये हमलोगों के साथ गाँव में रहे तो बैठे-बैठे खिला सकते हैं। मगर इसे तो नौकरी की अकड़।'

नौकर-चाकर, अड़ोसी-पड़ोसी सब मुझे ऐसे देखें जैसे मैं अपराधी होऊँ। कोई टोके, कोई नसीहत दे। आखिर एक दिन मैं कसकर भड़की। मेरा भड़कना था कि दोनों पहली गाड़ी से भाग लिए। अब मैं छोटे से बच्चे के साथ अकेली। बच्चा सँभालूँ कि नौकरी पर जाऊँ। 'झूलाघर' वगैरह में अपने प्यारे बच्चे को रखने का मन न करे। अक्सर बच्चे के लिए छुट्टी ले लूँ। अड़ोस पड़ोस, स्कूल, परिचित, अपरिचित सबसे 'आया' पूछती रहूँ। कभी आया मिलें भी तो उनकी हरकतें बर्दाश्त बाहर। खून का घूँट पी पीकर सहूँ। तब भी भाग जाए। आयायों की भारी माँग। आखिर भैया ने ही उबारा। गाँव जाकर उन्हें खूब धमकाया, चमकाया। समझाया। उसने मेरी बहुत शिकायत की मेरा और मेरी माँ का अपमान करती है। भैया बोले मैं उसे भी समझाऊँगा। खैर वह आया।

आया तो सही में सँभाल लिया। घर की देखभाल, बाईयों से काम कराना, बेटे की देखभाल, दुलार। उसे घुमाने ले जाता। मेरा दिल भर आता। उसे बाप के साथ घूमने जाते देख आँख में आँसू आ जाते। कभी कभी मैं भी पति और बच्चे के साथ घूमने जाती, 'देखो रे लोगों मेरा भी पति है। बच्चा है। छोटा सा परिवार है।'

मगर पति जल्दी ही अपनी चाल पर उतर आया। बात-बात पर बके खूब उल्लू बनाया तेरे भाई ने मुझे। दुनिया भर की जूठन को मुझ गरीब के गले बाँध दिया। पढ़ने जाती थी, मुस्टंडों के साथ गुलछर्रे उड़ाती थी। सब पता कर लिया हूँ मैं थकी हारी परेशान मैं भी जवाब देने लगूँ तो हो जाए घमासान। उसकी आवाज धीमी, मेरी तेज। पड़ोसी कान लगा कर सुनें। आखिर मैं ही दम खाऊँ। उसकी हरामजदगी के बावजूद उसे मनाऊँ। यह अब और शेर। बच्चे को घुमाने ले जाने के लिए तो पैसा ले ही। बात बात पर पैसा पेट्रोल के लिए पैसा, जूते खरीदने के लिए पैसा, कच्छा बनियान खरीदने के लिए पैसा, बाल कटाने के लिए पैसा। तिस पर इसे जब तब माँ से मिलने की तलब उठ जाये। बस बकना शुरू 'तेरे कारण मेरी माँ छूटी, परिवार छूटा, खेतखार छूटा, दोस्त छूटे। तेरी गुलामी करने के लिए।' मेरे दिमाग की नसें तड़कने लगें। बकूँ मैं भी तेरी हरामजादी माँ को अपने और किसी बेटे से प्यार नहीं है। जा मर उसी डाइन के पास। वह मेरे ही सामने मेरे पर्स से पैसा निकाले। कम पड़ जाए तो मेरी अलमारी खोल कर निकाले, और भाग जाए। अब मैं फिर बच्चे के लिए आया ढूँढूँ। मगर बच्चा पापा से हिल चुका था, रोए। आखिर उसे फोन में बात कराऊँ। तोतली आवाज में रो रोकर बोले 'पापा घर आओ न। कब आओगे पापा।' बहुत तरसा के आए। बच्चे को खिलाए। घुमाए और माँगे बात-बात में पैसा छोटे भाई की पढ़ाई के लिए पैसा, गाँव के घर की मरम्मत के लिए पैसा, बीज के लिए पैसा, खाद के लिए पैसा। कभी मैं बिगड़ूँ कि तुम्हारे खेत से हमें तो कुछ मिलनेवाला नहीं तो कभी-कभी थैले में दो किलो चावल या चना ला दे।

पर्व त्यौहारों में तो यह अक्सर गाँव भाग जाए। मेरा कलेजा काँपता रहे, हे भगवान यह आएगा कि नहीं। दीवाली आ रही है। बाजारों में रौनक, घर-घर सफाई सजावट। पड़ोसी सब अपने अपने फ्लैट में सजा रहे हैं, तरह-तरह के तोरण, बंदनवार। रंगीन रोशनियों की मनोहारी लड़ियाँ, लुभाते प्यारे-प्यारे चंदा, सूरज। बड़ा होता मेरा बच्चा देख-देख कर मचल रहा है। 'मम्मी हम कब अपना घर सजाएँगे। पापा को फोन लगाने लगा है पापा जल्दी आओ। हम अपना घर सजाएँगें।' बच्चे को मना रही हूँ जब तक पापा आते हैं हम खरीददारी कर लेते है। बच्चे से पूछ-पूछ कर खरीद रही हूँ। उसकी पसंद की पोशाक, सजावट के सामान। झालर, तोरण, आकाश दीप, फूल, मालाएँ, हल्के-फुल्के फटाके, मिठाई। ढेरों चीजें। मगर वह फिर भी कर रहा है 'पापा पापा।' आखिरकार मुझे नाक रगड़ाकर वह आता है। बच्चा उछलकर उसकी गोद में चला जाता है। वह सजा रहा है हमारा फ्लैट। दरवाजे के तीनो बाजू में झिलमिल करती रंगीन रोशनी की लड़ियाँ। ऊपर दमकती 'स्वागतम्' की मेखला। लक्ष्मी गणेश जी की फोटो पर माला सजा रहा है। हरे, नीले रौशनियों की मनोरम माला। बच्चा मेरा ताली पीट-पीटकर खुश होकर नाच रहा है। उसे तरह-तरह की फुलझड़ियाँ चलाना सिखा रहा है। फटाके फोड़ना सिखा रहा है। स्कूटर में बैठाए शहर की रोशनियाँ दिखा रहा है। मैं लक्ष्मीमाता के आगे सिर झुकाकर प्रार्थना कर रही हूँ, हे माता, इतना भी बना रहे तो जीवन चला लूँगी। मेरे बच्चे का

बचपन सँवर जाएगा।

मगर यह तो मेरा शोषण करे ही, बच्चे का भी शोषण। भावनात्मक शोषण। पर्व त्यौहारों में जानबूझकर गायब। मैं बच्चे को बहलाने की हरचंद कोशिश कर रही हूँ। स्कूटर में बैठाए घुमाने ले जा रही हूँ। नवरात्रि में भगवती के दर्शन कराने मंदिर ले जा रही हूँ। मेले में उसकी पसंद की चीजें ले रही हूँ। दशहरे में रावणवध दिखाने ले जा रही हूँ। उसके स्कूल जाकर उसके शिक्षकों से मिल रही हूँ। कोचिंग कक्षाओं में उसे प्रवेश दिलवा रही हूँ। छुट्टी होने पर उसे लेने जा रही हूँ मगर बड़ा होता बच्चा कुछ ज्यादा ही समझदार हो गया है। कहता है 'पापा लेने आते हैं तो मुझे बहुत अच्छा लगता है मम्मी। जिन बच्चों के पापा लेने नहीं आते, दूसरे बच्चे कहते हैं, इनके मम्मी-पापा में तलाक हो गया है। बहुत उल्टी-सीधी बातें करते हैं मम्मी। इसलिए जब पापा आते हैं, मैं उनके साथ खूब घूमता हूँ कि देखो मेरे पापा हैं।' मेरा कलेजा फट जाता है। बेजान सी लस्त पड़ी रहती हूँ। बीच-बीच में भैया खोजखबर लेने आते ही रहते हैं। समझाते हैं देख तूने इतने नौकर पाले हैं न, एक नौकर और सही। बच्चे को जरा बड़ा हो जाने दे।

मैं रोकर कहती हूँ भैया, ये पति नहीं लुटेरा है। पूरी निर्दयता से मुझे लूट रहा है। परसों भारी रकम ले गया कि जमीन खरीदने में पैसे कम पड़ गए हैं। मेरी सारी तनखा देखते-देखते फुर्र हो जाती है। राशन पानी, शाक सब्जी, मकान किराया, बिजली पानी का बिल, तीन-चार नौकरों की तनखा, बच्चे के स्कूल की फीस, ट्यूशन फीस, उसके बस, आटो का भाड़ा, उसकी पढ़ाई के दूसरे तामझाम, एक पैसा नहीं बचता मेरे पास। जबकि मेरे सहकर्मी मकान बनवा रहे हैं। एक से एक आधुनिक डिजाईनो वाले। शानदार। कार खरीद रहे हैं। दुनिया भर की योजनाओं में पैसा लगा रहे हैं। मैं कंगाल की कंगाल, तथाकथित गृहस्थी चलाने के लिए।

भैया के बराबर समझाते रहने से मैं हिम्मत कर किसी तरह गृहस्थी की गाड़ी चला ही रही थी कि इसकी दुष्टता के नए पर खुलने लगे। भानू की शादी तय हो गई। शादी में सारे समय पत्नी प्रताड़ित चेहरा बनाए फिरता रहा। मेहमानों के बीच बैठकर मेरी बुराई। मेरे परिवार की बुराई। भैया मुझे समझाये, 'कुछ मत बोल। काम निपट जाने दे।' दुर्भाग्यवश भानू और उसकी पत्नी में शुरू से नहीं पटी। साल भर में मामला अदालत में। मुझे भानू के पक्ष में बोलना ही था और यह भानू की पत्नी के पक्ष में बयान देने को व्याकुल। भानू का तलाक होने के बावजूद यह बेटे को घुमाने ले जाये और भानू की पत्नी के घर जाकर बैठे। बेटा अब समझदार हो चला था, एक दिन बोल दिया 'पापा आप छोटी मामी के घर जाकर मम्मी और मामाजी लोगों की बुराई करते हो, यह गलत है।' यह सटपटा गयां मगर फिर बेटे को ही पट्टी पढ़ाने लगा 'तुम बच्चे हो, समझते नहीं हो। मेरे दिल में क्या गुजरती है। मैं अपने बूढ़े माँ-बाप को छोड़कर यहाँ रहता हूँ। गाँव में हमारे खेत हैं। बागीचे हैं। आसपास के खेतवाले हमारे खेत हड़पना चाहते हैं। मेरा भाई अकेले उन दुष्ट लोगों से निपट नहीं सकता। मुझे उसकी मदद करनी चाहिए न। तुम्हारी मम्मी को गाँव जाकर मेरे बूढ़े माँ बाप की सेवा करना चाहिए न।' जाने क्या क्या समझाये कि एक दिन हमारी लड़ाई-झगड़े के बाद बेटा मुझे ही समझाने लगा 'मम्मी आपको गाँव जाकर दादा-दादी की सेवा करनी चाहिए। आप पढ़ी-लिखी हो। दमदार हो, जैसे यहाँ सब सँभालती हो, वहाँ भी सब सँभाल लोगी। हमारे गाँव में भी स्कूल है। उसमें तबादला करा लो। भले छोटा स्कूल है, पर हम परिवार के साथ तो रह सकेंगे न।'

यह बच्चा मुझे कितना चाहता था। क्या क्या नहीं सहे मैंने अपने इस कलेजे के टुकड़े के लिए। आज यह मुझे समझा रहा है। मैं कुछ न बोल सकी। धर-धर आँसू बहाती रही। रोती रही। रोती रही। बच्चा मेरा सहम गया। लिपटकर रोने लगा। उसे समझ ही नहीं आ रहा था, उसने क्या गलत कहा। भैया को बताया भैया, ये आगे बच्चे के मन में और क्या-क्या जहर भरेगा। मैं पागल हो जाऊँगी। तलाक के सिवा कोई चारा नहीं है।

भैया इतना ही बोले भानू की हालत देख ही रही हो। सच में भानू की हालत देखी नहीं जाती। अदालत ने फैसला दिया था कि 'उसकी बेटी रहेगी माँ के पास। चूँकि माँ स्वयं अच्छी नौकरी में है, इसलिए पिता सिर्फ पढ़ाई-लिखाई आदि का खर्च देगा। इतवार के दिन अपने घर ले जा सकता है। घुमा फिरा सकता है।' अब बेचारे भानू की हालत और भी दयनीय। इतवार के दिन जाकर खड़ा रहता है उस दुष्टा के दरवाजे। बहुत इंतजार के बाद बेटी आती है मुँह फुलाए। मारे प्रेम के भानू घुमा रहा है दुनिया भर में। चिलडन पार्क, रेस्तराँ, बाजार। एक से एक खिलौने, पोशाकों से लदी बेटी घर लाता है। सामने बैठाकर हाथ से कौर बना बना कर खिला रहा है। आखिर बेटी के मुँह से निकलता है 'पापा आप अच्छे आदमी नहीं हैं।' पापा वहीं पस्त। पड़ा-पड़ा रो रहा है। बेटी जैसे निर्लिप्त। मैं तलाक लूँगी तो मेरी भी यही दशा होगी। मेरा बेटा मेरा दुश्मन हो जाएगा। यह कमीना रहे अपने माँ-बाप के पास गाँव में। मैं अपने बेटे के साथ यहीं रहूँगी।

सो एक लड़ाई झगड़े के बाद मैंने इसे घर से निकाल ही दिया। इसका फोन नंबर ही ब्लॉक कर दिया ताकि यह बेटे से बात ही न कर सके। अब यह कमीना पड़ोसियों को फोन करे 'कृपा करके मेरे बेटे को बुला दीजिए। मेरी पत्नी मुझे अपने बच्चे से बात नहीं करने देती।' मैं पड़ोसियों से उलझने लगी 'आप लोग हमारे मामले में मत पढ़िए।' सारे पड़ोसी मुझसे नाराज। अब वह बेटे के स्कूल पहुँचने लगा। मेरी बात मान बेटा मिलने से मना कर दे, तो उसकी टीचर ही समझाए 'नहीं तुमको अपने पापा से मिलना चाहिए।' और भी टीचर आकर बच्चे को समझाने लगें। मैं उन लोगों से मिली। मामला समझाया उन्हें। पर वह तो मेरे ही स्कूल की प्राचार्या से मिलकर न जाने क्या-क्या बतियाया कि सब टीचर उसके ही पक्ष में 'गलत बात है, बच्चे को बाप से मिलने देना चाहिए।' कदम-कदम पर काँटों से उलझती, लहूलुहान होती जी ही रही थी कि मकान मलकिन ने फतवा सुना दिया भाई आप फ्लैट खाली कर दीजिए। पड़ोसियों को आपसे बहुत सी शिकायते हैं।

जाऊँ कहाँ। मकान तलाशूँ सभ्य सुशिक्षित मुहल्ले में। ऐसे मुहल्ले हिन्दुओं के और हमारी जाति के नेता जहर उगलें हिन्दुओं के प्रति। उनके देवी-देवताओं के प्रति। सो कोई मकान न देना चाहे। जानती थी कि मायके में मेरा रहना भाभी बिल्कुल पसंद नहीं करेगी। पर जब तक मकान नहीं मिल जाए तब तक तो रह ही सकती हूँ, सोचकर चली गई। उस घर में अब मेरी जैसे कोई जगह ही नहीं। घर में सबसे सामने एक विस्तृत बरामदा। बरामदे के आखिरी सिरे में एक कमरा। बड़ा सा। कमरे में पिताश्री और उनके शराबी-कबाबी दोस्तों का राज। महफिल। भीतर बड़े हिस्से में भैया-भाभी का परिवार। भतीजे भी अब जवान हो गए हैं। उनके भी अपने अपने कमरे। दूसरा बड़ा हिस्सा भानू का। उसी में अपना सामान जमाया। भानू अकेला जरूर मगर उसका स्वाभाव अब बेहद चिड़चिड़ा। अक्सर मेरे बच्चे को ही डाँट दे। मायके आकर मैं वैसे ही काम धाम करने लगी जैसे पहले करती थी। साफ-सफाई व्यवस्था सभी देखूँ। अपनी तरफ से बोलूँ बतियाऊँ। मगर सभी में बेरूखी। उस दिन बुद्ध पूर्णिमा थी। भैया के कुछ दोस्त आए थे परिवार सहित। भाभी उनसे गपशप करती रहीं। खाना मैंने बनाया। कई व्यंजन बनाए। पूरी कचौरी, खीर, दहीबड़े। खाने की मेज पर सब बैठे। मैं परोसती रही। सबने छककर खाया। खूब तारीफ की। सबके जाने के बाद मैंने अपनी थाली परोसी, अपनी पसंद के व्यंजन डाले, और आराम से बैठ खाने लगी कि भानू उधर से गुजरा। एकदम चिड़चिड़ा दिया 'खाने में तो तुझे होश ही नहीं रहता। इतना खाती है तभी तो ऐसी भैंस हो गई है।' मुझसे खाया नहीं गया। थाली में ही टपटप आँसू गिरने लगे। भानू ऐसा निर्मम, आकर देखा तक नहीं-'बहन खाना खा रही है कि नहीं।'

भानू ही नहीं, सभी निर्मम। अड़ोस-पड़ोस कहो, प्राचार्या कहो, शिक्षक, स्टाफ सभी तो अभागी का तमाशा बनाने की फिराक में। उस दिन पिछली बेंच के लड़के आपस में कुछ शरारतें कर रहे थे। प्राचार्या उधर से गुजरीं। बोल गईं 'आप पढ़ाती क्या हैं, कक्षा तक तो ठीक से सँभाल नहीं पातीं। फिर बोल गईं आपसे तो अपना घर तक नहीं सँभला।' जाने कैसे धीरे से मैं कह बैठी 'आपसे सँभलता है अपना घर।' उन्होंने सुन लिया। फिर तो भयंकर बवाल। प्राचार्या गरजने बरसने लगीं। पूरा स्कूल आकर तमाशा देखने लगा। शिक्षक बीच में पड़े। मैंने भी माफी माँगी।

मगर प्राचार्या बर्दाश्त नहीं कर सकीं। पति उनके औरतबाज थे। नौकरानियों को तक नहीं छोड़ते थे। घर में रोज कलह। सो प्राचार्या की दुखती रग। उन्होंने फिर मुझे नही छोड़ा। उन्होंने मुझपर एक साथ कई आरोप लगा दिये अनुशासनहीनता के, अकुशलता के, वित्तीय अनियमितताओं के। छात्रवृति राशि में घपले के। मैं माफी माँगती रही। नाक रगड़ती रही। मुझ पर जाँच बैठा दी गई। निलंबन पत्र धरा दिया। कहाँ वरीयता के आधार पर प्राचार्य बनने के आसार दिखने लगे थे और कहाँ निलंबन पत्र। जड़ बैठी रही मैं। चेतना शून्य। चेतना आई तो ध्यान आया, भैया का। इस घड़ी मेरा और कौन है!

फोन की तरफ हाथ बढ़ाया कि फोन स्वयं घनघना उठा। भानू का फोन था। बोला जल्दी आओ। भैया को भीषण दिल का दौरा पड़ा है। शंकरा अस्पताल में हैं। भागी मैं अस्पताल। गहन चिकित्सा कक्ष के बाहर सभी आकुल व्याकुल खड़े थे भाभी, उनकी माँ, भतीजे, भानू, भैया के दोस्त। सहकर्मी। भानू ने मेरे कंधे पर हाथ रखा। बोला डॉक्टर कोशिश कर रहे हैं।

आँसू रोके, दम साधे बैठे रहे हम। घंटों। आखिर भैया को होश आया। भाभी को भीतर जाने की अनुमति मिली। दो मिनट में वे रोती कलपती निकलीं तो रोते फफकते भतीजे गए। फिर व्याकुल बदहवास भानू। फिर थरथराती मैं। मरणसन्न भैया मुझे एकटक करुण दृष्टि से देखते रहे। बड़े कष्ट से कहने लगे बहन तुझे बचपन से ही मुसीबतें झेलनी पड़ी हैं। माँ हमारी काम पर जाती थीं, तेरे भरोसे घर छोड़कर। आतीं तो बिगड़तीं घर जमा कर नहीं रखा। कपड़े प्रेस नहीं किए। सारी पढ़ाई घर सँभालते दौड़ते-भागते पूरी की। नौकरी में भी वही दौड़ भाग। बवाल। पता चला प्रेम में भी निराशा मिली तुझे। शादी ने तो तेरा जीवन ही नरक कर दिया। जितना मुझसे बन सका, सहारा देने की कोशिश की। अब आगे के मुसीबतें तुझे अकेले झेलनी हैं बहन। तुझे ऐसे छोड़कर जाते हुए मन घबरा रहा है।

मैंने आँसू पोंछे। भैया के निर्जीव हाथों को हाथ में लेकर माथे से लगाया भैया आप मेरी चिंता लेकर मत जाइए। मैं अब तक मुसीबतों से निपटी आपके सहारे। अब मैं निपटूँगी आपके आशीर्वाद, आपके प्रेम के सहारे। आपका प्रेम मेरा संबल था। रहेगा। आप शांत मन से जाइए भैया।

भैया का हाथ जरा सा ऊपर उठा। गिर गया।

जाने मुझे क्या हुआ। मुझे लगा जैसे मुझमें कोई भारी शक्ति आ गई हैं। भैया के कदमों में सिर नवाया। आँसू पोंछती बाहर आई। सबसे कहा जाओ दर्शन कर लो। सब हृदय विदारक क्रंदन करते हुए दर्शन करने जाने लगे। भाभी की माँ भैया के शरीर के पास बैठ मंत्र जाप करने लगीं। रोता बिसूरता भानू बाहर आया तो मैं बोली भानू हिम्मत रखो। अंतिम यात्रा की तैयारी करो। अपने प्यारे भैया को सुंदर विदाई देनी है। भतीजों से कहा सब रिश्तेदारों मित्रों, परिचितों को फोन करो। मैं अस्पताल की जरूरी कार्यवाही करने जा रही हूँ।

मित्र, रिश्तेदार, परिचित सब आने लगे। सब सदमे में। किसी को कुछ सूझ नहीं रहा है। मैं सबको बताने लगी, किसको क्या क्या करना है। वह दिन है और आज का दिन है, सब मुझसे वैसे ही पूछ कर काम करते हैं जैसे भैया से पूछा करते थे। वैसे ही सहारा संबल लेते हैं जैसे भैया से लेते थे। उनकी समस्याओं के आगे मुझे अपनी समस्याए छोटी लगती हैं। बल्कि तुच्छ। है वही भाग दौड़। वही बवालें। वही मुसीबतें। पर अब तो मेरे लिए जैसे सब 'खेला' हो गया चाहे मेरा निलंबन ही क्यों न हो। चाहे जाँच समिति के आगे प्रश्नों की बौछार झेलना ही क्यों न हो। चाहें तो इसे ही आप मेरी उपलब्धि कह सकती हैं।

14, पटेल वार्ड,
डोंगरगढ़-491445 (छ.ग.)
मो.-8269594598

किसी दिन अचानक

– रजनी गुप्त

जन्म – 2 अप्रैल 1963।
शिक्षा – एमफिल. पीएच.डी.।
रचनाएँ – सोलह पुस्तकें प्रकाशित।

अपने आसपास के नजदीकी लोगों के बदलते हावभाव भाँपकर मौन हो जातीं वे। बाहरी व अंदरूनी जीवन यानी दो अलग अलग सचाइयाँ। क्या सचमुच इतनी सँकरी, उथली और अँधेरे से भरी गुफा की तरह रहस्यमयी है अंतसलोक जिसके आर-पार ठीक से दिख ही नहीं रहा कुछ भी। इस सिस्टम की सचाई को बहुत सोची-समझी रणनीति के तहत कितने कायदे से कितनी परतों में दाब-ढाँककर आमजन से छिपाई जाती रही है सालों से। जब-जब उसने उच्चाधिकारियों के सामने मुँह खोलकर सचाई उगलनी चाही, हर बार उसे डरा धमकाकर आगाह कराया जाता-'थोड़े दिन और सह लो। जब इतने साल संघर्ष करके सबसे विरोध करके भी कुछ हासिल नहीं हुआ तो कुछ दिन और चुप नहीं रह सकती? अंदर से ज्वालामुखी की नीली लपटें उसके वजूद को धू-धू करके जलाने पर आमादा थीं जिससे बचने के लिए वह विशाल समंदर देखने निकल पड़ी।

समयनुमा अथाह समंदर अनादि, अनंत, अछोर, अबूझ, अगम्यज और अप्रत्याशित हादसों से भरपूर कुदरत की खूबसूरत रचना। कुदरत के अज्ञात अनिश्चित कालखंड की बँधी डोर से खिंचते हुए यहाँ-वहाँ फिसलती लहरों की तरह नीतिका खुद को यूँ ही ताजिंदगी मूल धारा से किनारे फिकते देखती रही। उसकी इस बीहड़ यात्रा में कई सहयात्री टकराए मगर तभी तक, जब तक गतिवान गाड़ी चलती रही। गाड़ी के रुकते ही तमाम सहयात्री अपनी-अपनी तयशुदा मंजिल की तरफ रुखसत कर जाते, ठीक उसी तरह वह भी अपनी छोटी सी गृहस्थी सँभालती सहेजती रह गई इस पार, सधे कदमों से धूप भरे आकाश का सफर तय करते हुए आहिस्ते-आहिस्ते लौटना पड़ा घर।

पक गई फसल को जैसे मशीन में डालकर गेहूँ और भूसा को अलग-अलग किया जाता, ठीक उसी तरह वह अपने जीवन को दो हिस्सों में बाँटकर देखने लगी। गेहूँ और भूसे के दोनों तरफ लगे बड़े-बड़े ढेर देखकर वह बचपन के हरे-भरे खेत खलिहानों में खो गई, जहाँ टटरी पर बैठकर वह गोल-गोल गेहूँ की गठरियों पर कूदती-फुदकती रहतीं। ऐसा करने में उसे खूब मजा आता और फ्रॉक में जगह-जगह काँटे लग जाते। घर आते ही माँ की डाँट तुझे वहाँ जाकर टटरी पर बैठने की जरूरत क्या थी? बिखरे बालों की चोटी बनाती माँ उसके सिर के उलझे बालों को जोर-जोर से सुलझातीं, ठीक उसी तरह वह अपने जीवन की उलझनों को तार-तार करके सुलझाकर देखने की कोशिश करने लगी।

नीतिका का मन पढ़ाई में कम, फैशन में ज्यादा लगता। चंचल हिरणी जैसी तेज चाल से वह समूची दुनिया को नाप लेने का हौसला पाल बैठी। आँखों में मॉडल बनने की हसरत लिए वह रंगीन तितलियों की तरह हरदम उड़ती रहती लेकिन घर के विपरीत हालातों में उसके सपनों को मुकम्मतल जमीन मयस्सर होना मुमकिन ही नहीं था। अब इसे संजोग कहें या मनमानी जिद कि पड़ोसन की बेटी नव्या संग अचानक एक दिन वह मुंबई निकल आई-'एक बार तो मौका ले लूँ अपना भाग्य आजमाने का, बाद में जैसा आप लोग कहें, करेंगे'- बाद में अपने घर पर खबर कर दी, लेकिन नहीं, नहीं, इस प्रसंग को वह किसी भी तरह याद ही नहीं करना चाहती। क्या-क्या नहीं घटा उसके साथ? उन सब घटनाओं, हादसों या अनकही तकलीफों को याद करके मन खट्टा कतई नहीं करना चाहती वह। दर्द, गुस्सा, आक्रोश और तनाव की अतिशयता से रातों की नींद उड़ गई।

नव्या ने जिस राज से उससे मिलवाया, वह अनजानी अबूझ रास्तों पर रोजाना ले जाता, जहाँ से वह अपना चमचमाता करियर देख सकती थी लेकिन केवल सपने में क्योंकि वहाँ तक पहुँच पाने की कोई कारगर तरकीब उसे सूझी ही नहीं। राज ने अपनी तरफ से भरसक कोशिश की मगर यहाँ इस नकली दुनिया में पेट भरने लायक काम मिलना मुश्किल था। साल भर के भीतर ही जुटाए पैसे खर्च होने लगे तो घर लौटने की सोचा। इसी दरम्यान एक दिन राज ने उसके सामने सीधे-सीधे पूछा-'हम दोनों पेट भरने लायक तो जुगाड़ कर ही लेते हैं, क्यों न यहीं रहकर कुछ और करने की सोचते हैं।' नीतिका के पास न कहने का विकल्प बचा ही कहाँ था? बापू ने फोन पर साफ लहजे में अपना फरमान सुना दिया-'तू वहाँ रहकर चाहे जो करे, मरे

खपे, पर हमारी देहरी पर राज के संग आकर हमारी नाक मत कटा।' माँ से जरूर उसकी जब कभी फोन पर बात हो जाती। मन नहीं मानता या घर से मिले नि:स्वार्थ अपनेपन की भूख उसे परेशान करने लगती तो माँ की बातें सुनकर भड़भड़ाता मन शांत हो जाता-'तू ये सब करना छोड़कर बीएड कर ले नीतिका। स्कूल में सम्मानित अध्यापिका की नौकरी करेगी तो रोज-रोज के झमेले खत्म हो जाएँगे। फिर तुम दोनों तबादला करवाकर यहीं आसपास लौट आना।'

बस, उस दिन माँ की सीख को गाँठ में बाँध लिया उसने। दिन भर की भागदौड़ के बाद देर रात जागकर पढ़ाई करती और पहले ही प्रयास में बीएड पास कर लिया। कुछ महीनों बाद ही सरकारी स्कूल में नियुक्ति-पत्र मुट्ठी का दबाए माँ से मिलने चली आई। कितने सालों बाद माँ से मिलकर आँखें नम हो गईं- 'अम्मा, दुबरा गई हो।'

'तूने कम दुख दिए हैं मुझे, कठकलेजा है तेरा, माँ ने भरी आँखों से देखा उसे।

गर्दन नवाए पापा के कमरे में जाकर भरे गले से इतना भर बोल पाई- 'माफ करना पापा। गलती हुई है हमसे, आपका दिल दुखाया। नौकरी लगी है सरकारी स्कूल में टुकड़ों-टुकड़ों में जोड़कर कुछ बताना चाहा मगर भरे गले से ज्यादा बोलते नहीं बना। वे भी कुछ नहीं बोले, अखबार में आँखें गड़ाए, गर्दन नवाए बैठे रहे चुपचाप, सो बिना कुछ कहे-सुने लौट आई, उदासी को सीने में समेटे हुए।

एक समय बाद सारे फितूर हवा हो जाते हैं। कुछ कर गुजरने के समुद्री तूफान की तरह हलचलें अपने आप थिर हो जातीं और ठहरे पानी में सब कुछ साफ-साफ दिखने लगता, खुद का चेहरा भी और औरों का भी।

नीतिका अपने घर की देहरी जरूर छोड़ आई मगर मन है कि वहीं ठहरा हुआ, उसी दरवाजे पर, जहाँ से उसके सपनों ने उड़ान भरनी शुरू की। उसकी उम्मीदें उसी तरह वापस धरती पर बैठतीं गईं, जैसे हवा में उड़ती रेत के कण वापस धरती पर लौटने लगते। एक उम्र बीतने के बाद उसके सपने थककर चूर हो गए सो वह किनारे बैठकर चुपचाप सपनों से खाली आँखों से विगत के अक्स देखती रही, जब वह नौकरी ज्वाइन करने कॉलेज आई थी -

'तो, ओबीसी से हो आप?'

'मेरी शिक्षा-दीक्षा सामान्य संवर्ग से हुई, शादी के बाद ओबीसी में।'

'देखिए, ये लफड़े वाली बात हो गई मैडम, ज्वाइनिंग के समय एक-एक चीज देखी-परखी जाती है, हमारा मैनेजमेंट बहुत सख्त है बाबू ने तरेरती नजरों से उसे नापने की कोशिश की।

'मतलब? हमारा चयन तो सामान्य संवर्ग से हुआ है तो नो प्राब्लम। उसने अपने बिखरे भरोसे को समेटते हुए ऊँची आवाज में प्रतिप्रश्न किया।

'तो उससे क्या?' बाबू के बगल में बैठी लड़की ने इशारे से नीतिका को अपने पास बुलाकर धीमी आवाज में कहा-'मैडम, आप केवल पाँच हजार दे दो, बाकी का मामला हम निबटा देंगे, आप चिंता न करो। यही है यहाँ का सिस्टम वरना ये लोग महीनों ज्वाइनिंग लटका देंगे और आपकी सीनियरटी या तनखा का नुक्सान होगा अलग से। परेशान न हों, लीजिए, पानी पीजिए।'

धीरे-धीरे इस महकमे की एक-एक बात पता चलती गई। शिक्षा विभाग की दीवारों को तो नीचे से लेकर ऊपर तक सभी जगह भ्रष्टाचार की दीमक ने बुरी तरह चाट लिया है। वह कायदे से अपने बच्चों को पढ़ाना चाहती मगर कार्यालय के हर रूटीन काम में बाबू कोई न कोई अड़ंगा जरूर लगा देता। जब कभी वह छुट्टी के लिए आवेदन करती, वह तुनककर जवाब देता-'आपने सीसीएल के लिए एप्लाई किया है, वो भी छ: महीनों के लिए एक साथ, संभव ही नहीं है। हम तो केवल दो महीने की छुट्टी मंजूर कर सकते हैं, बाकी की निरस्त। ऑडिटर तमाम ऑब्जेक्शंन लगा देते सो हम ऐसा जोखिम नहीं उठा सकते, आपको नहीं पता क्या?'

'रामबाबू जी, उसने मुँह खोलकर दबंगई से अपनी बात जोरदार तरीके से रखी-'शादी के 5 साल बाद बच्चा हुआ है, और हमें इसकी सख्ती जरूरत है। आप कहेंगे, ये आपकी समस्या है, मगर ये जो मिड डे मील स्कीम चल रही है, इसकी हकीकत आप नहीं जानते क्या? गिनती के कितने बच्चे खाना खाते हैं, मुश्किल से 5 मगर यहाँ छात्राओं की उपस्थिति संख्या तो सौ परसेंट दिखाई जाती, ये सब सही चल रहा है क्या? तो ये कानून की पट्टी हमें मत पढ़ाइए आप। मिड डे मील का फंड कितना आता है, जानते हो न? या मैं बताऊँ?' न चाहते हुए भी आवाज तल्ख हो गई।

नीतिका की बातों को सुनी-अनसुनी करता रामबाबू फोन लेकर बाहर निकल गया। पास बैठी लड़की ने उसकी तरफ भेद भरी मुस्कुराहट से देखा, मगर बोली कुछ नहीं। घंटी बजते ही वह ऊपर क्लास लेने पहुँच सोचने लगी-आखिर मेरी गलती क्या? सच बोलना, मेहनत से एक-एक बच्चे के पास जाकर पढ़ाना और जो बच्चे कमजोर हों, उन्हें अलग से पढ़ाना लेकिन आजकल इतनी मेहनत करता ही कौन है? पर, मेरा मन तो बच्चों को पढ़ाने में ही रमता है।

नौकरी करने आईं नई लड़कियों को ध्यान से देखती-गाढ़े मेकअप में रंगीन साड़ियाँ लहरातीं ये टीचर कम, मॉडल ज्यादा लगतीं। उनकी दिलचस्पी पढ़ाने से इतर बातों में ज्यादा। मौका मिलते ही प्रिंसिपल की चापलूसी करने में वे हमेशा सौ कदम आगे बढ़-चढ़कर प्रशस्ति गायन करने लगतीं-'मैम, आपने पीएच.डी. किस टॉपिक पर की है,

यू आर रियली टेलेंटेड मैम। आप पर ये ऑफ व्हाइट कलर की साड़ी खूब फब रही है। उस दिन आपने फेयरवेल में छोटे मोतियों का जो सैट पहना था, बिल्कुल क्लासिक लुक था। मैम, सर भी पढ़ाते हैं न?'

'नहीं, वे तो डॉक्टर हैं, हमेशा अपने मरीजों से घिरे, परी भी उनके नक्शे। कदम पर मेडिकल कर रही है।' अपने बिखरे बालों को पॉनीटेल में समेटते हुए वे बोलती रहीं।

'मैम, एक खबर देनी है आपको, वे जो सीनियर नीतिका मैम हैं न, हर बात में सौ अड़ंगे लगाने लगतीं। जिस किसी पर बेवजह चिल्लाने लगतीं। बात-बात पर अपना ज्ञान झाड़ने लगतीं। कल हमसे स्टाफ रूम में ही उलझ पड़ीं-तुम्हें केवल दो ही क्लास दीं गईं, जबकि तुम तो इतनी ज्यादा जूनियर हो मुझसे। ये तो गलत बात है। मैं शिकायत करूँगी तो मैंने रिक्वेस्ट किया, मैम, मेरा बच्चा छोटा है अभी, इसलिए थोड़ा जल्दी जाना पड़ता तो वे पलटकर चिल्लाने लगीं-तो मेरा बेटा भी तो छोटा है, अभी 10वीं में है जबकि मेरा बच्चा मात्र दो साल का।'

अतिशय विनम्रता दर्शाती टोन सुनकर प्रिंसिपल थोड़ा पिघलीं मगर तेज आवाज में बोलने लगीं-'देखती हूँ, सीनियर होंगी, ठीक है, मगर इसका क्या मतलब? ये फैसला लेना मेरा काम है या उनका? बहुत कुंठित और निगेटिव सोच वाली हैं ये। समय पर आतीं भी नहीं, हर रोज इनके सौ बहाने कौन सुनता रहे? मुफ्त की तनखा थोड़े ही देती है सरकार?' कहते हुए वे तेजी से अपने कक्ष की तरफ मुड़ीं और चपरासी को बुलाने के? लिए घंटी बजाई।

'नीतिका मैडम को बुलाकर लाइए।'

'जी कहते हुए वह सर्र से निकलकर बरामदा पार करते हुए, तेजी से ऊपर की सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ कक्ष संख्या 12 की तरफ मुड़ा जहाँ नीतिका बच्चों से कुछ ब्लेकबोर्ड पर लिखवा रहीं थीं।

'प्रिंसिपल मैम ने बुलाया है आपको, क्लास के बाहर से ही बोल पड़ा वह।

'ठीक है, क्लास खत्म करके आते हैं, हाँ तो बच्चो, वे अपनी ही धुन में बच्चों को लोककथा के जरिए किसी पौराणिक प्रसंग सुनाने में डूबी हुई थीं। तभी चापलूस टोली में से किसी ने मैम को फोन कर दिया-'मैम, नीतिका मैम ने आपकी बात नहीं मानी।'

'क्या, तब तक चपरासी हाजिर हो गया-'आईं नहीं वे अब तक?'

'अरे, अभी के अभी बुलाओ उन्हें, बड़ी महारानी बनी बैठी है . . अचानक उनका अहं फुँफकारने लगा, गुस्सा सातवें आसमान पर।

'क्या समझ रखा है आपने इस स्कूल को? अनुशासन नाम की कोई चीज होती है या नहीं?' नीतिका के आते ही बरस पड़ीं वे।

'क्यों मतलब?' विनम्रता की कोशिश में उनकी आवाज और ज्यादा ऊँची होती गई।

'अगर किसी जरूरी काम से बुलाया जाए तो हायर अथॉरिटी की अवज्ञा करने का हक किसने दिया आपको?' बिना जवाब सुने फिर से बोलने लगीं-

'देखिए, आपको सोच-समझकर क्लास आवंटित की हैं मैंने। गंभीरता से सोचिए, आप इतनी बुजुर्ग हैं, और आपको 9 से 3 तो विद्यालय में ही रहना है तो क्लास में ही बैठे रहने से क्या परेशानी है आपको? लिसन, सारी टीचर्स को इतनी देर बैठना पड़ता है। सुना है, आप जूनियर टीचर्स को भड़कातीं रहतीं हैं, बोलिए, आप चुप क्यों हैं?' एक साथ इतने इल्जाम सुनकर उनका सीना धौंकनी की तरह जोर-जोर से दहकने लगा। लगा कि वे चक्कर खाकर गिर जाएँगी। चाहकर भी तुरंत जवाब देते नहीं बना। सिर्फ इतना भर कहा-उन्हें भी सीनियर्स का लिहाज तो करना चाहिए न? गलत बात है ये कि मुझे जानबूझकर दूर भेजा जाता है।'

एक-एक शब्द नाप तौलकर बोलती रहीं वे-'सुनिए, मैं उनसे और भी दूसरे काम लेती हूँ, सबके साथ बराबरी करती हूँ मैं। वैसे, इससे क्या फर्क पड़ता है आपकी सेहत पर?'

'फर्क पड़ता है, इसलिए ऐसा सोच-समझकर कहा है। मुझे डायबिटीज है, बीपी हाई रहता है जबकि जूनियर्स अभी यंग हैं सो वे बाहर दूर जाकर काम कर सकतीं हैं, जबकि हमारी उम्र ढलान पर है, हम इतनी दूर की यात्रा करने लायक नहीं रहे अब।'

'तो मेडिकल लीव लेकर घर पर बैठिए, किसने रोका है?' आवाज में दंभ और अहं मिल गए।

'ठीक है, कहते हुए नीतिका बरामदा पार करते हुए धीरे-धीरे ऊपर सीढ़ियों पर चढ़ते हुए हाँफने लगीं। सामने से जूनियर टीचर्स को फल, फूल और शॉपिंग बैग्स लाते हुए देखकर सोचा, आज किसका जन्मदिन है या कौन आ रहा है, ये तीनों शॉपिंग मॉल जाने की बातें स्टाफ रूम में कर तो रहीं थीं। इनके लिए घूमने-फिरने, मौज-मस्ती के लिए खुला नीला आसमान और मुझे इस कदर जलील करने के लिए ऐसे पक्षपाती प्रिंसिपल मिलते हैं। हम जैसे मेहनती अध्यापकों के हिस्से सिर्फ और सिर्फ बच्चे की शिक्षा मायने रखती है। ओफ, इतना मानसिक उत्पीड़न, इतनी घुटन, सोचकर आँखें भर आईं और उस दिन पढ़ाने की इच्छा जाती रही।

पिछले महीने 26 जनवरी के कार्यक्रम पर यही सब लड़कियाँ सज-धजकर आईं तो नीतिका ने हँसते हुए पूछा-'आज तो आप सब बढ़िया तैयारी से भाषण देने वाली होंगीं?'

'नो मैम, भाषण देना हमें नहीं आता। हम तो बस बुके से स्वागत करेंगे मुख्य: अतिथि विधायक जी एवं हमारे प्रबंधक महोदय सर का।'

थोड़ी देर बाद किसी ने नीतिका से इशारे से पूछा-'बोलिएगा आप?' तो ऐन मौके पर प्रिंसिपल ने चिढ़ते हुए कहा-'अरे, जाने दीजिए, इन्हें छोड़ दीजिए। किसी और को उठाओ।' सुनकर कचोट सी लगी तो क्या नीतिका जैसी दो-तीन सीनियर टीचर सिर्फ मूकदर्शक बनने के लिए अभिशप्त हैं?' जैसे ही एक सीनियर टीचर ने माइक पकड़कर देशभक्तिपूर्ण गीत सुनाया तो चापलूस टीम की लड़की ने उन्हें तरेरकर देखा मगर कुछ बोलते नहीं बना। प्रबंधक कमेटी के अलावा जिला विद्यालय निरीक्षक भी उस समय मंच पर विराजमान थे जिनके स्वागत सत्कार के लिए कई युवा लड़कियाँ सुबह से जुटी हुईं थी। जिला विद्यालय निरीक्षक ने नीतिका को देखकर प्रणाम किया-'और मैडम, कैसी हैं आप?' ठीक हैं।

'पुराने स्कूल के बच्चे आपको बहुत याद करते हैं। पिछली बार आपको स्टेट लेबल का बैस्ट टीचर अवार्ड मिला था, तो इस बार आप अगले लेबल पर जाने की कोशिश करेंगीं?'

जवाब में वे मुस्कुराकर रह गईं।

स्टाफ रूम में सारी टीचर्स अपने अपने घर की रामकहानी लेकर बैठ जातीं। कुछ नई टीचर कोई न कोई नई रेसिपी तैयार करके लाती तो कुछ अपनी शॉपिंग की बातें साझा करतीं तो कुछ अपने दोस्तों की। नीतिका अक्सर बच्चों की प्रोग्रेस की चर्चा कर रही होती-'मेरे लिए बच्चों का नियम से स्कूल आना सबसे ज्यादा जरूरी है। उस दिन फातिमा के घर जाकर उनके माँ-बाप को समझाना पड़ा, उन्होंने उसे स्कूहल आने से मना कर दिया था-इसके स्कूल जाने से हमें रोटी बनाकर कौन देगा? फिर मैंने फातिमा को समझाया कि तुम सुबह उठकर पहले खाना बनाकर रख दो, उसके बाद स्कूल आओ। तब जाकर उसने नियम से स्कूल आना शुरू किया।'

'अरे, आपको उसके घर जाने की क्या जरूरत थी?' जूनियर टीचर ने आश्चर्य से पूछा।

'उसके पास किताबें नहीं थीं, उसकी गरीबी हालत में अगर मुझे अपनी तनखाह से भी किताबें खरीदवाना पड़ें तो मैं हजार दो हजार खर्च कर देती हूँ, इससे क्या फर्क पड़ता है?' वहाँ बैठी अन्य अध्यापिकाओं ने भी उसे आश्चर्य से देखा।

'आपको तो पता ही होगा मैम, कक्षा 6 से 8 तक की किताबें मुफ्त में मिलतीं हैं मगर वे भी सबको नहीं मिल पातीं। हमारे पास बहुत से बच्चों ने किताबें न मिलने की शिकायत की है।'

'मैम, मुझसे भी कुछ बच्चों ने शिकायत की थी। मैंने पता किया तो पता चला कि गरीब बच्चों को भी पचीस रुपए देने पड़ते हैं।' वे दबी जुबान से उन्होंने सच बताने की कोशिश की।

'जबकि ये किताबें छात्रों के नाम गिनकर मुफ्त में बाँटने के लिए आतीं हैं। बुकसेलर्स से 20 प्रतिशत की छूट अलग से।' अभी उनकी बात पूरी भी नहीं हो पाई कि बाहर शोर सुनाई पड़ा। शायद किसी टीचर की जन्मदिन पार्टी का केक कटने लगा, तो सब बाहर निकल आईं। नीतिका को देखते ही बाबू ने उनसे पूछा-

'नीतिका मैम, आपने अभी तक हजार रुपए नहीं दिए। सब टीचर्स ने जमा कर दिए हैं . . .।

'परंतु किसलिए?' बगल से गुजर रहे बाबू ने एक बार फिर से तरेरती नजरों से उसे घूरा-आपको यहाँ से सैलरी मिलती है न, तो कुछ विद्यालय की बेहतरी के लिए भी सोचना चाहिए न? इमारत जर्जर हो रही है, रंगाई-पुताई करवानी है, फोटोस्टेट करवाना पड़ता है तो सोचो, आखिर हम सरकार से मिलने वाले फंड का कब तक इंतजार करते रहें? आपसे कम वेतन लेने वाली टीचर्स ने कब के पैसे दे दिए, मगर आपको हर बार रिमाइंड करवाना पड़ता है . . .

'तो इसकी रसीद भी देंगे रामबाबू?'

'बिल्कुल देंगे। लीजिए, इस कागज पर दस्ताखत कर दीजिए। 'कागज पढ़ने लगी नीतिका-सुश्री ने स्वेच्छा से विद्यालय के पुनरुद्धार हेतु अपनी तरफ से रुपए 1000/ सहर्ष प्रदान किए। पैसे देते हुए उसके होंठ टेढ़े होते गए मगर अकेले विरोध करके भी क्या होगा? सब उन्हें कंजूस समझेंगे जबकि बात कंजूसी की नहीं, नियमों की अवहेलना की है। हकीकत ये है कि इन सब पैसों का दुरुपयोग किया जा रहा है, ये बात सब जानते हैं मगर बोलता कोई नहीं।

मन में आया, कह दें, ये जो हमसे हर महीने स्वेच्छा से हजार रुपए वसूलती हो, वे स्वेच्छा से नहीं, मजबूरन देने पड़ते हमें वरना बाबू धमकाने लगते-'तुम्हारे सारे काम रुकवा दिए जाएँगे। चयन वेतनमान नहीं देंगे, 60 से 62 साल का विकल्प नहीं भरने देंगे, प्रोन्नत वेतनमान में सौ अड़ंगे लगाएँगे यानी उसे परेशान करने के दर्जनों हथकंडे। नीचे से ऊपर तक पूरा चैनल ही भ्रष्ट हो तो किस तरह कोई अकेला कब तक लड़ सकता है? इस लौह सिस्टम का कुछ न बिगड़ेगा बल्कि हथौड़ी मारने वाले के हाथ ही थक जाएँगे, ये सारी बातें वह कई बार अपने पति व बेटे को बताती रही मगर वे भी मूक श्रोता बने सुनते रहे, किसी बेजान स्टैच्यू की तरह।

कभी-कभी लगता, जैसे आसपास के तमाम लोगों के कान, आँख या मुँह ही ठीक से काम नहीं कर रहे यानी सचाई को न तो कोई देखना चाहता, न सुनना चाहता और न बोलना चाहता। नई टीचर

ज्वाइन करने आई तो उससे सीधे-सीधे दो लाख रूपए माँग लिए गए। उसने देने से आनकानी तो महीनों यहाँ वहाँ दौड़ाते रहते-अभी प्रबंधक बाहर गए हैं, मैम्बर्स नहीं है, फलाना कागज तैयार करवाकर लाओ, तब अगले महीने देखेंगे। हर दिन कोई नया बहाना गढ़ लेते। बाद में किसी बिचौलिए ने एक लाख में समझौता करवाकर ज्वाइनिंग करवाई वरना पोस्टिंग के बाद तुरंत ज्वाइन न कराने से उसके वेतन, वरिष्ठता या अन्य चीजों का नुक्सान होने लगता। कौन मुँह लगे इन बाबुओं से, इन झंझटों, झमेले से बचने हेतु सभी चुपचाप पैसे देकर काम करवाकर निकल जाते। तर्क-वितर्क से बचना दिमागी सुकून के लिए जरूरी है, सच की नंगी राह पर बिना किसी सपोर्ट सिस्टम के अकेले नंगे पैर चलने में कितने जोखिम हैं, सोचकर सभी शॉर्टकट पकड़ इस लौह सिस्टम पर हथौड़ा ठोकने से बच निकलने में ही अपनी भलाई समझ लेते।

साल भर पहले रीता मैडम के साथ भी ऐसा ही हुआ था। घुट-घुटकर जीने वाली रीता मैडम की कहानी याद अनायास आने लगी जिन्हें प्रबंधतंत्र, प्रिंसिपल और विधायक तीनों ने मिलकर इस कदर अपमानित किया जिस मानसिक चोट से वे कभी नहीं उबर पाईं। ये कैसा अलिखित नियम है कि सीनियर को न समय पर प्रमोशन दिया गया, न यथेष्ट मान-सम्मान जिसकी वे हकदार थीं। हर बार वही होता, एप्रोच और पैसों का खेल-खेलकर अपनी पसंद के ऐसे रबड़स्टैम्प वाले को प्रिंसिपल बनाकर बिठा दिया जाता जिससे सबके हित सध सकें। अन्याय और पक्षपात देखकर उन्हें घुट-घुटकर चुप्पी साधे जीने के लिए मजबूर किया जाता।

एक बार रीता मैडम ने बाजिव सवाल उठाकर प्रबंधन कमेटी और प्रिंसिपल को घेरते हुए सवाल उठाया था-'इस तरह मनमाने ढंग से पैसे ऐंठने का खेल मत खेलिए आप लोग। हमारे पति एअरफोर्स से रिटायर्ड फौजी अफसर हैं। मीडिया में हमारे लिंक हैं। एक बार आप सबके खिलाफ सुबूत इकट्ठा हो गए तो ऊपर कहाँ तक शिकायत जा सकती है, इसका अंदाजा नहीं है आपको?' सुनकर करेंट सा दौड़ गया सबके तन बदन पर और प्रिंसिपल ने उनसे दुश्मनी बाँध ली।

कहा-सुनी के अगले दिन मॉर्निंग वाक से लौटते हुए उनके पति मैडम को लेने स्कूल गेट पर जा पहुँचे तो उन्हें जलील करके स्कूल से बाहर करवा दिया-'आपको पता है न कि ये गर्ल्स स्कूल है और आप हाफपेंट पहनकर यहाँ आ गए। यहाँ ऐरे-गैरे पुरुषों का प्रवेश वर्जित है। अभी और इसी वक्त सीधे अपने घर जाइए वरना हम केस कर देंगे आपके खिलाफ कि आपके आने से गर्ल्स स्कूल का अनुशासन भंग होता है. . . उनकी मुँहलगी टीचर्स ने उनका संदेश सुनाया।

'और जो शिक्षक संघ के तमाम पदाधिकारी यहाँ बेधड़क चले आते हैं, तो उनके लिए क्यों कोई प्रतिबंध नहीं है, वह भी तो नियम विरुद्ध चल रहीं गतिविधियाँ हैं' स्वत:स्फूर्त आवेग से भरी तेज आवाज नीतिका के गले से निकली।

'चलिए, आप अपनी क्लास में जाइए, बीच में हस्तक्षेप मत करें। नो मोर आरगुमेंट्स अचानक वे खटखट करते हुए प्रकट हो गईं वहीं।

उस दिन नीतिका को बहुत तेज गुस्सा आया, सो वह देर तक बड़बड़ाती रही-'कितनों के नाम गिनाऊँ जो यहाँ आए दिन आते रहते, जिनके लिए चाय पानी, नाश्ते आदि का इंतजाम हमसे वसूले पैसों से पूरा किया जाता, आखिर किसके लिए, क्यों होता है ऐसा?' अंदर भरा जहर थूककर बाहर फेंका लेकिन टीस गहराती रही।

उस दिन तेज गुस्से और आक्रोश में स्कूटी चलाते हुए पथरीले रास्तों पर चलते हुए वह बैलेंस न बना सकी और सीधे सड़क पर स्कूटी संग धड़ाम से गिर पड़ी। पूरे तीन महीने पाँव में प्लास्टर चढ़ा रहा। चौथे महीने जब स्कूल कैम्पस छड़ी लेकर आना पड़ा। ठीक से चला नहीं जा रहा था, सो प्रिंसिपल से पूरी विनम्रता से अनुरोध किया-'मैं नीचे ही क्लास ले लूँगी। बच्चों के बोर्ड एक्जाम है, उनका छूटा कोर्स पूरा कराना है, बच्चों की चिंता में परेशान हो रही थी, इसलिए चली आई।'

बिना जवाब दिए वे अपने कक्ष में चलीं गईं मगर उनकी आवाजें उसे साफ-साफ सुनाईं दीं।

'लिसन, उनसे कहो कि वे ऊपर ही चढ़कर क्लास लें। हम नीचे क्लास नहीं लगाने देंगे।' सुनकर सकते में आ गई वह। कोई इतना कठोर और निर्मम हो सकता है, किसी तरह चपरासी को आवाज लगाई-'हाजिरी रजिस्टर को यहीं ला देना। हमें चलने में दर्द हो रहा है। दस्तखत करने हैं।'

'ऐसा है, उनको यहीं आकर दस्तखत करने पड़ेंगे। न आ पाएँ तो उनसे कह दो कि फिर से मेडिकल लीव ले लें।' गर्म कोलतार की तरह कान में पड़ी ये कर्कश आवाज जिसे सुनकर तन-मन दोनों धू-धू कर जलने लगे।

ओफ, कोई इस तरह 55 साल से ऊपर की सीनियर की ऐसे लफ्जों में बेइज्जती कर सकता है? इतना बेरहम कोई क्यूँ कर होगा? मन मारकर किसी बच्चे का हाथ पकड़कर बमुश्किल ऊपर चढ़कर अभी उन्होंने पढ़ाना शुरू ही किया था कि नीचे से आवाजें सुनाईं दीं-'लल्लन, वहाँ ऊपर कुर्सी मेज मत ले जाना।'

'क्या इस तरह के कुछ लिखित में आदेश निर्गत हुए हैं?' अब नीतिका तैश में आ गई।

सकपकाकर रह गया चपरासी और गर्दन नवाए नीचे उतर गया। उस दिन उन्होंने बच्चों की ब्रेंच पर बैठकर क्लास ली और प्रबंधन को

खत लिखकर अपनी आपबीती लिखी–नीचे वाशरूम की व्यवस्था है, जबकि क्लास रूम ऊपर है, ऐसे में या तो उसके लिए ऊपर वाशरूम बनवाया जाए या उसे क्लास लेने के बाद घंटे भर पहले छोड़ दिया जाए। प्रबंधक ने उसके आवेदन पर सहानुभूतिपूर्वक गौर किया और उसे दो घंटे पहले स्कूल से घर आने के आदेश जारी हुए।

सब कुछ खत्म होने के बाद भी पूरी तरह सब कुछ खत्म कभी नहीं होता। अंदर से लगातार आती आवाजें उसे चैन से सोने नहीं दे रही थीं। सोचो, ये कितनी अमानवीयता है जिसे पेशाब के लिए भी लिखकर देना पड़ रहा है, ये कैसी क्रूरता है, इंसानी मूल्यों को किस कदर सरेआम रोंदा जाता है, देर तक अपने भीतर उठ रहे सवालों से जूझती रही।

आखिर क्या मिला नीतिका को इस राह पर अकेले चलने की जिद पर? पिछले बीस साल तो निकल गए यूँ ही इस सिस्टम से लड़ते–संघर्ष करते हुए मगर हासिल क्या रहा, शून्या। देर तक सोचते हुए गला सूखने लगा। बाहर तपते सूरज ने सड़क पर तेज चलती लू के थपेड़ों को भट्टी सा दहका दिया था। उस दिन किसी ने ऐसी बात कह दी जो सीने के आरपार उतर गई–'कुछ दम खम हो तो बनकर दिखा दो प्रधानाचार्या, इससे जूनियर टीचर्स के हौसले बढ़ेंगे। सच बताएँ मैडम, ऐसे नियम कानूनों के चोचलों में मत पड़िए, कायदा–फायदा बस बाहियात बेकार बातें हैं। सीधे तरीके से वेतन उठाइए, अपने घर जाइए और समय पर रिटायर होकर चैन की नींद सोइए। आई बात समझ में? आपके भले की खातिर समझा रहे, हाँ। कोर्ट कचहरी सबसे बुरी चीज होवै, चप्पल घिस जाएँगी आपकी और नतीजा जीरो, हाँ, अभी भी सँभल जाओ।' मामूली से प्रबंधक नाम के खडूस के मुँह से ऐसी सीख सुनकर सन्नी रह गई वह।

सुनकर अचानक कलेजे में हूक सी उठी और रीता मैडम की सलाह पर अपना हक माँगने सीधे हाईकोर्ट का दरवाजा खटखटा दिया था। वकीलों की फीस, बढ़ती तारीखें और टलते रहे फैसले, कुछ साल और निकल गए। तब से आए दिन स्कूल में उल्टे सुनने पड़ते गर्मागर्म तानों की मार–'अरे मैडम, गईं तो थी हाईकोर्ट तक, करवा लिया अनुमोदन? करवा सको तो करवा लें प्रमोशन, उन्हें किसने रोका है? क्या हुआ मैडम, उच्च? न्यायालय से न्याय नहीं मिला? बहुत गलत हो रहा वैसे आपके साथ, च, च्च, च तंज कसने में कोई पीछे नहीं रहता।

'सुनो मैडम, जब तक कोर्ट का फैसला आएगा, तब तक आप यूँ ही रोते कलपते रिटायर हो जाएँगी। हम जिसे ठीक समझेंगे, उसे ही प्रमोशन देकर प्रिंसिपल बनाएँगे और आप हमारा कुछ नहीं बिगाड़ पाएँगी, समझीं?' प्रबंधन समिति के चेयरमैन ने पान चबाते हुए टेढ़ी नजरों से आँखों में आँखें डालकर देखा और वह मौन साधे बैठी रही।

उस दिन हताश मन लिए वह रिटायर्ड टीचर रीता मैडम के पास चली आई–'दीदी, ये कैसे नियम हैं कि हम जैसे मेहनती टीचर को घुट–घुटकर जीने को मजबूर किया जाता। हम जैसों के साथ कभी न्याय नहीं होता। भरी आवाज सुनकर वे बोल पड़ीं–'सुनो नीतिका, एक न एक दिन न्याय होगा सो इतनी जल्दी हिम्मत नहीं हारते। विधायक, नेता जी, प्रबंधक कमेटी और जो भी दूसरे लोग इस साजिश में शामिल हैं, उसमें तुम्हारा ये पैसाखाऊ शिक्षक संघ भी है, सब एक ही थैली के चट्टे–बट्टे। हमारे समय भी तो यही सब गेमप्लान था, 5 लाख दे दो, हमने मना कर दिया। हमें अपने बेटे को पढ़ाने के लिए बाहर भेजना था सो हम चुप्पी साध गए।'

'एक और बात, पिछले साल मार्क्सशीट बनवाने के लिए भी कुछ बच्चों से अलग से पैसे माँग लिए गए।'

'और हाँ, और जो बच्चे टीसी बनवाने आते हैं, उनसे भी तो खुलकर पैसों की माँग की जाती। अब कहाँ तक मुँह खोलें? ये प्रिंसिपल पैसा बटोरने में लगी रहती। बहुत सी अनिमितताएँ देखी हैं पर कोई अँगुली नहीं उठाता।' आधी बात कहने के बाद वे चुप लगा गई।

'ये जो विद्यालय निरीक्षक सिंह साब हैं, ये कुछ नहीं करेंगे? इन्होंने तो हमारा तबादला यहाँ करवाया था। बेस्ट टीचर का अवार्ड इन्होंने ही तो दिया था। नीतिका ने रीता मैडम की राय जाननी चाही।

'सुनो, ऐसे कुछ ईमानदार अफसर हैं, जो मेहनती टीचर्स की सच्चे मन से कद्र करना चाहते हैं। हमने एक बार खुलकर उनसे यहाँ के मिडडे–मील की हकीकत बताई थी, तो वहाँ से प्रिंसिपल के पास पैसा आना बंद हो गया। अचानक एक दिन भड़क गईं वो हम पर, अनुशासनहीनता के आरोप भी लगाए मगर हम डिगे नहीं, जरा भी डरे नहीं बल्कि उसी साल बच्चों का रिजल्ट जिले में सबसे अच्छा रहा। चाहकर भी वे हमारा कुछ नहीं बिगाड़ पाईं।' एक–एक बात पर गंभीरता से सोचकर बोलती रहीं वे।

'हाँ, मिडडे–मील की पोल खोल दो किसी मंत्री, मुख्यमंत्री के सामने, बस बन गया काम। उनके सामने निडर होकर बोलने की हिम्मत होनी चाहिए, पर हाँ, सुबूत इकट्ठे करने पड़ेंगे।'

'लिसन, नीति व नियमों के मुताबिक रास्ते निकलते तो हैं मगर देर से। लेकिन बच्चों के दिल में जगह जरूर बनाओ, पॉपुलरिटी हासिल करो। इनके काले कारनामों का चिट्ठा मीडिया में भी उछले। इन दिनों तो वैसे भी सोशल मीडिया पावरफुल शेर की तरह दहाड़ने लगता है, गली–गली, कूचे–कूचे तक पहुँच बना ली है सोशल मीडिया ने। बस, चुप रहकर सबकी नजरों को परखती रहो, हरेक कारनामों के साक्ष्य जुटाओ, याद रखो, मौन में बड़ी शक्ति होती है।'

'सही कहा आपने। मुझे याद है, रिटायर होते ही आपको स्कूल के बाहर कोचिंग सेंटर वालों ने हाथोंहाथ ले लिया था, हर विषय के सब्जेक्ट एक्सपर्ट में आपका नाम बड़े अक्षरों में चमचमा रहा था।

शहर में कितनी जबरदस्त लोकप्रियता हासिल है आपको, तो आप तो कतई नहीं हारीं दीदी।' प्रकट रूप से इतना बोलकर सोचने लगी, क्या पता किसी रोज उसका नाम भी इसी तरह कोचिंग सेंटर पर चमचमाता मिले, मैथ्स की मास्टर माइंड नीतिका।

'ज्ञान की जलती लौ को बुझाने की सामर्थ्य किसी में नहीं होती। किसी के लिए भी रास्ते कभी पूरी तरह बंद नहीं होते। एक रास्ता बंद होते ही कई और रास्ते अपने आप खुलते जाते। स्कूल में पढ़ाना यानी जीवन जीने का सिलसिला भर थी ये नौकरी जो समयबद्ध तरीके से 62 साल तक चली फिर नियमानुसार हमें रिटायर होना पड़ा। मगर बच्चों के दिलों से बाहर फेंकने की ताकत है किसी में? आज भी हमारे पढ़ाए बच्चे कितनी बड़ी-बड़ी कंपनियों में बड़े पदों पर काम कर रहे हैं मगर जहाँ कहीं भी मिल जाएँ, सम्मान में सिर झुका देते और यही है हमारा हासिल, हमारे जीवन की सफलता का मूलमंत्र। बच्चों के मुख से अपनी कामयाबी के किस्से सुनकर जीवन सार्थक लगने लगता. . .बताते हुए भावविभोर हो उठीं रीता।

'तो, उस हाईकोर्ट वाले केस को वापस ले लें क्या?' नीतिका ने साफ-साफ पूछा।

'न, कतई नहीं। चलने दो। लगने दो डेट पर डेट। समझ लो, ये भी हमारी नौकरी का या जिंदगी का जरूरी हिस्सा है। क्या पता, एक न एक दिन चमत्कार हो जाए। अँधेरे में भी पलकों के अंदर से रोशनी तो देख सकते हैं न हम, सो उम्मीदें मत छोड़ना। मान लो, जीते तो ये जीत अकेली तुम्हारी नहीं होगी बल्कि तुम्हारे जैसी कई काबिल टीचर्स के अंदर अन्याय व पक्षपात के खिलाफ लड़ने का जज्बा जगेगा। उनकी हौसला अफजाई के लिए जंग जारी रखो। समझीं?' आत्मविश्वास से भरी आवाज सुनकर नीतिका का मनोबल बढ़ा।

'ठीक कहा। अपने हक की आवाज उठाने के लिए अंदरूनी ताकत मिलेगी सबको। आपके मुताबिक शायद चमत्कार जैसा कुछ हो ही जाए?' बोलते हुए आवाज में खनक आ गई अनायास।

वक्त ने करवट बदली। बेटे-बहू अच्छी नौकरी में आ गए और अब रिटायर होने में महज महीना भर शेष। बेटे ने उन पर नौकरी छोड़ने का दबाव बनाया, पर वे अड़ी रहीं-कुछ दिन और बचे हैं।

रोज की तरह उस दिन भी वे सही समय पर विद्यालय गेट पर पहुँची ही थीं कि दर्जनों बच्चे और टीचर्स अपने-अपने हाथों में गुलाब के फूल लिए लाइन से खड़े होकर उनका अभिवादन करने लगे-'अरे, अभी कुछ दिन बाकी हैं, आज तो जन्मदिन भी नहीं मेरा। अभी से इतना सब करने की जरूरत नहीं है'. . संकोच भरी सधी आवाज निकली।

'मैम, ग्रेट न्यूज, बहुत-बहुत बधाई, अवर न्यू। प्रिंसिपल नीतिका मैम, .. हुर्रे . . की आवाजों के साथ चारों तरफ जैसे खुशियों की बरसात होने लगी। विद्यालय के सभी साथी टीचर्स, प्रबंधक कमेटी के हैड, शिक्षक संघ के पदाधिकारी वगैरह आपसी मतभेद भूलकर बुके सौंपते हुए नीतिका को फूलों से लादते हुए प्रिंसिपल कक्ष की तरफ बहुत सम्मान से ले जा रहे थे। बड़े -बड़े सुनहरे अक्षरों में प्रिंसिपल कक्ष के बाहर नीतिका का नाम चमक रहा था जिसे देखकर उनकी मुर्दा देह में प्राण फूँक दिए जैसे किसी जादुई शक्ति ने। आँखों की सिकुड़ी पुतली चकाकौंध से भर उठी। चेहरे की आभा अद्भुत और अभूतपूर्व रंग बिखेरने लगी। सालों तक चली इतनी लंबी लड़ाई के बाद उस दिन पहली बार अपनी जीत का एहसास होते ही अनायास उनके बंद होठों पर नैसर्गिक मुस्कुराहट खिलने लगी। अवचेतन में पड़े मृत सपने ऐसे जिंदा हो उठे, जैसे तपती गर्मी की मार से सूख रहे पत्तों पर बेमौसम बारिश ने नई जान डाल दी हो।

5/259 विपुलखंड, गोमती नगर,
लखनऊ - 226010 (उ. प्र.)
मो.-9452295943

शरद एवं बसंत व्याख्यानमाला का आयोजन, पुरस्कार वितरण समारोह

पलाश

– रंजना अरगड़े

शिक्षा – एम.ए., पीएच.डी.।
रचनाएँ – छः पुस्तकें प्रकाशित, कतिपय संपादित।
सम्मान – वाणी सम्मान सहित अनेक सम्मान।
विशेष – अनुवाद में विशेष कार्य।

♦ ♦ ♦

जी भर खेलता फाग
भीतर से पलाश
बाहर से रँगता
सुबह का आकाश।

♦ ♦ ♦

चारों तरफ फैली
तुम्हारे प्रेम की मिठास
बो दिया तुमने
मेरे भीतर पलाश।

♦ ♦ ♦

जंगल भर फैले हो
फिर क्यों उदास?
किसको करते हो याद
तपते हुए पलाश?

♦ ♦ ♦

डोलते नहीं हो
कितनी भी चले बातास
चुपचाप गिरते हो
धरती पर पलाश।

♦ ♦ ♦

साल दर साल
बढ़ती है आस
एक दिन बनूँगी
मैं भी पलाश।

♦ ♦ ♦

भीतर से तपता है
तब बनता है केसरिया
खेस नहीं ओढ़ता
मौसम आने पर पलाश।

♦ ♦ ♦

जल माटी या दिशाओं में
जड़ डाली या हवाओं में
अपने रंग का उत्स
आजीवन ढूँढ़ता पलाश।

♦ ♦ ♦

जंगल में बहार-सा
संगत में चहकता-सा
वीराने में चुपचाप अकेला
शान से खड़ा पलाश।

♦ ♦ ♦

महकता आम का बौर
दमकता ज़र्द पीला अमलतासी झौर
बजता संगत में जब-तब,
खिलता पुर बहार पलाश।

♦ ♦ ♦

कमरे में आए सहसा,
तुम इस तरह अचानक
खेतों बीच उगा दमकता
दीखता, एक रंग पलाश।

♦ ♦ ♦

एक दूसरे से सटे
इस तरह खिलते हैं
सच, सुंदरता रंग में ही नहीं
आपसदारी में भी होती है, पलाश!

♦ ♦ ♦

जीवन में मिले मुझे तुम
इस तरह जैसे जंगल में
केसरिया टेसुओं बीचखिला
अकेला पीला पलाश।

♦ ♦ ♦

अलग ही दीखते हैं,
भीड़ में जो होते हैं ख़ास
जैसे केसरिया टेसुओं बीच
दिखता है पीला पलाश।

♦ ♦ ♦

भीड़ आती है
लोकतंत्र के काम
चढ़ता है तंत्र की बलि
अकेला पीला पलाश।

♦ ♦ ♦

वैसा ही दिखता है, वैसा ही उगता है
रंग भी दमकता है, वैसा ही
अलग फिर क्यों होता है
पीला पलाश?

♦ ♦ ♦

अभी तो दिन भी तुम्हारे
रातें भी तुम्हारी
हरियाओगे जब
कर जाओगे उदास पलाश!

♦ ♦ ♦

मेरे जीवन में तुम
इस तरह उपस्थित
जैसे वीरान नंगे पहाड़ों पर
खिला अकेला पलाश।

♦ ♦ ♦

खिला है केसरिया, जंगल में
खड़ा बगल में सुर्ख़ लाल सेमल
रंग का संगी ही नहीं,
पड़ोसी धर्म निभाता पलाश।

♦ ♦ ♦

रह गया एक अकेला
फूल डाली पर खिला,
बीत गया फागुन
अब रीत रहा पलाश।

♦ ♦ ♦

अब कम ही देखते हैं तुम्हें
बीती ऋतु का मान कर,
गोकि अब भी खिले हो
ओ चैत्र के पलाश!

♦ ♦ ♦

फूल संग नव पल्लव
दिखने लगी हैं टटकी फलियाँ
ललछौंहे नीम के पास
बुढ़ाए-से लगते हो, पलाश।

402, विंडसर अरालिया
कोलार रोड, भोपाल 462042 (म.प्र.)
मो. - 9426700943

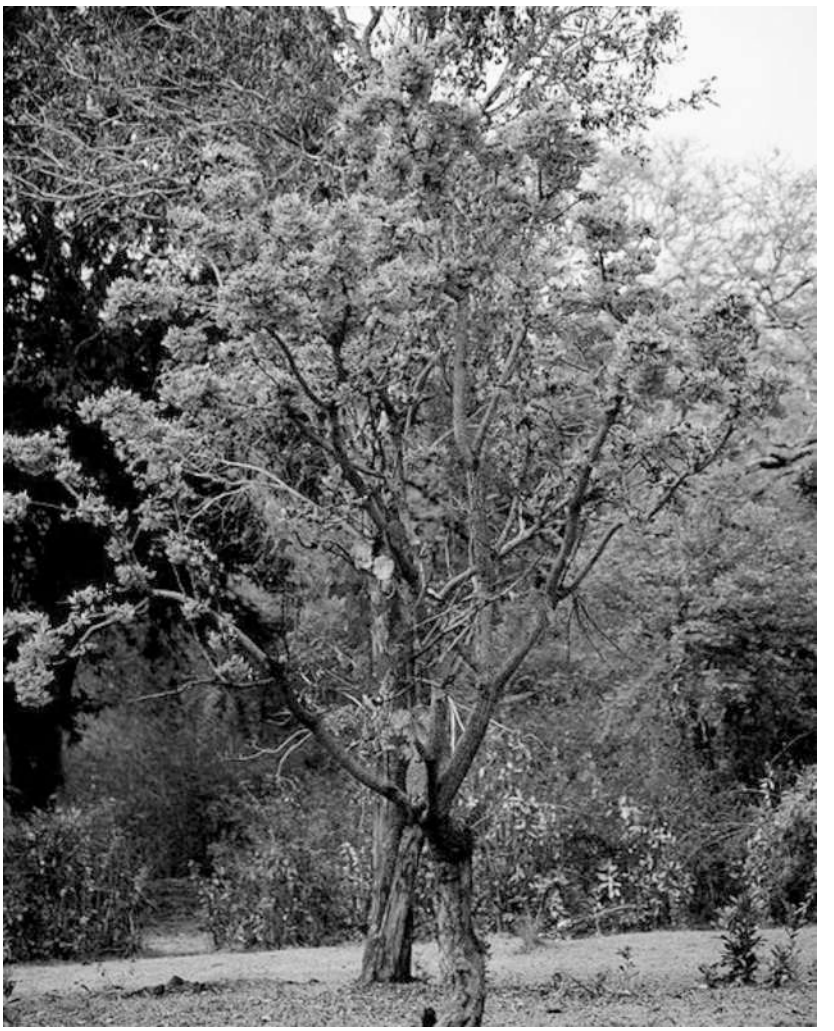

राम

- मन मीत

♣ ♣ ♣

मुझे क्यों लग रहा है
कि मैं वही केवट हूँ
और इस रेगिस्तान में
बह रही है एक नदी..
जो अयोध्या जा रही है!

♣ ♣ ♣

मैं
अपने घर का बड़ा ही बड़ा बेटा हूँ
और इस नाते
मैं एक छोटा-मोटा राम ही तो हुआ..
मुझे
रामजी की सौगंध
कि मैं सगे, चचेरे और ममेरे भाई-बहनों के लिए
कोई भी कुरबानी दूँगा!

♣ ♣ ♣

रामजी ने
शिवजी का धनुष तोड़ दिया-
रामजी को कोई जोर नहीं आया!

♣ ♣ ♣

राम जी!
आप का नाम लेने के बाद
मेरी ओक में
ठहरने लगा है पानी
पहले नदी कम पड़ जाती थी
और अब घड़ा भी महासागर है!

♣ ♣ ♣

सबसे छोटी कविता
'प्यार' शब्द है-
सबसे छोटी और सबसे बड़ी कविता
'राम' शब्द है!

♣ ♣ ♣

इन आँसुओं में
पानी जैसी चीज की
नाम-भर मिलावट भी नहीं..
यह आपने नाम के आँसू हैं राम जी!

♣ ♣ ♣

हे प्रभु!
मैं तो जल जाऊँगा
लेकिन मेरी कविताएँ न जल सकेंगी..

मेरी जीवित कविताओं की
मुक्ति कैसे सम्भव होगी प्रभु?
अमरता का शाप ढोने वाली
मेरी कविताओं का
राम नाम सत्य कैसे होगा प्रभु?

♣ ♣ ♣

अब मैं
जिस भाव को छू भर देता हूँ
वही काव्य हो जाता है
शब्द
मेरे पाँवों में
चीटियों की तरह रेंगते हैं

बिम्बों और उपमाओं की
मुझे कभी कमी नहीं होती
विषय जब तुम हो
तो शिल्प और कथ्य की परवाह ही क्यों करनी है
हे मेरे राम!
अब तुम ही मेरा काव्य हो
अब तुम ही मेरे कवि हो
अब तुम ही मेरे पाठक हो
अब तुम ही मेरे आलोचक हो

और तुम ही
वह समय भी हो
जो मेरा मूल्यांकन करेगा!

♣ ♣ ♣

मेरे पिता एक अच्छे पद पर हैं
मेरी माता भी ठीक-ठाक कमा लेती हैं
मैं भी अपना पेट जैसे-तैसे भर ही लेता हूँ
मैं एक खाते-पीते घर से आता हूँ राम जी

लेकिन मुझे मेरा घर
एक सोने की लंका जैसा लगता है
जो हजारों गरीबों का खून चूसने के बाद बना है

मेरे घर को
अपने किसी दूत से आग लगवा कर
इसकी जगह तुम्हारे जैसी पर्णकुटी छवा दो प्रभु!

मुझे अपनी ही आलोचना का साहस दो प्रभु!

♣ ♣ ♣

सब लोग मिल कर
मुझे मेरा इतिहास याद दिलाते हैं
कि तू चमड़ी का गुलाम
राम जी को कैसे भज सकता है?

हे प्रभु!
मुझ पर कृपा करो..

आप मेरे वर्तमान में बिराजो
और मेरा भविष्य बनाओ प्रभु!

♣ ♣ ♣

तुम्हारा नाम
शहद के समान मीठा है प्रभु!

मैं
एक मक्खी हूँ
जो इस शहद से चिपक चुकी है..

यह लोग
मेरे चिपके हुए पंख देख रहे हैं..

यह लोग
यह नहीं देख रहे
कि मैं तुम्हारे मीठे स्वाद में उड़ रहा हूँ!

♣ ♣ ♣

मुझे मोक्ष नहीं चाहिए प्रभु!

मुझे यही संसार चाहिए
मुझे यही सारी विपत्तियाँ चाहिए
मुझे इनसे बचाने वाला तुम्हारा नाम चाहिए
मुझे तुम्हारे सुमिरन का रेशमी बंधन चाहिए..

मैं हवा में नहीं घुलना चाहता प्रभु!

♣ ♣ ♣

रावण की तरह
इतने सारे विद्वान कवियों की
इतनी बड़ी-बड़ी कविताओं से
मेरी छोटी-सी कविता नहीं जीत सकती!

मैं
न राम हूँ
न मेरे पास लक्ष्मण हनुमान सुग्रीव हैं
और न ही सीता जैसी कोई महान प्रेरणा..

प्रभु!

मेरे अवसाद में मुझे अभय दो!
मेरे अवसाद में मुझे विनय दो!
मेरे अवसाद में मुझे विजय दो!

♣ ♣ ♣

राम जी!
यह मेरा मुझसे युद्ध है...

विष के उफनते हुए सागर में
फेंक दिया है
मैंने अपना काला हृदय
और उस पर लिख दिया है : राम!

पत्थर को तैरा दो
और सागर को डुबा दो मेरे प्रभु!

♣ ♣ ♣

क्योंकि अब
मैं अपने राम का कवि हूँ-
क्या इसीलिए
तुम्हारे काम का कवि नहीं हूँ?

♣ ♣ ♣

मैं कवि हूँ
मैं भक्त नहीं हूँ..

जाओ!
और मुझे
इस अवसाद में घुलने दो
कि रामराज्य आ भी गया
तो जीवन-मृत्यु का क्या होगा?

♣ ♣ ♣

सीताएँ
धरती में समाती रही हैं..

राम
नदियों में डूबते रहे हैं..

कोई तो बताए..
आसमान जैसे लोग
आखिर
कहाँ चूकते रहे हैं?

♣ ♣ ♣

राम जी ने ताड़का को तीर मारा
तीर ताड़का के बाएँ सीने में घुप गया
ताड़का धरती पर गश खा कर गिर गई
लक्ष्मण जी खुशी से फूले न समाए

लक्ष्मण जी ने राम जी से कहा -
मर गई दुष्ट!
राम जी ने लक्ष्मण जी से कहा -
अच्छी बात है! लेकिन इस देवी को भी कहाँ
पता था कि वह राक्षसी थी!

♣ ♣ ♣

मेरे राम
ईश्वर राम हैं
केवल सेनानायक राम नहीं..

राम के विरुद्ध बोलने से
वह बस राम का नहीं रहता
लेकिन राम का नहीं रहने से
वह रावण का भी तो नहीं हो जाता!

♣ ♣ ♣

कैकेयी
एक चालाक रानी–भर नहीं थी–

कैकेयी
दरअसल दशरथ के भीतर की
एक बहुत पुरानी बेचैनी थी
जिसे दशरथ को बुझाना नहीं आया!

♣ ♣ ♣

राम जैसे ईश्वर से
मनुष्य के अभिनय में कितनी ही चूकें हुई हैं –
मैं इसीलिए तो कहता हूँ..
मनुष्यों को
देवताओं का अभिनय करने से बचना चाहिए!

♣ ♣ ♣

यह मत समझना
कि यह मंदिर
अब कभी नहीं टूटेगा

अधर्म
फिर आएगा
और फिर–फिर आएगा

तम्बू में
एक बार नहीं
बल्कि कई बार रहना पड़ेगा
श्री राम जी को

एक ढाँचा
मनुष्य की हड्डियों और लहू से बना ढाँचा
कभी भी खड़ा हो जाएगा

कितनी ही शताब्दियाँ
फिर ज़ाया हो जाएँगी
खूँख़्वार मनुष्य की रीढ़ सीधी करने में!

♣ ♣ ♣

अजी! क्या आपको मुझ पर शक है?
'कैसी बात करती हो सीते? बिलकुल नहीं!'

तो फिर डरते क्यों हैं?
'डरता हूँ कि लोग फिर भी बहुत कुछ कहेंगे!'
लोगों को भूल जाइए!
'कैसे भूल जाऊँ! मेरी प्रजा है!'

♣ ♣ ♣

पका हुआ फल
खिला हुआ फूल
माँ का पहला दूध
बच्चे का टूटा दाँत
पुरुष की पहली कमाई
नई–नई बहू ने नेगचार आदि–आदि..

मेरे बिम्ब
कितने साफ–सुथरे हो जाते हैं–
जब मैं राम का नाम लेता हूँ!

♣ ♣ ♣

जो स्त्री
किसी के टोकने पर
आग में जल सकती है
और धरती में समा सकती है
वह किसी रावण के बाँधने से क्या बँधती?

लेकिन यह
एक स्त्री का निर्दोष हठ था
कि उसका पुरुष आएगा
पूरी बरात और ढोल–धमाकों के साथ आएगा

और जब तक
वह नहीं आएगा
वह अपनी रस्सियाँ नहीं खोलेगी!

♣ ♣ ♣

मैं दावे से तो नहीं कह सकता
फिर भी ऐसा लगता है
कि वनवास का सुख भोगने के बाद
रामजी का मन अयोध्या में लगा नहीं होगा!

♣ ♣ ♣

कैकेयी तो बहाना था
वह तो वैसे भी वनवास जाता–

जो इतना विनम्र था
जो इतना सहनशील था
और जिसने माता–पिता के झगड़े देखे थे!

♣ ♣ ♣

किसी राम के नहीं छुए जाने तक हर स्त्री
और किसी सीता के नहीं छुए जाने तक हर पुरुष–
एक अहल्या ही तो है!

♣ ♣ ♣

राम ने
स्वयं को सगुण राम से
निर्गुण राम बनते देखा है..

और यह राम के साथ न्याय है या अन्याय..
कोई नहीं जानता!

♣ ♣ ♣

राम
फूट कर रोते हैं
लेकिन खुल कर हँस नहीं पाते –
कहानीकार क्या कहना चाहता है?

कठिन है

- प्रेम चंद गुप्त

जन्म – 07/07/1959।
जन्मस्थान – बलिया, उत्तरप्रदेश।
शिक्षा – स्नातकोत्तर उपाधि, पत्रकारिता में प्रमाणपत्र।
रचनाएँ – पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।
सम्मान – राष्ट्रीय संत तुकडोजी साहित्य सम्मान।

राम पर लिखना कठिन है।
हाँ! कठिन सचमुच कठिन है।
किन्तु, इन कठिनाइयों की कोख वह उर्वर धरा है।
मनुजता का वृक्ष, जिस पर, सदा ही फूला फरा है।
मूल्य मर्यादा की गंगा सदा जिसको सींचती है।
और जिसकी सभ्यता बरबस हृदय को खींचती है।
आज भी आदर्श जिसका, विश्व की अनुपम धरोहर।
दीप्त, उन्नत, प्रखर, भास्वर, सरस, सरल, सकाम, सुन्दर।
किन्तु, यह भी सत्य जो जितना सरल उतना कठिन है।
राम पर लिखना कठिन है।

राम रूप सकाम ने निष्काम का उत्कर्ष पाया।
वैभवों के मध्य रहकर भी जिसे संघर्ष भाया।
वचन की शुचिता, वचन पालन सदा से ही परम धन।
और जिसके आगमन से हो गया पावन तपोवन।
राजधर्म बना दिया जो राजनीति विशुद्ध कर के।
रख दिया उन्नत शिखर पर वनचरों को बुद्ध करके।
आचरण का वह महासागर, जिसे तरना कठिन है।
राम पर लिखना कठिन है।

कोल, भील, निषाद जिसके सखा सहज, सुशील, सुन्दर।
त्याग, ताप, उत्सर्ग, सेवा के विशद, सर्वोच्च मंदर।
रिपुदमन, लछिमन, भरत से अतुलनीय, अमोल भ्राता।
पतित पावन सुयश, जो शबरी, अहिल्या, गीध त्राता।
आञ्जनेय विशाल, बुद्धि, विवेक युत अति नम्र सहचर।
प्रभु स्वयं, पर विगत प्रभुता जन्य दर्प, विमोह मत्सर।
उच्चतम आदर्श के उस मेरु का लँघना कठिन है।
राम पर लिखना कठिन है।

राम का वह तेज, जिससे दशानन का दर्प हारा।
चाहती थी बहा देना, यवन-काल-कुचक्र धारा।
शोध की प्रतिरोध की शोणित सनी गाथा भयावह।
पाँच सदियों को समेटे, वह कठिनतम काल दुर्वह।
भूमि हीन, वसन रहित, वह पूज्य विग्रह, नील अम्बर।
जो स्वयम करुणानिधान, वितान के नीचे, कअण स्वर।
उस व्यथा की त्रासदाई कल्पना करना कठिन है।
राम पर लिखना कठिन है।

समय बदला, बुद्धि बदली, राहु का वह काल बीता।
लो पुनः भरने लगा, वह घट, सदा जो रहा रीता।
कोपलें आने लगीं, तृण उगे, संभ्रम जगे शावक।
राम सेवा को चले अति प्रेम युत उत्फुल्ल नायक।
शंख भी गुंजित हुए, फिर वंदना के मंत्र गूँजे।
और श्रद्धा ने हुलस फिर गौरि और गनेश पूजे।
वही अवध अतुल्य अनुपम, वही सरयू का पुलिन है।
था कठिन, ना अब कठिन है।
राम पर लिखना कठिन है।
हाँ! कठिन सचमुच कठिन है।

35, सेठ फूल चंद नगर
वार्ड नंबर 1, मंडीदीप -462046 (म.प्र.)
मो.-98935 91624

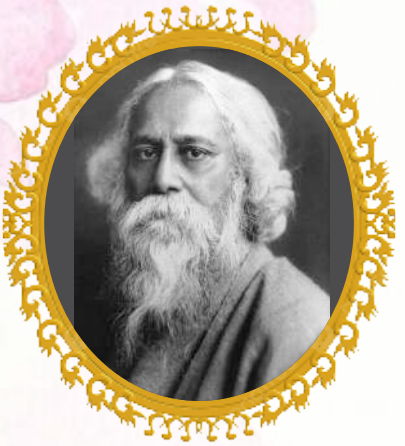

रवीन्द्रनाथ टैगोर

जन्म : 07 मई 1861

प्रयाण : 07 अगस्त 1941

मदन-दहन के बाद

पंचशर को भस्म करके, यह क्या किया है संन्यासी,
सारे संसार में व्याप्त कर दिया उसे।
उसकी वंदना व्याकुलतर होकर हवा में उच्छ्वसित हो रही है,
उसके आँसू आकाश में बह रहे हैं।
सारा संसार रति के विलाप-संगीत से भर उठा है,
और समस्त दिशाएँ अपने-आप क्रंदन कर रही हैं।
फागुन मास में न जाने किसके इशारे पर
धरती सिहरकर मूर्छित हो जाती है क्षण-भर में।
आज इसीलिए समझ में नहीं आता कौन-सी यंत्रणा
रोमांचित और ध्वनित हो रही है हृदय-वीणा में,
तरुणी समझ नहीं पाती
पृथ्वी और आकाश की सभी वस्तुएँ
उसे एक स्वर में कौन-सा संदेश दे रही हैं।
बकुल-तरु-पल्लवों में
कौन-सी बात मर्मरित हो उठती
भ्रमर क्या गुंजार रहा है।
सूर्यमुखी उद्ग्रीव होकर
किस प्रियतम का स्मरण कर रही है,
निर्झरिणी कौन-सी प्यास लिए
बहती चली जा रही है।
चाँदनी के आलोक में यह चुनरिया किसकी है,
नीरव नील गगन में ये किसके नयन हैं!
किरणों के घूँघट में यह किसका मुख देखता हूँ,
कोयल दूर्वा दल पर किसके चरण हैं!
फूलों की सुगंध में किसका स्पर्श
प्राण और मन को उल्लास से भरकर
हृदय को लता की तरह कस देता है—
कामदेव को भस्म करके तुमने यह क्या किया है संन्यासी,
उसे सारे संसार में व्याप्त कर दिया।

प्रेम का स्पर्श

हे भुवन,
मैंने जब तक
तुम्हें प्यार नहीं किया था
तब तक तुम्हारा प्रकाश
खोज-खोजकर (भी) अपना सारा धन नहीं पा सका था!
उस समय तक
समूचा आकाश
हाथ में अपना दीप लिए हर सूनेपन में बाट जोह रहा था।
मेरा प्रेम गान गाता हुआ आया,
(फिर न जाने) क्या कानाफूसी हुई,
उसने डाल दी तुम्हारे गले में
अपने गले की माला!
मुग्ध नयनों से हँसकर
उसने तुम्हें
चुपचाप कुछ दे दिया,
(ऐसा-कुछ) जो तुम्हारे गोपन हृदय-पट पर
चिरकाल तक बना रहेगा, तारा-हार में पिरोया हुआ!

अक्षर के विशेषांक

प्रेषक, प्रकाशक, मुद्रक कैलाशचन्द्र पंत, भोपाल द्वारा, स्वत्वाधिकारी मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, हिन्दी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल से प्रकाशित एवं श्रेया ऑफसेट, 4 लाजपत भवन, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल से मुद्रित।